CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैशाली की विभूतियाँ

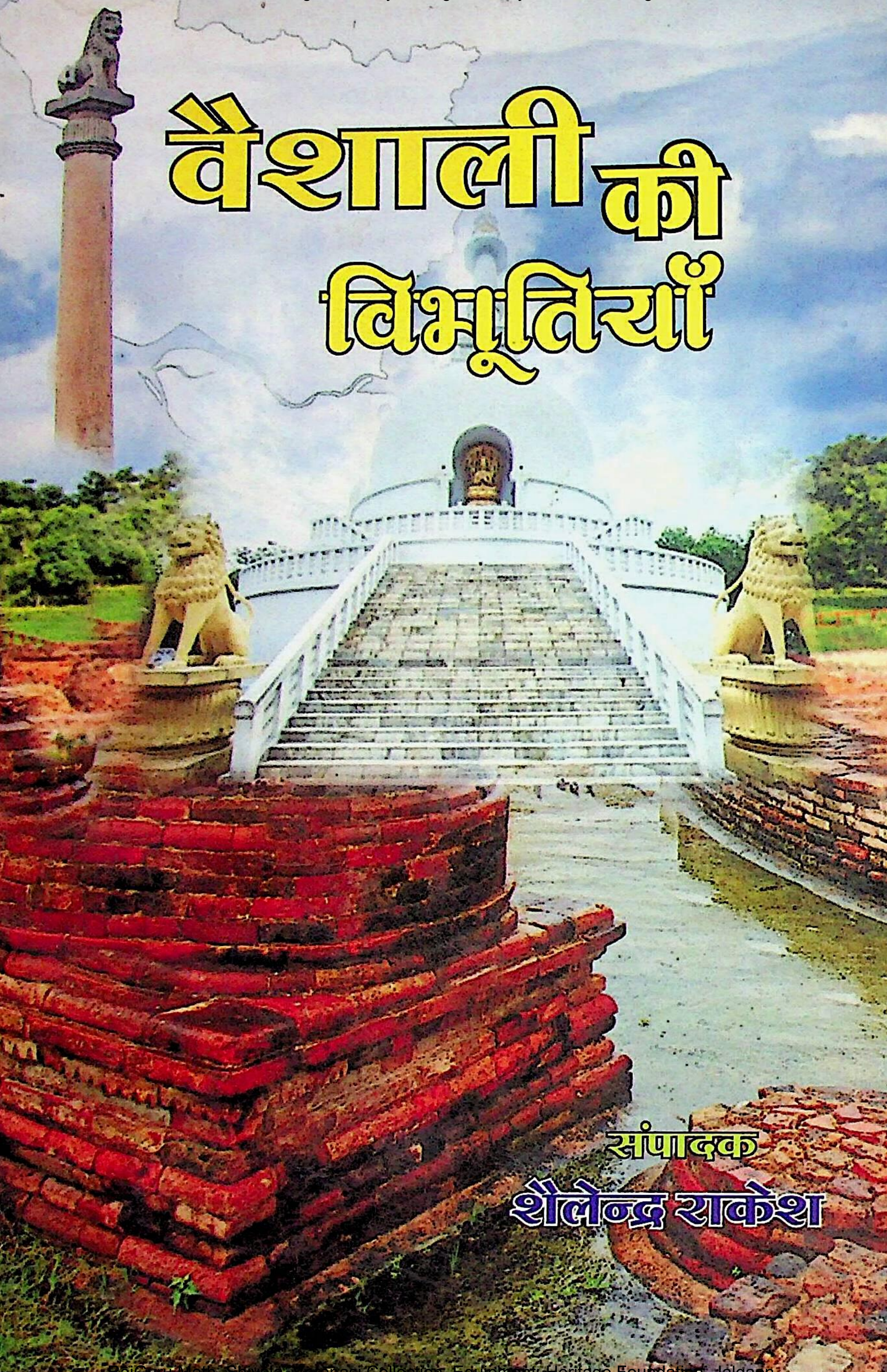

संपादक

शैलेन्द्र राकेश

Rajghat Math, Shivala Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैशाली अपनी पौराणिकता एवं ऐतिहासिकता के लिए विश्व-प्रसिद्ध है। आज जिले के रूप में भले ही इसका क्षेत्र अत्यंत संकीर्ण हो गया है किन्तु, एक वक्त था जब इसकी सीमा के अंतर्गत आज का दरभंगा, मधुबनी, समस्तीपुर, शिवहर, सीतामढ़ी, मुजफ्फरपुर, पश्चिमी एवं पूर्वी चम्पारण, सिवान, सारण तथा गोपालगंज के क्षेत्र शामिल थे। इतिहास के विभिन्न कालखंड में विदेह अथवा मिथिला के क्षेत्र भी कभी इसके पड़ोसी तो कभी इसके अंग रहे थे। कोशल तथा मगध इसके पड़ोसी राज्य हुआ करते थे तो उत्तर में इसकी सीमा नेपाल से मिलती थी। ईसा पूर्व सातवीं सदी में उत्तरी और मध्य भारत के महाजनपदों में वैशाली का स्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण था। नेपाल की तराई से लेकर गंगा के बीच फैली हुई भूमि पर वज्जियों तथा लिच्छवियों के अष्टकुल द्वारा गणतांत्रिक शासन व्यवस्था की शुरूआत की गई थी। इसलिए विश्व को सर्वप्रथम गणतंत्र का ज्ञान देनेवाला स्थान वैशाली ही है।

वैशाली की उन विभूतियों की, जिन्होंने वर्तमान वैशाली के सामाजिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक परिवेश को रचने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह एक पुस्तक सबों को समाहित कर सके, संभव नहीं। इस पुस्तक में जितनी हस्तियों की चर्चा है, उससे अधिक छूट गई हैं, जिन्हें अगले प्रयासों में पूरा किया जा सकेगा।

इसी पुस्तक से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्रद्धेय स्वामी जी के श्रीचरणों में —

उँगोश्री प्रसाद सिंह
आशियाना
हाजीपुर (वैशाली)
15-1-2023

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैशाली की विभूतियाँ

संपादक

शैलेन्द्र राकेश

अभिधा प्रकाशन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ISBN

प्रथम संस्करण
2022

सर्वाधिकार ©
लेखकाधीन

प्रकाशक
अभिधा प्रकाशन
रामदयालु नगर, मुजफ्फरपुर-842002
दिल्ली कार्यालय
जी-72, गंगा विहार, गोकलपुरी,
दिल्ली-110094
मो०- 8092037270

अक्षर-संयोजन
विनोद खन्ना

आवरण
विभांशु राज

मुद्रक
बी.के. ऑफसेट
दिल्ली-110032

मूल्य
250.00 (दो सौ पचास रुपये)

VAISHALI KI VIBHUTIYA
Edited By Shailendra Rakesh Rs. 250.00

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनुक्रम

पूर्व-कथ्य 5

1. महामानव बाबू लंगट सिंह : गंगोत्री प्रसाद सिंह 15
2. मोहम्मद शफी दाउदी : मनीष रंजन 19
3. पं. जयनंदन झा : जगदीश प्रसाद 'श्रमिक' 22
4. बाबू दीपनारायण सिंह : सुरेन्द्र मानपुरी 27
5. वैशाली के महान सपूत शुक्ल-बन्धु : भोलानाथ ठाकुर 30
6. स्वतंत्रता सेनानी बाबू अक्षयवट राय : अनिल लोदीपुरी 33
7. पुस्तकालय आंदोलन के पुरोधा जगन्नाथ प्रसाद साह : देवेन्द्र गुप्त 38
8. वामपंथ के सच्चे सिपाही किशोरी प्रसन्न सिंह : जयप्रकाश 44
9. निःस्वार्थ समाजसेवी सूर्यदेव प्रसाद : ऋचा कुमारी 51
10. इतिहास के आईने में सुनीति देवी : जयप्रकाश 54
11. हरिमोहन झा : एक अकथ कहानी : मोहन मंगलम् 58
12. संगीत के वैशाली घराने के संस्थापक सरयू भारती : अश्विनी कुमार आलोक 69
13. डॉ. दामोदर प्रसाद जो अपने सपनों को जीते थे : डॉ. व्रजकुमार पांडेय 73
14. डा. योगेन्द्र मिश्र : डा. जयश्री मिश्र 80
15. शास्त्रीय रागों के पुरस्कर्ता मथुरा प्रसाद रसिक : अश्विनी कुमार आलोक 87
16. प्रखर नेत्री का. सुधा बिंदु मित्रा : सुधांशु कुमार चक्रवर्ती ?.... 90
17. बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी बालेश्वर प्रसाद सिंह : डॉ. व्रजकुमार पांडेय 92
18. प्रो. हरेन्द्र सिंह विप्लव : रामनरेश शर्मा 97
19. बूबना परिवार : मनीष रंजन 99
20. हिंदी के सुख्यात आलोचक नंदकिशोर नवल : पूर्वा भारद्वाज 102

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्व-कथ्य

वैशाली अपनी पौराणिकता एवं ऐतिहासिकता के लिए विश्व-प्रसिद्ध है। आज जिले के रूप में भले ही इसका क्षेत्र अत्यंत संकीर्ण हो गया है किन्तु, एक वक्त था जब इसकी सीमा के अंतर्गत आज का दरभंगा, मधुबनी, समस्तीपुर, शिवहर, सीतामढ़ी, मुजफ्फरपुर, पश्चिमी एवं पूर्वी चम्पारण, सिवान, सारण तथा गोपालगंज के क्षेत्र शामिल थे। इतिहास के विभिन्न कालखंड में विदेह अथवा मिथिला के क्षेत्र भी कभी इसके पड़ोसी तो कभी इसके अंग रहे थे। कोशल तथा मगध इसके पड़ोसी राज्य हुआ करते थे तो उत्तर में इसकी सीमा नेपाल से मिलती थी। ईसा पूर्व सातवीं सदी में उत्तरी और मध्य भारत के महाजनपदों में वैशाली का स्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण था। नेपाल की तराई से लेकर गंगा के बीच फैली हुई भूमि पर वज्जियों तथा लिच्छवियों के अष्टकुल द्वारा गणतांत्रिक शासन व्यवस्था की शुरूआत की गई थी। इसलिए विश्व को सर्वप्रथम गणतंत्र का ज्ञान देनेवाला स्थान वैशाली ही है।

विष्णु पुराण में इस क्षेत्र पर राज्य करनेवाले 34 राजाओं का उल्लेख है, जिसमे प्रथम नमनदेष्टि तथा अंतिम सुमति थे। सुमति को अयोध्या के राजा दशरथ का समकालीन माना गया है। कहा जाता है कि मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम ने अपने अनुज लक्ष्मण एवं गुरु विश्वामित्र के साथ सीता-स्वयंवर में जाते हुए वैशाली नगरी में विश्राम किया था। प्रमाणस्वरुप आज भी हाजीपुर में नदी किनारे उनके चरण चिह्न पर रामचौरा मंदिर अवस्थित है। श्रीमद् भागवत पुराण में गजेन्द्रमोक्ष की कथा है, जिसके अनुसार गजेन्द्र के पैर को जब मगरमच्छ ने जकड़ लिया और पानी में खींच लिया तो अनेक काल तक दोनों में खींचतान चलती रही। आखिर स्वयं को अशक्त पा जब गजेन्द्र ने भगवान विष्णु को रक्षार्थ पुकारा तो भक्त की पुकार पर भगवान नंगे पाँव दौड़े और अपने सुदर्शन से मगरमच्छ का शिरोच्छेद कर भक्त की रक्षा की। भगवान विष्णु की वह प्राकट्य भूमि हाजीपुर (वैशाली) का कौनहारा घाट है, जहाँ सदियों से प्रत्येक वर्ष कार्तिक पूर्णिमा को लाखों श्रद्धालु सदानीरा गंडक नदी के पावन जल में डुबकी लगाते हैं। इसी के दूसरे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किनारे पर इसी दिन से सोनपुर का विश्व प्रसिद्ध पशु मेला लगता है, जो महीनों चलता है।

राजा सुमति के शासनकाल के बाद से वज्जी गणतंत्र की स्थापना के बीच के लगभग छह शताब्दियों का वैशाली के इतिहास का अंधकार युग है। आगे जो सन्दर्भ उपलब्ध हैं, उनका आधार बौद्ध साहित्य है। उससे पता चलता है कि बुद्ध (567-487 ई.पू.) के समय वज्जि गणतंत्र एक सुव्यवस्थित संस्था थी। स्वयं बुद्ध ने उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की थी और उसकी सात विशेषताओं का वर्णन किया था। वैसे समझा जा सकता है कि यह व्यवस्था निश्चित ही और भी पुरानी रही होगी, क्योंकि ऐसी किसी सुंदर एवं सुदृढ़ व्यवस्था का निर्माण अल्प अवधि में तो संभव नहीं हुआ होगा। बुद्ध को वैशाली नगरी अत्यंत प्रिय थी, जबकि वे मगध के राजा अजातशत्रु के किशोरावस्था के मित्र थे और अपना अधिकांश समय मगध में ही बिताते थे। कहते हैं कि बुद्धत्व प्राप्ति के बाद जब बुद्ध पहली बार मगध की राजधानी राजगृह में पधारे थे तो अजातशत्रु ने राजमार्ग पर स्वागत करते हुए अपना राजमुकुट उनके चरणों में डाल दिया था।

वैशाली के वेणुग्राम में ही बुद्ध ने अपने जीवन का अंतिम वर्षावास भी किया था। वहीं माघ-पूर्णिमा को उन्होंने घोषणा की थी कि तीन मास बाद वे परिनिर्वाण को प्राप्त होंगे। उस बार वैशाली में उन्होंने सात-आठ महीने बिताये थे। वैशाली छोड़ते हुए उन्होंने अपने पीछे आते हुए शोकग्रस्त लिच्छवियों को अपना भिक्षापात्र देकर आग्रहपूर्वक लौटाया। वैशाख-पूर्णिमा (487 ई.पू.) को कुशीनगर में उनका महापरिनिर्वाण हुआ। उनके अस्थि अवशेषों को आठ भागों में विभक्त किया गया, जिसका एक भाग वैशाली को भी प्राप्त हुआ। लिच्छवियों ने भगवान की अस्थियों के ऊपर एक स्तूप का निर्माण किया और उनकी पूजा करने लगे। मार्च 1958 में वैशाली स्थित खरौना पोखर के उत्तर-पूर्व हरपुर वसंत नामक गाँव में जमीन का एक टीला खोदा गया था जिसमें से उनका उक्त अवशेष कलश प्राप्त हुआ, जो आज भी संग्रहालय में सुरक्षित रखा है।

काश्यप गोत्रीय वर्धमान महावीर का जन्म वैशाली के समीप कुन्डग्राम के नायक सिद्धार्थ एवं देवी त्रिशला (वैशाली के 'राजा' चेतक की बहन) के पुत्र के रूप में हुआ था। करीब तीस वर्ष की आयु में (532 ई.पू.) गृह त्याग कर उन्होंने तपस्या शुरू की थी। बारह वर्षों की कठोर तपस्या के बाद उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ। वे बहुत बार वैशाली आये और यहाँ उपदेश किया। उनके बारह वर्षावास यहाँ के वाणिज्य ग्राम (वर्तमान में बनिया) में हुए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चौथी सदी ई.पू. के अंत में चन्द्रगुप्त मौर्य (325-301 ई.पू.) के प्रधानमंत्री कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में लिच्छवियों एवं वृज्जिकों के संघों (गणतंत्री शासकीय इकाइयों) का उल्लेख किया है। इस के अनुसार मौर्य काल में ही संघ दो भागों में बँट गया था। लिच्छवि संघ एवं वृज्जी संघ। लिच्छवि संघ तो वैशाली में रहा किन्तु वृज्जी संघ कहाँ गया, यह वैशाली के किसी भाग में रहा अथवा मिथिला या नेपाल में चला गया, इसकी निश्चित जानकारी नहीं है। पतंजलि (160 ई.पू.) ने मिथिला को गणतंत्री राज्य माना है। हो सकता है मगध के नंदवंश के संस्थापक महापद्म नन्द ने मिथिला पर विजय प्राप्त कर उसे सीधे अपने साम्राज्य का प्रान्त न बनाकर अपने अधीन रखा हो। सातवीं सदी में नेपाल की ओर वृज्जी नामक राज्य का उल्लेख चीनी यात्री हुएनसांग ने किया है। अतः अर्थशास्त्र में उल्लिखित वृज्जी संघ का उस ओर चला जाना भी संभव है, क्योंकि इसके बाद भारतीय साहित्य में कहीं भी वृज्जी का उल्लेख नहीं मिलता है।

ऐसा प्रतीत होता है कि चन्द्रगुप्त मौर्य के बाद लिच्छवी-संघ की शासन सम्बन्धी स्वतंत्रता खत्म हो गई क्योंकि, उसके पोते अशोक के अभिलेखों में लिच्छवियों का उल्लेख नहीं है। उस समय वैशाली को एक सैनिक छावनी के रूप में परिवर्तित कर दिया गया था, जैसा कि एक छोटे से अभिलेख में प्राप्त होता है। अशोक (269-232 ई.पू.) ने बसाढ़ के करीब कोल्हुआ ग्राम में एक स्तंभ खड़ा कराया, जिस पर उत्तर की ओर मुँह करके एक सिंह बैठा है। इस पर कोई अभिलेख नहीं है। 1958-59 की खुदाई में वैशाली में अग्निमित्र की मुहर पाए जाने से सहज ही विश्वास किया जा सकता है कि कम से कम दो शुंग-वंशीय राजाओं, पुष्यमित्र एवं अग्निमित्र ने वैशाली पर मगध का अधिकार कायम रखा।

जब मगध के शुंग वंश के राजा कमजोर पड गए तो वैशाली के लिच्छवी स्वतंत्र हो गए। उन्होंने पुनः अपनी राजनीतिक शक्ति इकट्ठी की और मगध पर अधिकार कर लिया। तब लिच्छवियों ने अपना ध्यान व्यापार, कला और धर्म की ओर लगाया। वैशाली में विशाल के गढ़ की खुदाई से पता चलता है कि 150 ई. पू. से 100 ई.पू. के बीच का युग प्राचुर्य एवं कलात्मक क्रियाशीलता का युग था। उस समय बौद्ध धर्म एवं जैन धर्म, दोनों का अत्यधिक विकास हुआ, जिससे चिढ़ कर ब्राह्मणों ने लिच्छवियों को व्रात्य क्षत्रिय कह डाला था (मनुस्मृति : 10/22)।

पहली सदी ईस्वी के अंतिम चरण में वैशाली पर कनिष्क नामक कुषाण सम्राट का राज हो गया। बुद्ध के भिक्षा पात्र को वह अपने साथ अपनी राजधानी पेशावर ले गया। आगे चलकर फिर उसके कमजोर उत्तराधिकारियों से लिच्छवियों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ने खुद को पुनः मुक्त कर लिया। धीरे-धीरे वैशाली की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ने लगी। व्रात्य कहलाने के बावजूद उनके साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करना सम्मानप्रद समझा जाने लगा। चौथी सदी ईस्वी के प्रारंभ में चन्द्रगुप्त प्रथम नामक गुप्त राजकुमार का कुमारदेवी नामक लिच्छवी दुहिता से विवाह हुआ। ऐसा माना जाता है कि चन्द्रगुप्त प्रथम को वैशाली दहेज में दे दी गई, क्योंकि इसके बाद यहाँ लिच्छवियों का नाम कहीं सुनाई नहीं पड़ता (नेपाल में वे 879 ई. तक राज करते रहे)। इस विवाह के समर्थन में दो प्रमाण हैं। (1) चन्द्रगुप्त प्रथम के सिक्के जिनकी एक ओर 'चन्द्रगुप्त' और 'श्रीकुमारदेवी' अंकित है और दूसरी तरफ 'लिच्छवयः' शब्द लिखा है। (2) गुप्तकालीन अभिलेखों में चन्द्रगुप्त प्रथम के पुत्र समुद्रगुप्त के लिए 'लिच्छविदौहित्र' विरुद का प्रयोग बतलाता है कि समुद्रगुप्त एवं अन्य गुप्त राजा लिच्छवियों के साथ अपने संबंध से गर्व का अनुभव करते थे। 'लिच्छवयः' लिच्छवी शब्द का बहुवचन है। इससे यह भी समझा जा सकता है कि गुप्त साम्राज्य में शामिल होने के पूर्व लिच्छवियों का शासन गणतंत्रात्मक था।

गुप्तकाल के अंत में एक महत्त्वपूर्ण घटना घटी। संभवतः अपना गौरव क्षीण होता देख लिच्छवियों का एक बड़ा दल वैशाली छोड़ नेपाल जा पहुँचा और वहीं राज्य की स्थापना कर शासन करने लगा। वहाँ उनकी शासन-पद्धति गणतंत्रात्मक न होकर राजतंत्रात्मक रही। छठी सदी ईस्वी का अंत होते-होते वैशाली का पतन हो गया। खुदाई की रिपोर्ट से पता चलता है कि करीब 600 ई. में बसाढ़ का गढ़ वहाँ के निवासियों ने छोड़ दिया। वैशाली वीरान हो गई।

सातवीं सदी के प्रारंभ में वैशाली जनपद थानेश्वर-कन्नौज के राजा हर्षवर्धन (606-647 ई.) के अधीन हो गया। जब प्रसिद्ध चीनी बौद्ध यात्री हुएनसांग (629-645) वैशाली पहुँचा तो उसने वैशाली को ध्वस्त पाया। स्पष्ट है कि वैशाली अब प्रांतीय राजधानी नहीं थी तथा पाटलिपुत्र और श्रावस्ती के भी ध्वस्त हो जाने के कारण यह व्यापार मार्ग बंद हो चुका था। हर्षवर्धन की मृत्यु के बाद वैशाली एवं नेपाल पर तिब्बत का राज हो गया, जिससे वे क्रमशः 703 एवं 704 में मुक्त हुए। इसके बाद कुछ काल के लिए जीवगुप्त, जो रामगुप्त का पुत्र था, का राज्य हुआ और फिर यहाँ पाल वंश का राज प्रारंभ हुआ जिसके प्रसिद्ध राजा धर्मपाल, देवपाल, महीपाल, विग्रहपाल आदि हुए। ये सभी बौद्धधर्मावलम्बी थे और उनके स्कंधावार वैशाली से दूर हुआ करते थे।

तिरहुत के कर्नाट वंशी राजा ब्राह्मण धर्मावलम्बी थे और उनकी राजधानी सिमरावगढ़ थी जो वैशाली के अपेक्षाकृत समीप थी। नान्यदेव (1097-1145) ने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पाल राजा रामपाल से तिरहुत छीनकर स्वतंत्र राज्य कायम किया। इसने गंगा के उत्तर वाले बड़े क्षेत्र में जो घाघरा नदी (सिवान-सारण जिलों) से कोशी नदी तक विस्तृत था, अपना दबदबा फैलाया। इसने नेपाल के समस्त तराई वाले भाग पर भी अधिकार जमाया। इस तराई भाग में प्राचीन विदेह की राजधानी मिथिला (वर्तमान जनकपुर) भी शामिल थी।

इसी वंश के राजा नरसिंह देव अथवा नृसिंहदेव (1188-1227) को पहली बार मुस्लिम आक्रमणकारियों का सामना करना पड़ा। यह वह समय था, जब दक्षिण बिहार (1199-1201) और बंगाल (1201-03) पर अधिकार कर मुस्लिम शासक उत्तर बिहार की ओर ललचाई नजरों से देख रहे थे। राजगृह एवं उड्यंतपुरी यानी बिहारशरीफ से जैनमतावलम्बी भागकर समीप के पावापुरी नामक ग्राम में श्री महावीर की प्रतिमा स्थापित कर उनकी पूजा की व्यवस्था कर रहे थे।(1203)। चारों ओर उथलपुथल और अस्थिरता का माहौल था। बंगाल के सुल्तान अलाउद्दीन अलीमर्दान ख़ल्जी (1210-13) और अवध के मुस्लिम सूबेदार दोनों ने तिरहुत के हिन्दू राज्य पर आक्रमण कर उसे तबाह किया।

तिब्बती बौद्ध यात्री धर्मस्वामी ने 1234 से 1236 के बीच की अपनी भारत यात्रा के विवरण में लिखा है कि तुरुक सैनिकों के कारण वैशाली में हलचल मची हुई है तथा लोगों में अरक्षा की भावना भरी हुई है। धर्मस्वामी के इस कथन का समर्थन पूर्वी भारत में पाए गए बिहारशरीफ के 1242 के अरबी अभिलेख तथा मुस्लिम इतिहास से होता है। तुगरिल तुगान खान (मृत्यु 1247) ने 1230 में दिल्ली की सुल्तान रजिया से बिहार और बंगाल की सूबेदारी ले ली थी और इस पद पर वह 1245 तक रहा। उसने तिरहुत पर आक्रमण कर बहुत लूटपाट मचाया और अवध के कुछ भागों पर अपना प्रभाव फैलाया। इस प्रकार लगातार आक्रमणों से यह क्षेत्र कमजोर होता चला गया। तिरहुत का अंतिम राजा हरिसिंह देव हुआ। उस पर दिल्ली के तुर्की सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक (1320-1325) ने बंगाल से दिल्ली लौटते समय हमला किया और 1324 के अंत में उसे हराकर इस हिंदु राज्य को समाप्त कर दिया और यह क्षेत्र दिल्ली सल्तनत के अधीन हो गया।

वैशाली नगरी के मुख्य भाग के उजाड़ हो जाने के बाद (600 ई. या इसके कुछ पूर्व) इसके भाग्य में जो उतार चढ़ाव आये, इसके कारण वैशाली के लोग यहाँ-वहाँ दूर-दूर तक विस्थापित होते चले गए। लिच्छवी तो पहले ही नेपाल जा चुके थे, जैन मतावलम्बी भी पश्चिम और दक्षिण भारत चले गए। वैशाली के उपनिवेशक अराकान (बर्मा) भी पहुँचे, जहाँ उन्होंने वेथाली (वैशाली) नामक नगर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बसाया। यहाँ वैशाली-वंश के राजाओं ने 878 से 1018 ई. तक राज किया। वर्मा के बौद्ध राजा अनिरुद्ध (राजत्वकाल 1044-1077) ने वैशाली की राजकुमारी से विवाह किया, इस तरह उस काल में वैशाली का वर्मा से बहुत घनिष्ट सम्बन्ध रहा।

उत्तर बिहार में न्याय और मीमांसा दर्शन ने बहुत प्रगति की। न्याय के क्षेत्र में उद्द्योत्कर (635 ई।), अन्हरा-ठाढ़ी (मधुबनी जिला) के वाचस्पति मिश्र (841 ई.) और करियन (समस्तीपुर) के उदयन अथवा उदयनाचार्य (984 ई.) के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। मीमांसा के क्षेत्र में कुमारिल भट्ट, मंडन मिश्र, प्रभाकर और मुरारी मिश्र के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। तेरहवीं सदी के प्रारंभ में मंगरौनी (मधुबनी जिला) के गंगेश उपाध्याय ने नव्य न्याय की स्थापना की। इन सभी दार्शनिकों ने बौद्ध धर्म एवं जैन धर्म की आलोचना की और ब्राह्मण धर्म को पुनः प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न किया।

इस युग में ब्राह्मण धर्म के प्रति वैशाली क्षेत्र की एक विशिष्ट देन है - शालिग्राम पत्थर का विष्णु रूप में पूजन। अन्य भारतीय धर्मों के समान ब्राह्मण धर्म में भी मूर्ति पूजा बहुत पहले से आ रही थी। विष्णु और लक्ष्मी की मूर्तियों की पूजा भी अन्य देव मूर्तियों की तरह होती आ रही थी। किन्तु यदि भक्त को कहीं यात्रा आदि पर बाहर जाना होता था तो पूजा में बाधा हो जाती थी। गंडक नदी में छोटे-छोटे चिकने पत्थर मिलते हैं। गण्डक नदी शालवृक्षों से भरे जंगलों से गुजर कर नीचे मैदान में आती है। यह स्थान नेपाल में है। उस स्थान को शालग्राम कहते हैं। यहाँ नदी में चिकने पत्थरों की भरमार है। सो इन पत्थरों को शालग्राम-शिला कहते हैं। इसे ही विष्णु भगवान् की आदर्श प्रस्तर मूर्ति मान ली गई और शालग्राम पूजा चल पड़ी, जो विष्णु पूजा का एक रूप है। इसलिए गंडक को शालग्रामी भी कहते हैं और नारायणी भी। कई पुराणों में शालग्राम पूजन की विस्तृत विधि दी हुई है। इसलिय यह सहज स्वीकार्य है कि यह पूजा इस युग में गंडक घाटी से प्रारंभ होकर दूर तक फैली।

इसी समय गज-ग्राह युद्ध कथा और गजेन्द्रमोक्ष क्षेत्र (गंगा-गंडक संगम क्षेत्र) की महिमा भी बढ़ी, जिसका वैष्णव धर्म के प्रचार से सम्बन्ध है। हाजीपुर का कोनहारा घाट गजेन्द्रमोक्ष क्षेत्र का वर्तमान प्रतिनिधि है। जनकपुर और सीतामढ़ी से लेकर गण्डक नदी एवं वाल्मीकि आश्रम तक अनेक ऐसे स्थान हैं जो विदेह के राजा जनक की पुत्री और कोशल के राजा राम की पत्नी सीता के जीवन की विविध घटनाओं से जुड़े हैं। निश्चय ही इस युग में इन स्थानों का महत्त्व बढ़ा। नए तीर्थ बने और रामनवमी एवं विवाह पंचमी जैसे उत्सव और मेले लगने लगे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इन सब बातों का वैष्णव धर्म एवं शालिग्राम पूजन के प्रसार पर यथेष्ट प्रभाव पड़ा।

सन 1324 में वैशाली पर दिल्ली के तुगलक वंश के अधिकार के साथ इस क्षेत्र ने एक बिलकुल नए युग में प्रवेश किया। लम्बे समय तक यह दिल्ली और बंगाल के शासकों के बीच झूलता रहा। 1529 में बंगाल के सुलतान ने, जो उस समय उत्तर बिहार का भी स्वामी था, प्रथम मुगल बादशाह बाबर की अधीनता मान ली। परन्तु सिर्फ नौ बरस बाद फिर इस क्षेत्र पर पठानों (अफगानों) का कब्जा हो गया। अगस्त 1574 में तीसरे मुगल बादशाह अकबर के समय मुगलों ने इस पर अंतिम रूप से अधिकार प्राप्त कर लिया।

चौदहवीं और पंद्रहवीं सदियों में वैशाली क्षेत्र में तीन बड़ी घटनाएँ घटीं– 1. वैशाली क्षेत्र पर मुस्लिम अधिकार। 2. बंगाल के सुलतान शमसुद्दीन हाजी इलियास द्वारा दो शहरों - शम्सुद्दीनपुर (समस्तीपुर) और हाजीपुर की स्थापना। 3. शेख मुहम्मद काजीन शुत्तारी द्वारा इस्लाम का प्रचार। मुस्लिम शासन की स्थापना के साथ ही मसजिदों और किलों का निर्माण होने लगा तथा स्थानों के नाम बदले जाने लगे। इस्लाम के प्रचारक इस इलाके में धड़ल्ले से पहुँचने लगे और इस धर्म के प्रचार में विशेष सुविधा हो गई। वक्त के साथ हाजीपुर एक नगर के रूप में विकसित होता गया और वैशाली नगरी पुरातत्व की चीज रह गई।

बिहार में गंगा के उत्तरी भाग को तिरहुत क्षेत्र कहा जाता है। इसे तुर्क-अफगान काल में स्वतंत्र प्रशासनिक इकाई बनाया गया था। यहाँ के स्थानीय सुल्तान शमसुद्दीन इलियास ने तिरहुत सल्तनत की स्थापना की थी। ब्रिटिश भारत में 1908 में पटना से अलग कर तिरहुत प्रमंडल बनाया गया था, जबकि सन 1875 में ही मुजफ्फरपुर और दरभंगा नामक दो जिले बन चुके थे। तिरहुत प्रमंडल का मुख्यालय भी मुजफ्फरपुर ही रहा, जिसके अंतर्गत मुजफ्फरपुर और दरभंगा के अतिरिक्त सारण और चम्पारण को भी शामिल किया गया।

मुगल काल में ही हाजीपुर नगर के विकसित होने के बाद से वैशाली की कोई प्रमुखता नहीं रही। बल्कि, वैशाली और हाजीपुर के मध्य स्थित लालगंज नामक स्थान का विकास एक व्यापारिक केंद्र के रूप में हुआ। अंग्रेजों के जमाने में वहाँ निलहा कोठी बनी। कलकत्ता शहर को विकसित करनेवाले जॉब चार्नक लालगंज से ही कलकत्ता गए थे। उल्लेखनीय है कि लालगंज की नगरपालिका का गठन हाजीपुर नगरपालिका से पहले हो चुका था। मुजफ्फरपुर जिला के अंतर्गत हाजीपुर अनुमंडल का गठन हुआ था। लालगंज, वैशाली आदि सभी इलाके इसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के अंदर आते थे।

1943-44 में स्व. जगदीशचंद्र माथुर हाजीपुर अनुमंडल के अनुमंडलाधिकारी हुये। विलक्षण प्रतिभा के धनी माथुर साहब एक साथ प्रशासक, साहित्यकार, नाटकविद और लोक-संस्कृति के उपासक थे। उन्होंने भारतीय संस्कृति के शास्त्रीय स्वरूप के समानान्तर लोकधर्मी संस्कृति के पुनः संस्कार को भी समान महत्त्व दिया। विस्मृत और उपेक्षित पड़ी वैशाली के इतिहास को दुनिया के सामने लाने का पुण्य कार्य उन्होंने किया। वैशाली में स्थित बसाढ़ ग्राम ही इतिहास में वर्णित वैशाली है, यह सिद्ध करने के लिए उन्होंने पुरातत्ववेत्ताओं की मदद से खुदाई करवाई और लिच्छवियों के प्राचीन गढ़ का अन्वेषन किया। न केवल वैशाली के अतीत बल्कि वर्तमान एवं भविष्य को भी गढ़ने में उन्होंने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। यहाँ के सांस्कृतिक विकास के लिए वैशाली संघ की स्थापना तथा छोटे किसानों के कृषि-कार्य के आधुनिकीकरण एवं विकास के लिए 'वास्फा' (वैशाली एरिया स्मालफार्मर्स एसोसियसन) का गठन कराया। प्रत्येक वर्ष महावीर जयंती के अवसर पर वैशाली गढ़ पर 'वैशाली-मेला' का आयोजन शुरू किया जो आज भी जारी है, जहाँ विशाल मंच पर स्थानीय एवं अतिथि संस्कृतिकर्मियों द्वारा मनमोहक प्रस्तुतियाँ होती हैं।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में वैशाली की धरती का अमूल्य योगदान था। यूं तो यहाँ के सैकड़ों स्वतन्त्रता सेनानियों के नामों की सूची एवं उनकी वीरता के किस्से कई पुस्तकों में उपलब्ध हैं, फिर भी कुछ प्रमुख हस्तियों का नामोल्लेख यहाँ करना चाहूँगा। जलालपुर (लालगंज) निवासी बैकुंठ शुक्ल एवं योगेन्द्र शुक्ल के नाम आज भी जिलावासी बड़े गर्व से लेते हैं। लाहौर षड्यंत्र कांड में जिस फणीन्द्र नाथ घोष की गवाही से भगत सिंह, राजगुरु एवं सुखदेव को फाँसी हुई थी, बैकुंठ शुक्ल ने 9 अक्तूबर 1932 को उसकी हत्या कर दी। 14 मई 1934 को मात्र 28 साल की उम्र में वे फँसी चढ़ गए। रिश्ते में उनके चाचा योगेंद्र शुक्ल हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिक एसोसियसन तथा बिहार काँग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के संस्थापक सदस्य थे। हजारीबाग जेल से दीवार फांदकर जयप्रकाश नारायण को कंधे पर लाद कर भागने वाले वीर सेनानी योगेंद्र शुक्ल का नाम देश के अग्रणी क्रांतिकारियों में शामिल है। देश में स्वतंत्रता सेनानियों को प्राप्त होनेवाले ताम्र-पत्र के प्रथम प्राप्तकर्ता पंडित जयनन्दन झा, प्रखर सेनानी अक्षयवट राय, इन सब के राजनीतिक गुरु एवं शीर्ष कम्युनिस्ट नेता किशोरी प्रसन्न सिंह, उनकी जुझारू धर्मपत्नी सुनीति देवी, दाउदनगर निवासी प्रसिद्ध वकील शफी दाऊदी, विंध्यवासिनी सिंह,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बसावन सिंह, बच्चन शर्मा, दीपनारायण सिंह, बेनी भगत, चलित्तर शर्मा, अमीर गुरुजी, बाबूलाल शास्त्री, सीताराम सिंह आदि वैशाली के सपूतों की सूची काफी लंबी है।

वैसी ही लंबी सूची है वैशाली की उन विभूतियों की, जिन्होंने वर्तमान वैशाली के सामाजिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक परिवेश को रचने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह एक पुस्तक सबों को समाहित कर सके, संभव नहीं। इस पुस्तक में जितनी हस्तियों की चर्चा है, उससे अधिक छूट गई हैं, जिन्हें अगले प्रयासों में पूरा किया जा सकेगा। मैं इस पुस्तक में शामिल तमाम रचनाकारों के प्रति सम्मान एवं आभार निवेदित करता हूँ, जिन्होंने रुचि लेकर इस श्रमसाध्य कार्य को पूरा किया है। गुरुवर श्री व्रजकुमार पाण्डेय को मार्गदर्शन एवं मित्र श्री अश्विनी कुमार आलोक को उनके सहयोग के लिए विशेष आभार। पुस्तक में उद्धृत ऐतिहासिक संदर्भों का अधिकांश डा. योगेंद्र मिश्र के वैशाली से संबंधित ग्रंथों से लिया गया है। सामग्री उपलब्ध कराने के लिए डा. जयश्री मिश्र एवं श्री रामनरेश शर्माजी को हृदयतल से आभार। श्री अशोक गुप्त, अभिधा प्रकाशन को भी उनके अमूल्य सहयोग के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

दीपावली 2022 — शैलेंद्र राकेश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महामानव बाबू लंगट सिंह

गंगोत्री प्रसाद सिंह

हाजीपुर मुजफ्फरपुर रेल खण्ड के सराय स्टेशन से 5 कि.मी. पश्चिम वैशाली जिले के धरहरा ग्राम के अति सामान्य किसान बाबू अवध बिहारी सिंह के पुत्र के रूप में लंगट सिंह का जन्म सन् 1851 के आश्विन माह में हुआ था। जटिल परिस्थितियों के विरुद्ध कठिन संघर्ष कर जीने वाले ही अपनी बेमिशाल उपलब्धियों के बल पर संसार में यशस्वी होते हैं। बाबू लंगट सिंह का जीवन इसका ज्वलंत प्रमाण है। उनके पास कोई ज्यादा भूमि नहीं थी। आजीविका उपार्जन के लिये कम उम्र में ही वे समस्तीपुर आ गए, जहाँ समस्तीपुर-दरभंगा रेल लाइन का काम चल रहा था। वहाँ इनको रेल पटरी के बगल में लग रहे टेलीफोन लाइन में लाइन मैन का काम मिल गया। रेलवे लाइन पर ही काम के दौरान एक बार इनकी ट्रौली मालगाड़ी से टकरा गई, जिससे इनका एक पैर चकनाचूर हो गया। पैर कटने की वजह से लंगड़े हो गए।

समस्तीपुर - दरभंगा रेल-खंड पर कार्यरत अंग्रेज अभियंता ग्रीयर साहब लंगट सिंह की मिहनत, लगन एवं सूझ-बूझ से अत्यंत ही प्रभावित थे। लंगट सिंह अपनी निष्ठा और व्यवहार कुशलता के बल पर साहब और मेमसाहब दोनों के विश्वासपात्र बन चुके थे। पाँव कट जाने के कारण चूँकि वे शारीरिक श्रम के योग्य नहीं रह गए थे, सो ग्रीयर साहब ने सहयोग कर उन्हें रेल में ठीकेदारी का काम दिला दिया। दरभंगा से जब ग्रीयर साहब कलकत्ता महानगरनिगम के अभियंता बनकर कलकत्ता चले गए तब ग्रीयर दम्पति के अनुरोध पर लंगट सिंह भी अपने पुत्र आनन्द बाबू के साथ 1880 के लगभग कलकत्ता आ गए और कलकत्ता महानगरनिगम में ठीकेदारी करने लगे। कहते हैं न कि ईश्वर जो भी करता है, अच्छा ही करता है। जीवन में हुई उस दुर्घटना ने उनका भाग्य ही पलट दिया। अपनी कठोर मेहनत, कुशाग्र बुद्धि, और स्थिर विश्वसनीयता के बल पर बीतते समय के साथ वे लंगट से बाबू लंगट सिंह, एक अत्यंत सम्मानित ठेकेदार और फिर एक उदार जमींदार के रूप में स्थापित हो गए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कलकत्ते में मैक डोनाल्ड बोर्डिंग हॉउस के निर्माण के दौरान लंगट सिंह का पंडित मदन मोहन मालवीय से सम्पर्क हुआ। मालवीयजी के अलावे वहाँ स्वामी दयानन्द सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, ईश्वरचंद विद्यासागर, आशुतोष बनर्जी आदि महापुरुषों के सम्पर्क में आने के बाद उनका झुकाव भारतीय स्वतन्त्रता आंदोलन की ओर हो गया। वे स्वदेशी के समर्थक हो गए। कलकत्ता में स्थापित प्रथम स्वदेशी बिक्री केंद्र स्वदेशी स्टोर्स, बंग कॉटन मिल्स के भी वे एक निदेशक बनाये गए। उन्होंने मुजफ्फरपुर में भी पहला स्वदेशी तिरहुत स्टोर्स खुलवाया। वे बंगाल, बिहार से लेकर उत्तर प्रदेश तथा पंजाब तक स्वदेशी आन्दोलन के प्रचार में जाते थे। एक निरक्षर मजदूर रहे बाबू लंगट सिंह प्रभावशाली वक्ता थे। वर्धमान में बंग राजनीतिक परिषद में उनके दिए गए भाषण से सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी इतने प्रभावित हुए थे कि उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पत्रिका 'बंगाली' में उस भाषण को अक्षरसः छापा था। 1886 में हुए कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन में उन्होंने भाग लिया था।

1890 के आसपास लंगट सिंह को मुजफ्फरपुर जिला परिषद के अंदर भी बड़े-बड़े ठीके मिलने शुरू हो गए। ठीके का सारा काम उनके पुत्र देखने लगे। ठीकेदारी से बाबू लंगट सिंह और उनके पुत्र ने काफी धन कमाया और मुजफ्फरपुर का जो आज सुतापट्टी है, वहाँ से कल्याणी तक उन्होंने करीब 50 बीघा जमीन खरीदी तथा बहुत से मौजे की जमींदारी भी खरीदी।

1895 भूमिहार ब्राह्मण महासभा, बनारस

मालवीय जी के अनुरोध पर लंगट सिंह भूमिहार ब्राह्मण महासभा में पहली बार बनारस में सम्मिलित हुए थे। काशी नरेश की अध्यक्षता में हुई इस महासभा में तमकुही नरेश, दरभंगा महाराज, हथुआ महाराज, टेकारी महाराज, माझा स्टेट सहित अनेक भूमिहार जमींदार सम्मिलित हुए थे। महासभा में मालवीय जी के प्रयास से बनारस में हिन्दू विश्वविद्यालय खोलने का प्रस्ताव पास हुआ। सभी ने अपनी-अपनी ओर से आर्थिक सहयोग देने की बात कही, लेकिन जब चन्दा के रूप में लंगट सिंह ने एक लाख टका की अपनी बोरी सामने रख दी तो सभी चकित हो गए। बैसाखी के सहारे चलनेवाला एक साधारण व्यक्ति इतना बड़ा चन्दा कैसे दे सकता है? तब मालवीयजी ने लंगट सिंह का सभा में परिचय करवाया। उक्त महासभा में लंगट सिंह को काफी सम्मान मिला। उसी सभा में लंगट सिंह को मुजफ्फरपुर में भी एक कॉलेज खोलने का विचार आया। इस के लिए उन्होंने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मुजफ्फरपुर में भूमिहार ब्राह्मणों की एक सभा बुलाने का काशी नरेश से आग्रह किया, जिसे सभा ने स्वीकार किया।

1899 भूमिहार ब्राह्मण महासभा, मुजफ्फरपुर

बाबू लंगट सिंह के प्रयास से जनवरी 1899 में भूमिहार ब्राह्मण सभा का मुजफ्फरपुर में अधिवेशन हुआ, जिसमें काशी नरेश महाराज प्रभुनारायण सिंह, दरभंगा महाराज, तमकुही नरेश, हथुआ महाराज, टेकारी नरेश, माझा स्टेट के अलावे मुजफ्फरपुर के आस-पास के सभी जमींदार और विद्वतजन सम्मलित हुए। लंगट सिंह द्वारा मुजफ्फरपुर में डिग्री कॉलेज खोलने के प्रस्ताव को महासभा द्वारा पास किया गया और कॉलेज निर्माण के लिये सभी ने चन्दा देना स्वीकार किया। किन्तु, महासभा की समाप्ति के बाद हथुआ महाराज तथा दरभंगा महाराज ने मुजफ्फरपुर में कॉलेज खोले जाने को लेकर बाबू लंगट सिंह को सहयोग नहीं दिया, क्योंकि दरभंगा महाराज दरभंगा में कॉलेज खोलना चाहते थे एवं हथुआ महाराज छपरा में। लंगट सिंह को थोड़ी परेशानी होने लगी तो उन्होंने मुजफ्फरपुर के सभी जमींदारों की बैठक बुलाई जिसमें सबों ने मुजफ्फरपुर में हाई स्कूल के साथ कॉलेज खोलने का प्रस्ताव दिया, क्योंकि तब मुजफ्फरपुर में जो जिला स्कूल था, उसमें गरीब बच्चों का दाखिला नहीं हो पाता था। इस बैठक में हाई स्कूल और कॉलेज खोलने तथा उसके खर्च और संचालन की जिम्मेवारी उठानेवाले एक 22 सदस्यीय प्रबन्ध समिति का गठन किया गया। इसमें बाबू लंगट सिंह के अलावे शिवहर नरेश शिवराज नन्दन सिंह, हरदी के जमींदार बाबू कृष्ण नारायण सिंह, जैतपुर स्टेट के रघुनाथ दास, यदुनन्दन शाही, महंथ परमेश्वर नारायण, महंथ द्वारिकानाथ, योगेंद्र नारायण सिंह आदि थे। इसी बैठक में बाबू लंगट सिंह ने स्कूल और कॉलेज के लिये अपनी सरैयागंज वाली 13 एकड़ जमीन दान देने की घोषणा कर दी। 3 जुलाई 1899 को उक्त भूखण्ड में भूमिहार ब्राह्मण कॉलेजिएट स्कूल और भूमिहार ब्राह्मण कॉलेज की नींव रखी गई। 2 माह के अंदर ही छात्रों के पढ़ने के लिये कमरे तैयार हो गये तथा शिक्षकों की व्यवस्था कर पढ़ाई चालू हो गई।

बाबू लंगट सिंह के प्रयास से सन1900 में ही कॉलेज को कलकत्ता विश्वविद्यालय से प्री डिग्री कॉलेज के रूप में मान्यता मिल गई तथा बाद में लंगट सिंह के मित्र और सहयोगी ग्रीयर साहब के सहयोग से कॉलेज को डिग्री तक मान्यता मिल गई। बाबू लंगट सिंह की उन्नति में ग्रीयर साहब का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा था, कॉलेज स्थापना में भी उन्होंने लंगट सिंह की काफी मदद की थी। बाबू लंगट सिंह ने उनके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रति अपनी श्रद्धा प्रदर्शित करते हुए कॉलेज के नाम के आगे ग्रीयर जोर दिया और कॉलेज का नाम ग्रीयर भूमिहार ब्राह्मण कॉलेज हो गया। सन् 1906 के कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन में उनकी मुलाकात बाबू राजेन्द्र प्रसाद से हुई, जहाँ उन्होंने राजेन्द्र बाबू को कॉलेज में पढ़ाने के लिये राजी कर लिया। सन् 1908 मे राजेंद्र बाबू प्रोफेसर के रूप में कॉलेज में आ गए।

सन् 1909 में कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि जब कॉलेज निरीक्षण के लिये मुजफ्फरपुर आये तो एक ही कैम्पस में स्कूल और कॉलेज तथा छोटे-छोटे कमरों में छात्रों की पढ़ाई की व्यवस्था से असंतुष्ट होकर प्रबन्ध समिति को कॉलेज के लिये अलग जमीन और भवन की व्यवस्था करने का निर्देश दे दिया। कॉलेज की मान्यता खत्म होने का खतरा उपस्थित हो गया। तब बाबू लंगट सिंह ने खबरा के जमींदार के सहयोग से दामुचक और कलमबाग चौक के बीच 22 एकड़ जमीन खरीद कर इसमें 1911 से कॉलेज के लिये मकान बनवाना शुरू किया। इसी दौरान दुर्भाग्यवश 15 अप्रैल 1912 को महामानव लंगट सिंह का निधन हो गया। उनकी मृत्यु के बाद एक बार तो लगा कि कॉलेज का काम ठप्प हो जायेगा, लेकिन उनके सुपुत्र आनंद बाबू ने अपने पिता द्वारा शुरू किये गए इस कॉलेज के भवन का कार्य पूरा करवाया और कॉलेज अपने नये भवन में 1915 में आ गया। कॉलेज का नाम भी ग्रीयर भूमिहार ब्राह्मण कॉलेज से बदलकर लंगट सिंह कॉलेज हो गया। पटना विश्वविद्यालय के गठन के बाद लंगट सिंह कॉलेज 1917 में पटना विश्वविद्यालय से सम्बद्ध हो गया।

उल्लेखनीय है कि प्रयाग कुंभ में भारत धर्म महामंडल द्वारा बाबू लंगट सिंह को बिहार रत्न की उपाधि प्रदान की गई थी। सरकार ने भारत धर्म महामंडल और उसकी प्रतिद्वंद्वी संस्था सनातन धर्म महासभा के बीच मैत्री संबंध विकसित करने के प्रयासों के फलस्वरूप महारानी विक्टोरिया के शासन काल की रजत जयंती के अवसर पर उन्हें प्रतिष्ठा का प्रमाण पत्र दिया था। आज उनके महाप्रयाण के 100 से अधिक वर्षों के बाद भी उनकी कीर्ति पताका वर्तमान पीढ़ी को ज्ञान, संवेदना और ऊँचे मानवीय मूल्यों का संदेश दे रही है।

□

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मोहम्मद शफी दाउदी

मनीष रंजन

मोहम्मद शफी दाउदी का जन्म 22 अक्टूबर 1875 को वैशाली जिला के अंतर्गत वैशाली थाना के दाउदनगर ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम शेख मो. हसन था, जो एक जमींदार होते थे। जब बालक शफी की उम्र महज 12 वर्ष थी, हसन साहब का इंतकाल हो गया। लेकिन मो. शफी ने हिम्मत नहीं हारी। छपरा जिला स्कूल से मैट्रिक करने के बाद उन्होंने बी.ए. तथा लॉ की डिग्री प्राप्त की और मुजफ्फरपुर के एक अत्यंत ही सफल वकील हुए। लेकिन तब तक देश में स्वतंत्रता आंदोलन का ज्वार फूट चुका था। शफी दाउदी भी खुद को उससे अलग नहीं रख सके और अपनी अच्छी-खासी लगभग 100 रुपये रोज की प्रैक्टिस छोड़ कर आन्दोलन में कूद पड़े। जून 1920 में इनके आवास शफी मंजिल में हुई सभा में वे मुजफ्फरपुर जिला कांग्रेस कमिटी के प्रथम अध्यक्ष चुने गए। उसी साल सितम्बर महीने में कलकत्ता में कांग्रेस के विशेष अधिवेशन में वे अपने साथियों, बाबू रामदयालु सिंह, कमलपुरा (पारू) के राधामोहन सिंह, बिन्देश्वरी प्रसाद वर्मा आदि के साथ शामिल हुए। कलकत्ता से लौटने के बाद वर्तमान वैशाली जिलान्तर्गत भगवानपुर स्टेशन के करीब एक स्कूल के प्रांगण में महती सभा का आयोजन हुआ जिसमें शफी साहब का जोरदार भाषण हुआ। धीरे-धीरे कांग्रेस के प्रति लोगों में आकर्षण बढ़ने लगा और इसकी सभाओं में लोग बड़ी संख्या में जुटने लगे।

उत्तर बिहार में मुजफ्फरपुर सदैव ही राजनीतिक गतिविधियों का केंद्र रहा है। 1908 में खुदीराम बोस को जज किंग्स्फोर्ड की हत्या के प्रयास के लिए फाँसी दी गई थी। उसी वर्ष एनी बेसेन्ट ने मुजफ्फरपुर में थियोसोफिकल सोसाइटी की स्थापना की थी। 15 अप्रैल 1917 को गांधीजी चम्पारण जाने के सिलसिले में मुजफ्फरपुर आये थे और शफी मंजिल में ही रात बितायी थी। दाउदी साहब की आन्दोलनकारी भूमिका ने इलाके में महत्त्वपूर्ण प्रेरणा का काम किया। विशेषकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मुस्लिम समुदाय के बीच से अनेक आन्दोलनकारी साथी आकर जुड़ने लगे थे।

15 अक्टूबर 1920 में प्रांतीय कांग्रेस ने एक चार सदस्यीय कमिटी का गठन किया जिसमें मजहरुल हक के साथ शफी दाउदी भी शामिल किये गए थे। 7 दिसम्बर 1920 को गांधीजी मोतीहारी जाने के सिलसिले में पुनः हाजीपुर होते हुए मुजफ्फरपुर आये। हाजीपुर में उन्होंने ऐतिहासिक गाँधी आश्रम की स्थापना की, जो बाद में चलकर स्वतंत्रता आन्दोलन का प्रमुख केंद्र बन गया। इस यात्रा में भी मुजफ्फरपुर में गाँधीजी का प्रवास शफी मंजिल में ही हुआ। गांधीजी के असहयोग आन्दोलन की पुकार के बाद शफी साहब ने अपनी वकालत की प्रैक्टिस छोड़ दी और कांग्रेस के पूर्णकालिक स्वयंसेवक बन गए। उस समय मुजफ्फरपुर का तिलक मैदान कांग्रेस कमिटी का जिला मुख्यालय तथा राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रमुख केंद्र बना हुआ था। शफी साहब वहीं से कांग्रेस की गतिविधियों को संचालित करते थे। तिलक महाराज की मृत्यु के उपरांत यह तय हुआ था कि राष्ट्रीय आन्दोलन को सुचारू रूप से चलाने के लिए पूरे देश से एक करोड़ रुपये इकट्ठे किये जाएँ। शफी साहब के सद्प्रयासों से मुजफ्फरपुर जिला ने एक लाख रुपयों का योगदान किया।

30 अक्टूबर 1921 को वे मुजफ्फरपुर के पुलिस अधीक्षक के आदेश से गिरफ्तार कर लिए गए। उन पर असहयोग आन्दोलन के द्वारा ब्रिटिश हुकूमत से विद्रोह के नेतृत्व का आरोप था। उनकी गिरफ्तारी की खबर फैलते ही लोगों की भारी भीड़ ने कलक्टेरियट को घेर लिया। काफी मशक्कत के बाद पुलिस उस भीड़ को वहाँ से हटाने में सफल हो सकी। शफी साहब को जेल में कई तरह की यातनाएँ दी जाने लगीं। बाद में राष्ट्रीय नेताओं के हस्तक्षेप से उन्हें राजनैतिक कैदी घोषित कर दिया गया। उनके जेल जाने के बाद मुजफ्फरपुर कांग्रेस का नेतृत्व रामदयालु सिंह ने संभाला।

दिसम्बर 1922 में जेल से छूटने के बाद वे गया कांग्रेस में शामिल हुए। फिर वे 'स्वराज पार्टी' में चले गए, जिससे उन्होंने नगरपालिका का चुनाव जीता और नगर अध्यक्ष हुए। 1924 में उन्होंने पातेपुर से डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का चुनाव लड़ा, लेकिन वे एक अंग्रेज उमीदवार डैन्बी से हार गए। उसी वर्ष वे पृथक निर्वाचक मंडल से सेंट्रल असेंबली के लिए निर्वाचित हो गए। गोकि शफी साहब पृथक निर्वाचक मंडल के पक्ष में नहीं थे। हाँ, वे मुसलमानों के लिए कुछ सीटों के आरक्षण के हिमायती थे। 1927 में हुए कांग्रेस के मद्रास अधिवेशन में उन्होंने जोर-शोर से इसके लिए आवाज उठाई थी। 1924 से 1934 तक अधिकांश समय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वे सेंट्रल असेंबली के प्रभावशाली सदस्य रहे। लंदन में आयोजित दूसरे गोलमेज कॉन्फ्रेंस में वे डेलीगेट बनकर शामिल हुये थे। उस समय अल्लामा इकबाल एवं शौकत अली साहब के साथ दुनिया के अनेक देशों की यात्राएँ कीं तथा उपनिवेशवाद के विरुद्ध अपनी लड़ाई के बारे में बताया।

1937 में शफी साहब ने मजलिस-ए-आहरार का चुनाव लड़ा, जो वे बदरुल हसन साहब से हार गए। फिर वापस उन्होंने अपने वकालत के पेशे में लौटने की कोशिश की। लेकिन अपने स्वास्थ्य कारणों से फिर वे अपने गाँव आकर रहने लगे। वहीं जनवरी 1949 में उनकी मृत्यु हो गई।

❑

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पं. जयनंदन झा

जगदीश प्रसाद 'श्रमिक'

दिल्ली के लाल किले के ऐतिहासिक दीवाने - आम के प्रशस्त सजे-सजाये हॉल में 16 अगस्त 1972 को जब तत्कालीन प्रधानमंत्री 'श्रीमती इंदिरा गाँधी' स्वतंत्रता सेनानियों को स्वतंत्र भारत की ओर से 'ताम्र-पत्र' प्रदान करने बैठीं और देश के प्रथम स्वतंत्रता सेनानी वयोवृद्ध 89 वर्षीय पं. जयनंदन झा के नाम की पुकार हुई, तब सभा-भवन तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा। पंडितजी एक युवक के सहारे मंच पर गए और जब प्रधान मंत्री उनके काँपते हाथों में ताम्र-पत्र देने लगीं तो एकबार फिर पूरे हॉल में तालियों की गड़गड़ाहट के साथ हर्ष-ध्वनि गूँज उठीं।

पंडितजी का जन्म 11 अक्टूबर 1887 ई. में, हिंदी पंचांग के अनुसार 'आश्विन शुक्ल एकादशी' को वैशाली जिले के शुभई ग्राम में एक कुलीन निर्धन मैथिल परिवार में हुआ था। पिता पंडित भगवान दत्त झा पावन हृदय के सीधे-सादे किन्तु स्वाभिमानी पंडित थे। राजा रघुनन्दन सिंह सरीखे समृद्ध जमींदार से भिड़ गए। उनके साथ मुकदमेबाजी में खेती-बाड़ी, घर-द्वार सब नीलाम हो गया और वे सड़क पर आ गए। पंडित जयनंदन झा बचपन से ही अत्यंत परिश्रमी और दयालु प्रकृति के थे। पढ़ाई-लिखाई में भी तेज होने के कारण गरीबी के बावजूद आपने उस जमाने में इन्ट्रेंस की परीक्षा पास की, किन्तु आगे की समुचित शिक्षा-दीक्षा नहीं हो सकी। परिवार की दयनीय आर्थिक अवस्था को देखते हुए अल्प आयु में ही आपने स्थानीय उच्च विद्यालय में शिक्षक की नौकरी कर ली।

गोरा सुन्दर मुखड़ा, प्रशस्त भाल एवं घुंघराले बालों से सजे झाजी अपनी तरुणाई में अत्यंत ही भव्य तथा आकर्षक व्यक्तित्व के स्वामी थे। स्कूल के कठोर एवं अनुशासनप्रिय प्रधानाध्यापक स्व. भूषण चन्द्र नाथ आपको लड़कों के 'नेताजी' बुलाते थे। वास्तव में विद्यालय के तमाम छात्रों के आप स्वयंभू अभिभावक, मित्र एवं मार्गदर्शक थे। अच्छे शिक्षक के रूप में उनकी ख्याति की वजह से बच्चों के ट्यूशन तथा वेतन आदि से परिवार को उम्मीद थी कि आर्थिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्थिति में सुधार संभव होगा और होने भी लगा था, किन्तु विधाता को कुछ और ही मंजूर था। युवक जयनंदन के हृदय में तिलक, गोखले और गांधी की पुकार गूंजने लगी। वे पत्र-पत्रिकाएँ एवं महान पुरुषों के जीवन-चरित पढ़ने में रुचि रखते थे। झाजी के शब्दों में 'मन में एक उचाट सी पैदा होने लगी जो चित्त को अशांत, अस्थिर करने लगा। लगता था मन कुछ और कह रहा है और करना कुछ और पड़ रहा है'। परतंत्रताजनित यातनाओं से पीड़ित भारतीय जनता के अंधकारमय जीवन-गगन में जब महात्मा गाँधी के प्रचंड आलोक का उदय हुआ तो आपने इस आलोक में अपने भविष्य के मार्ग को साफ-साफ देखा और आपको यह निश्चय करने में तनिक भी देर नहीं लगी कि अब नौकरी छोड़ देनी चाहिए।

जब अपना त्याग-पत्र लेकर वे स्कूल के हेडमास्टर भूषणचंद्र नाथ के पास पहुँचे तब स्कूल के प्रायः सभी शिक्षक वहाँ मौजूद थे। सब उन्हें देखते ही रह गए। सबने उनके मुखमंडल पर संकल्प का एक महत्त्वपूर्ण तेज देखा और अंग्रेजी साम्राज्यशाही के त्रास से भयभीत हेडमास्टर तो अवाक रह गए। सन 1920 ई. के 27 नवम्बर को आप स्कूल की नौकरी से इस्तीफा देकर गाँधी द्वारा संचालित 'असहयोग आन्दोलन' में कूद पड़े। झाजी के नेतृत्व में पहली सभा हाजीपुर के 'पत्थर की मस्जिद' में आयोजित हुई जिसकी पूरी व्यवस्था नगरपालिका के तत्कालीन चेयरमैन शकूर साहब ने की। उन्होंने सभा को संबोधित भी किया। दूसरी सभा चान्दसराय (जन्दाहा) में हुई जहाँ काफी संख्या में लोग शामिल भी हुए तथा आन्दोलन में भाग लेने के लिए कार्यकर्ता के रूप में अपना नाम भी लिखवाया। इसी तरह बिद्दुपुर स्टेशन के पास अन्धरवारा में एक विशाल सभा आयोजित हुई जिसकी अध्यक्षता झाजी ने की। हाजीपुर अनुमंडल में असहयोग आन्दोलन के नेतृत्व का भार झाजी को सौंपा गया। झाजी आन्दोलन के सफल संचालन के लिए योग्य लोगों की तलाश करने लगे। इसी सिलसिले में उनकी मुलाकात हाजीपुर के हथसारगंज में रहनेवाले आर्य समाज के एक प्रचारक स्वामी सत्यानन्द भारती से हुई और उन्होंने झाजी से सहयोग का वचन दिया। इस तरह इन लोगों के नेतृत्व में हाजीपुर शहर से थोड़ी दूर स्थित राजापाकड़ गाँव में एक विराट सभा का आयोजन हुआ, जिसमें अंग्रेजी राज के खिलाफ झाजी की वाणी ने आग उगलने का काम किया। उस सभा में स्वामी सत्यानन्द तथा झाजी ने टैक्सबंदी और असहयोग आन्दोलन पर जोरदार भाषण दिया। दोनों पर वारंट जारी हो गया और दोनों गिरफ्तार कर लिए गए। हाजीपुर के हाई स्कूल में तो जैसे चिनगारी फूट पड़ी। एक-एक कर स्कूल के छह शिक्षकों ने त्याग-पत्र दे दिया,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिसमें स्कूल के उप-प्रधानाध्यापक भी थे। अधिकांश विद्यार्थियों ने भी स्कूल छोड़ दिया। समूचे हाजीपुर शहर में 'भारत माता की जय', 'महात्मा गाँधी की जय' और 'पंडित जयनंदन झा की जय' के नारे गूंजने लगे। हाजीपुर के अंग्रेज एस. डि. ओ. मिस्टर हॉवे ने जो हाजीपुर हाई स्कूल के चेयरमैन भी थे और जिन्होंने झाजी को अपना इस्तीफा वापस लेने को बहुत समझाया था, उन्हें गिरफ्तार करने के लिए मुजफ्फरपुर के तत्कालीन अँगरेज पुलिस सुप्रिन्टेंडेंट मिस्टर विल्सन से आग्रह किया। जिन्होंने झाजी के नाम से वारंट जारी कर हाजीपुर के पुलिस इंस्पेक्टर रामानंद सिंह को गिरफ्तार करने के लिए हथियारबंद सिपाहियों के साथ राजापाकड़ भेजा। पर वहाँ की सभा इतनी विराट थी और झाजी के ओजस्वी भाषण से इस कदर उत्तेजित थी कि इंस्पेक्टर को इन्हें गिरफ्तार करने का साहस नहीं हुआ।

सभास्थल से थोड़ी ही दूर पर खड़ी पुलिस की टोली को देखकर झाजी के तन-बदन में जैसे आग जल उठी। उनके एक-एक शब्द जैसे बम के गोले बनकर बरसने लगे। बाद में हाजीपुर शहर में ही पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर हाजीपुर जेल में डाल दिया। असहयोग के नाम पर देश में हुई यह पहली गिरफ्तारी थी।

मुरली मनोहर प्रसाद जो उस समय बिहार के एकमात्र अंग्रेजी दैनिक सर्चलाइट के सम्पादक थे, इस खबर को सुनते ही हाजीपुर दौड़े और जेल में जाकर झाजी से मुलाकात की। पटना लौटकर उन्होंने अपने अखबार में जो संपादकीय लिखा, उससे बिहार में ही नहीं, पूरे देश में सरगर्मी फैल गई। महात्मा गाँधी ने बाबू राजेंद्र प्रसाद को झाजी पर लगाए राजद्रोह के मुकदमे को लड़ने का निर्देश दिया। मुरली बाबू ने सर्चलाइट के संपादकीय में लिखा, "जयनंदन झा एक गरीब परिवार में जन्मे सीधे-सादे शिक्षक हैं, जिनकी रगों में देश-भक्ति का गर्म रुधिर प्रवाहित होता है। अंग्रेजी हुकूमत को आप एक मिनट भी झेलने को तैयार नहीं हैं। आपके साहस त्याग और बहादुरी की यह आग न केवल सारे बिहार में फैलेगी, बल्कि पूरे देश में गाँव-गाँव, नगर-नगर तक जायेगी (सर्चलाइट 27 दिसम्बर 1920)।" आगे चलकर सर्चलाइट के संपादक मुरली बाबू एवं प्रकाशक पर भी राजद्रोह का मुकदमा चला, जिसमें बहस करने के लिए महात्मा गाँधी के निर्देश पर जाने-माने वकील मोतीलाल नेहरू एवं सर तेज बहादुर सप्रू पटना आये थे।

हाजीपुर के मुकदमे में झाजी की जीत हुई और कोर्ट ने झाजी को रिहा कर दिया। झाजी पूरी तरह राजनितिक क्रांतिकारी संन्यासी बन गए। खादी की घुटने तक धोती और देह पर एक छोटी सी चादर लिए वे गाँव-गाँव घूमकर असहयोग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आन्दोलन का बिगुल बजाने लगे। मित्रों के बहुत आग्रह करने पर उन्होंने एक चप्पल पहनना स्वीकार किया। इन पंक्तियों के लेखक को याद है कि जब उसने पंडितजी को एक सभा के लिए अपने गाँव में आमंत्रित किया था तब लगभग बीस हजार ग्रामीण उमड़ पड़े और सभा-स्थल पर उनके पाँव छूने की होड़ सी लग गई।

उस समय पंडितजी के सामने एक बड़ा प्रश्न था कि जिन बच्चों ने उनके आह्वान पर स्कूल छोड़ कर असहयोग आन्दोलन में भाग लिया था, उनकी पढ़ाई-लिखाई के व्यवस्था क्या हो? महात्मा गाँधी का आह्वान हुआ था कि सरकारी स्कूल से निकले शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के लिए राष्ट्रीय विद्यालय खोलकर शैक्षणिक कार्यक्रम चालू रखा जाए। फलतः हाई स्कूल से निकले शिक्षकों तथा कुछ देशभक्त युवा स्नातकों को लेकर झाजी ने हाजीपुर के गाँधी आश्रम में राष्ट्रीय विद्यालय की स्थापना कर दी।

ठीक इसी समय दानापुर छावनी के कुछ सिपाहियों और हवलदारों ने नौकरी छोड़ दी। वे सभी सीधे झाजी के पास हाजीपुर पहुँच गए। पंडितजी के सामने राष्ट्रीय विद्यालय के लिए तथा सर पर कफन बांधकर और हथेली पर प्राण रखकर अंग्रेजी हुकूमत को उखाड़ फेंकने का संकल्प लेकर आये सैकड़ों नौजवानों के लिए स्थान की चिंता हुई। पंडितजी की ही प्रेरणा से हाजीपुर शहर के एक नौजवान पटना मेडिकल कॉलेज की अंतिम परीक्षा को छोड़कर आये हुए गणेश सिंह ने पोहियार के जमींदार चन्द्रदीप बाबू से बाईस कट्ठा जमीन प्राप्त की। किन्तु चन्द्रदीप बाबू की शर्त थी कि जमीन तभी मिलेगी जब यहाँ स्थापित होनेवाले आश्रम की आधारशिला स्वयं महात्मा गाँधी रखेंगे। झाजी ने शर्त स्वीकार कर ली। लेकिन महात्मा गाँधी को हाजीपुर बुलाकर शिलान्यास कराना कोई आसान काम नहीं था। यह झाजी के कठोर प्रयास एवं संकल्प का परिणाम था कि आखिर 7 दिसम्बर 1920 को गांधीजी के हाथों 'गाँधी आश्रम' का शिलान्यास हुआ। बात की बात में चंदा इकठ्ठा हुआ, आश्रम का निर्माण हुआ एवं इसी में एक कट्ठा में राष्ट्रीय विद्यालय का कार्य बुलाकी बाबू के प्रधानाध्यापकत्व में आरम्भ हो गया। झाजी गाँव-गाँव घूमते, लोगों तक गाँधी के संदेश पहुँचाते तथा आश्रम एवं स्कूल के लिए लोगों से मुठिया वसूलते। मुठिया से इतना चंदा इकठ्ठा हो जाता था कि आश्रम एवं स्कूल का काम बखूबी चल जाता था। नतीजा यह हुआ कि सरकार के खुफिया विभाग ने उच्चाधिकारियों को खबर दी कि झाजी हाजीपुर में समानांतर सरकार बनाने की तैयारी कर रहे हैं। सरगर्मी बढ़ने लगी। लगा कि झाजी गिरफ्तार कर लिए जाएंगे। किन्तु झाजी जरा भी डरे-सहमे नहीं और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उतरोत्तर अपने कार्य में लगे रहे।

सन् 1932 में इरविन समझौता टूटने के बाद झाजी पुनः गिरफ्तार कर लिए गए। उस वक्त उन्हें छह महीनों के सश्रम कारावास की सजा मिली। छह माह बाद रिहा होते ही पुनः पकड़ लिए गए और फिर छह महीनों की सजा हुई। फिर 1942 की अगस्त क्रांति के दौरान उन्हें न केवल तीन वर्षों का सश्रम कारावास हुआ बल्कि सुभई स्थित उनके घर को पुलिस ने पूरी तरह उजाड़ दिया। उनके द्वितीय पुत्र कृष्णकान्त झा को, जो उस वक्त महज 11 वर्ष के थे, पुलिस ने पकड़ कर राजद्रोह का मुकदमा चलाया और उन्हें भी तीन वर्षों का कठोर कारावास हुआ।

झाजी न केवल राजनैतिक कार्यों बल्कि सामाजिक रचनात्मक कार्यों में भी बढ़ चढ़ कर हिस्सा लेते थे। जिनमें गाँव की सफाई, रोगियों की सेवा और खादी का प्रचार मुख्य कार्य था। पंडित मदनमोहन मालवीय द्वारा स्थापित सेवा समिति की हाजीपुर शाखा के आप सर्वेसर्वा थे। झाजी न केवल बिहार बल्कि देश के जाने-माने राजनैतिक-सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में प्रसिद्ध थे।

❐

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बाबू दीपनारायण सिंह

सुरेन्द्र मानपुरी

वैशाली के गौरव दीप बाबू को मैंने कभी देखा नहीं पर बड़े-बुजुर्गों और उनके नजदीक रहे लोगों से उनके बारे में सुना जरूर है। प्रत्येक अगली पीढ़ी अतीत की विभूतियों के बारे में पढ़कर या सुनकर ही जानती है। इतिहास को जानने का बड़ा आधार 'सुनना' भी है। भारतीय प्राचीन वांग्मय का सम्पूर्ण ज्ञान 'श्रुत' परम्परा से ही सुरक्षित रखा जाता था।

विधानसभा चुनाव के दौरान कुछ अलग मिजाज की, किन्तु प्रेरणादायक रिपोर्ट करनी थी। मैंने दीप बाबू और किशोरी बाबू (प्रसिद्ध कम्युनिस्ट नेता किशोरी प्रसन्न सिंह) के चुनाव प्रचार के दौरान राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता के बीच व्यक्तिगत आत्मीयता के बारे में सुना था। वह 1962 का चुनाव था जिसमें हाजीपुर विधान सभा क्षेत्र से दीप बाबू कांग्रेस तथा किशोरी बाबू कम्युनिस्ट पार्टी से उम्मीदवार हुए थे। गाँधी आश्रम मोहल्ले में दोनों के चुनाव कार्यालय सड़क के दोनों तरफ आमने-सामने ही थे। दिन भर चुनाव क्षेत्र में घूम-घूमकर वे एक दूसरे के सिद्धांतों और नीतियों के विरुद्ध प्रचार करते लेकिन शाम ढ़लने के बाद अपने कार्यालयों में लौटकर एक-दूसरे का हाल-चाल जरूर पता करते। ठीक महाभारत के युद्ध की तरह जैसे शाम में युद्ध समाप्ति पर सैनिक एक-दूसरे के खेमे में जाकर कुशल-क्षेम पूछते थे।

रात में चुनाव क्षेत्र से लौटकर जब दीप बाबू अपने कार्यालय लौटते तो अपने किसी विश्वसनीय कार्यकर्ता को किशोरी बाबू के खेमे में यह देखने के लिए भेजते कि वहाँ कार्यकर्ताओं के भोजन आदि की व्यवस्था है कि नहीं। यदि अभाव की सूचना मिलती तो वहाँ तुरंत खाद्य सामग्री पहुँचवाते। ठीक इसी तरह सुबह में किशोरी बाबू अपने घर से आये दूध में से दीप बाबू को भिजबाते। दोनों एक दूसरे के सैद्धांतिक विरोधी होते हुए भी यह उस समय की आत्मीयता एवं नैतिकता थी जिसका बाद के काल-खण्डों में सर्वथा लोप होता चला गया और चुनावी प्रचार गाली-गलौज, चरित्र हनन और भोंडे आरोप - प्रत्यारोपों का पर्याय बन गया। पूरी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राजनीति आज एक सवाल बन कर खड़ी है कि जब आजादी की लड़ाई लड़ी जा रही थी तब किसीने क्या यह कल्पना भी की होगी कि आजाद भारत की राजनीति में कभी इतनी गिरावट भी आ सकती है, जैसा आज हमें देखने को मिल रहा है।

दीप बाबू का जन्म 25 नवम्बर 1894 को वैशाली क्षेत्र के पुरनटांड़ गाँव में हुआ था। पिता सुखराम सिंह मुजफ्फरपुर जिला के तत्कालीन कलक्टर के पेशकार हुआ करते थे। माता का नाम गंगा देवी था। पाँच भाई बहनों में दीप बाबू से बड़ी एक बहन थीं तथा तीन छोटे भाई थे। इनसे छोटे भाई रामानंद सिंह और सबसे छोटे भाई ब्रह्मानंद सिंह खेती-बाड़ी से जुड़े रहे, जबकि तीसरे भाई परमानन्द सिंह आर्मी में थे। उन्होंने द्वितीय विश्व-युद्ध लड़ा था। ब्रह्मानंद सिंह का जुड़ाव को-ऑपरेटिव आन्दोलन से भी था।

दीप बाबू का बाल-विवाह हुआ था। उनकी ससुराल चांदी-धनुषी में थी। विवाहोपरांत उनकी पढ़ाई-लिखाई प्रारंभ हुई थी। अपनी कक्षा में वे सबसे बड़ी उम्र के विद्यार्थी थे, जिसके कारण वे प्रायः बच्चों के बीच उपहास के पात्र हो जाते थे। लेकिन उन्होंने अपनी पढ़ाई बड़े मनोयोग से पूरी की। लंगट सिंह कॉलेज, मुजफ्फरपुर से उन्होंने स्नातक किया। वे गर्व से कहते थे कि उनके शिक्षकों में आचार्य कृपलानी भी शामिल थे।

स्नातकोत्तरोपरांत दीप बाबू ने अपने कैरियर की शुरूआत विद्यालय उप-निरीक्षक की नौकरी से की लेकिन 1921 में गांधीजी के असहयोग आन्दोलन के प्रभाव में नौकरी छोड़कर स्वतंत्रता आन्दोलन में कूद पड़े। सन 1930, 1932, 1941, 1942 में आंदोलनों के सिलसिले में उन्हें बार-बार जेल जाना पड़ा। आन्दोलन के दौरान पिता के विरोध के कारण उन्होंने घर छोड़ रखा था और बिठौली गाँव में मुख्य सड़क के पास ही आश्रम बनाकर रहते थे और वहीं से तमाम आन्दोलनकारी गतिविधियों को अंजाम देते थे। उनके इन कार्यों में बिठौली गाँव के लोगों का भरपूर सहयोग होता था। 14 अगस्त 1942 को ग्रामीणों के विरोध के बावजूद वे गिरफ्तार कर लिए गए। 16 अगस्त को गुस्से में भरी पुलिस ने बिठौली गाँव को अग्नि के हवाले कर दिया था।

1926 से 1928 तक वे बिहार उड़ीसा लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्य रहे। पुनः 1937 से 1939 तक कांग्रेस के टिकट पर बिहार विधान सभा के सदस्य रहे। बिहार में को-ऑपरेटिव आन्दोलन के जन्मदाताओं में दीप बाबू की गिनती होती है। 1947 से 1950 तक वे बिहार को-ऑपरेटिव फेडरेशन के डिप्टी गवर्नर रहे। 1950 से 1962 तथा 1966 से 1973 तक बिहार को-ऑपरेटिव फेडरेशन के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सभापति थे। आज उनके नाम पर दीपनारायण सिंह सहकारिता संस्थान पटना में चल रहा है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पहला विधान सभा चुनाव 1952 में उन्होंने महनार से जीता था और श्रीकृष्ण सिंह मंत्रिमंडल के सदस्य भी हुए थे। श्रीकृष्ण सिंह के हृदय में दीप बाबू के लिए गहरा सम्मान था। एक बार की बात है मुख्यमंत्री श्रीकृष्ण बाबू मुजफ्फरपुर से लौटते हुए उनके घर पूरनटांड़ पहुँच गए। रात हो चली थी। पटना लौटने की जल्दीबाजी भी थी। जब दीप बाबू की माँ से इजाजत मांगी तो उन्होंने कहा - बेटा ! रात में नहीं चला करते। रात में तो निशाचर चलते हैं। श्रीबाबू अपने पूरे काफिले के साथ रुक गए और जिसे जहाँ जगह मिली वहीं सो गए। 1957 और 1962 का विधान सभा चुनाव उन्होंने हाजीपुर से जीता था। जातीय राजनीति तो उन्हें छू भी नहीं पायी थी। यही कारण है कि बिहार में उन्हें सभी बिरादरियों में एक समान वह सम्मान प्राप्त था जो बाद के दिनों में किसी राजनेता को प्राप्त नहीं हुआ। 1961 में बाबू श्रीकृष्ण सिंह की मृत्यु के बाद अल्प काल के लिए वे बिहार के मुख्यमंत्री भी बने।

1967 के चुनाव तक कांग्रेस में फूट पड़ चुकी थी। 67 का चुनाव उन्होंने लोकतान्त्रिक कांग्रेस के टिकट पर लालगंज से लड़ा और जीते। गौरतलब बात है कि महनार और लालगंज तो शुरू से ही राजपूत जाति के प्रभाव का क्षेत्र रहा है, किन्तु हाजीपुर सदैव ही पिछड़ा और अतिपिछड़ा क्षेत्र रहा है। फिर भी इस क्षेत्र से दीप बाबू का जीतना इस बात का प्रमाण है कि तब के वोटर उम्मीदवार की जाति की जगह उसकी योग्यता, क्षमता और निष्ठा देखा करते थे। चुनावी राजनीति का वह ऐसा आदर्श काल था, जब वोटरों के इरादे भी मजबूत हुआ करते थे।

सभी जाति-धर्मों में श्रद्धा के साथ समादृत इस नेता ने राजनीति के लम्बे सफर के बाद 07 दिसम्बर 1977 को हाजीपुर में अपनी अंतिम साँसें लीं। हाजीपुर गांधी आश्रम से उनका गहरा लगाव था। बाद में उनकी स्मृति में उनके नाम पर वहाँ एक संग्रहालय की स्थापना हुई। राजनैतिक अवमूल्यन के इस दौर में दीप बाबू जैसी विभूतियों का जीवन-दर्शन हमारी ऊँगली पकड़कर वह राह दिखाता है जो समाज और देश को ऊँचाइयों तक पहुँचाती है।

❐

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैशाली के महान सपूत शुक्ल-बन्धु

भोलानाथ ठाकुर

क्रांतिवीर योगेन्द्र शुक्ल एवं बैकुंठ शुक्ल वैशाली (तत्कालीन मुजफ्फरपुर) जिला के ग्राम जलालपुर के निवासी थे। योगेन्द्र शुक्ल का जन्म 1896 में हुआ था। बसावन सिंह के साथ वे हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिक एसोसिएशन के संस्थापक सदस्यों में एक थे। बिहार कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के भी वे संस्थापक सदस्य थे। बैकुंठ शुक्ल उनके भतीजा थे, जो उम्र में उनसे 11 वर्ष छोटे थे। उनका जन्म 1907 में हुआ था। गाँव में ही प्रारंभिक शिक्षा ग्रहण करने के बाद वे मथुरापुर प्राइमरी स्कूल में अध्यापन करने लगे थे, एक क्रान्तिकारी परिवार में जन्में बैकुंठ शुक्ल में देशभक्ति कूट-कूट कर भरी थी। 1930 के सविनय अवज्ञा आन्दोलन में उन्होंने बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया था और पटना के कैंप जेल में बंदी रहे थे, वहाँ से वे गाँधी-इरविन समझौते के बाद रिहा हुए थे। जेल प्रवास के दौरान ही उनका संपर्क हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिक आर्मी से हुआ और वे पक्के क्रान्तिकारी बन गए। हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिक आर्मी एक सक्रिय क्रान्तिकारी संगठन था, जो सोवियत क्रांति से बहुत प्रभावित था। ब्रिटिश सरकार के खिलाफ वे अक्सर हमले किया करते थे। किशोरी प्रसन्न सिंह इस संगठन के एक बड़े नेता थे जिनके नेतृत्व में बैकुंठ शुक्ल का विकास हुआ था।

1931 में भगत सिंह, राजगुरु एवं सुखदेव को लाहौर षड्यंत्र काण्ड में सजा सुना दी गई। इसने पूरे देश को आंदोलित कर दिया। इस मुकदमे में फणीन्द्र नाथ घोष, जो स्वयं रिवोल्यूशनरी पार्टी का सदस्य था ब्रिटिश सरकार के लालच और दबाव में आकर वादामाफ गवाह बन गया था। उसी की गवाही के आधार पर तीनों क्रांतिकारियों भगत सिंह, राजगुरु एवं सुखदेव को फाँसी की सजा सुना दी गई। अब बारी थी गद्दार फणीन्द्र नाथ घोष को सजा देने की। इसके लिए पहला प्रयास किया सदाशिव राव मालपुरकर एवं भगवान दास ने, लेकिन सफलता नहीं मिली। फिर हाजीपुर के गाँधी आश्रम में इस सन्दर्भ में बैठक बुलाई गई जिसमें इस काम को अंजाम देने के लिए क्रान्तिकारी साथियों में होड़ लग गई। अंत में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर्ची निकाली गई, जिसमे बैकुंठ शुक्ल का नाम निकला। 9 अक्टूबर 1932 को साथी चंद्रमा घोष के साथ मिल कर बैकुंठ शुक्ल ने फणीन्द्र घोष की हत्या कर दी। घटना के बाद वे वहाँ से निकल गए और कुछ दिनों तक क्रान्तिकारी साथी राम विनोद के घर में गुप्तवास में रहे। बाद में शुक्लजी ने चंद्रमा घोष को अपने से यह कह कर अलग कर दिया कि तुम्हारा घर-परिवार है, तुम इस पचड़े से बाहर निकल जाओ और वे स्वयं निश्चिन्त भाव से घूमने-टहलने लगे, जैसे कुछ हुआ ही न हो! आखिर 6 जुलाई 1933 को पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। मई 14, 1934 को मात्र 28 वर्ष की आयु में गया सेंट्रल जेल में उन्हें फाँसी दे दी गई।

योगेन्द्र शुक्ल बिहार और उत्तर प्रदेश के अग्रणी क्रांतिकारी नेताओं में एक थे। वे भगत सिंह तथा बटुकेश्वर दत्त को प्रशिक्षित करने वाले वरिष्ठ सहयोगियों में थे। हाजीपुर के गांधी आश्रम में भी भगत सिंह आये थे तथा यहाँ के दियारे इलाके में शुक्लजी ने उन्हें हथियारों की ट्रेनिंग दी थी। योगेन्द्र शुक्ल ने अपनी क्रान्तिकारी गतिविधियों के कारण 16 वर्षों से अधिक का समय जेलों में बिताया था, जिसमें 1932 से 1937 तक की कालापानी की सजा भी शामिल है। 1932 में ब्रिटिश सरकार के आदेश पर सी.आई.डी. के तत्कालीन डी.आई.जी. ने योगेन्द्र शुक्ल, बसावन सिन्हा, श्यामदेव नारायण उर्फ राम सिंह, ईश्वर दयाल सिंह, केदार मणि शुक्ल, मोहित चन्द्र अधिकारी एवं राम प्रताप सिंह के नाम कालापानी की सजा के लिए अंडमान भेजे जाने को प्रेषित किया था। दिसम्बर, 1932 में योगेन्द्र शुक्ल, श्यामदेव नारायण एवं केदार मणि शुक्ल को अंडमान कालापानी की सजा काटने को भेज दिया गया।

1937 में योगेन्द्र शुक्ल ने अंडमान जेल में कैदियों की सुविधा के सवाल पर भूख हड़ताल शुरू कर दी। 46 दिनों की भूख हड़ताल के बाद सरकार ने उनको वहाँ से हजारीबाग जेल में स्थानांतरित कर दिया। 1937 में श्रीकृष्ण सिंह के नेतृत्व में पहला कांग्रेस मंत्रिमंडल बना था। 15 फरवरी 1938 को राजनैतिक कैदियों के सवाल पर उन्होंने अपने मंत्रियों के साथ इस्तीफा दे दिया। परिणामस्वरूप वायसराय को उनकी मांगें माननी पड़ी। इस तरह मार्च 1938 में योगेंद्र शुक्ल अपने साथियों के साथ जेल से रिहा हुए।

जेल से छूटने के बाद वे इंडियन नेशनल कांग्रेस में शामिल हो गए तथा कांग्रेस की मुजफ्फरपुर जिला कमिटी के उप सभापति चुने गए। उसी वर्ष वे राष्ट्रीय कांग्रेस कमिटी के सदस्य भी चुने गए। किन्तु बाद में वे जयप्रकाश नारायण के साथ कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी से जुड़ गए। अखिल भारतीय किसान सभा की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

केन्द्रीय समिति के सदस्य चुने जाने के बाद 1940 में वे पुनः गिरफ्तार कर लिए गए। जब अगस्त 1942 में महात्मा गाँधी ने 'भारत छोड़ो' का नारा दिया तो योगेन्द्र शुक्ल अपने साथियों जयप्रकाश नारायण, सूरज नारायण सिंह, गुलाबचंद गुप्ता, रामनंदन मिश्र एवं शालिग्राम सिंह के साथ हजारीबाग जेल की दीवार फांद कर भाग निकले। उन सब का इरादा स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए भूमिगत आन्दोलन चलाने का था। जेल से भागते वक्त जयप्रकाश नारायण बीमार थे। जंगलों के रास्ते पैदल ही भागना था, जिसके लिए वे अशक्त थे। हजारीबाग से गया तक लगभग 124 कि.मी. उनको अपने कंधे पर लेकर शुक्लजी एवं रामनंदन मिश्र भागते रहे। गया में रामनंदन मिश्र की ससुराल थी, जहाँ रूककर इन लोगों ने थोड़ा विश्राम किया। फिर वहीं से खाने-पीने की सामग्री एवं कपडे-लत्ते लेकर ट्रेन द्वारा मुगलसराय निकल गए।

ब्रिटिश हुकूमत ने योगेन्द्र शुक्ल की गिरफ्तारी के लिए 5000 रूपए का इनाम घोषित किया हुआ था। 7 दिसम्बर 1942 को उन्हें पुनः मुजफ्फरपुर में गिरफ्तार कर लिया गया। उन पर यह भी आरोप लगा कि गिरफ्तारी से एक दिन पूर्व उन्होंने मुजफ्फरपुर जेल से सूरजदेव सिंह, रामबाबू कलवार, ब्रह्मानंद गुप्ता तथा गणेश राय को भगाने में मदद की थी। इस बार शुक्लजी को बक्सर जेल में रखा गया जहाँ वे तीन वर्षों तक बंद रहे और 1946 में छूटे।

1958 में उन्हें प्रजा सोशलिस्ट पार्टी की तरफ से बिहार विधान परिषद का सदस्य मनोनीत किया गया। 1960 में वे बुरी तरह बीमार हो गए। यहाँ तक कि आँखों से दिखना भी बंद हो गया। दरअसल उस लौहपुरुष को लम्बी जेल - यातनाओं ने अंदर से तोड़ दिया था। आखिर 19 नवम्बर 1960 को वैशाली के गौरव, वीर पुरुष योगेन्द्र शुक्ल ने इस दुनिया से विदा ले ली।

❑

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वतंत्रता सेनानी बाबू अक्षयवट राय

अनिल लोदीपुरी

शनिवार 22 दिसम्बर, 1900 को तत्कालीन जनपद मुजफ्फरपुर वर्तमान वैशाली (बिहार) के बिदुपुर थानान्तर्गत शीतलपुर ककरहटा निवासी पिता निरसु राय एवं माता कमला देवी के पुत्र के रूप में अक्षयवट राय का जन्म हुआ। दादा मनराज राय छह भाई थे और सभी पहलवानी किया करते थे। खेती-किसानी, पशुपालन और पहलवानी ही परिवार का मुख्य पेशा था। यह एक विचित्र दुर्योग हुआ कि एक ही वर्ष के महज छह महीनों में मनराज राय अपने सभी भाइयों सहित काल-कलवित हो गए। तब तक मनराज राय के बड़े पुत्र गोकुलचंद्र राय का जन्म हो चुका था और दूसरे पुत्र निरसु राय माता के गर्भ में थे। दुर्भाग्य में डूबे परिवार की संपत्ति पर दुष्टों की नजर थी, मगर दादी बहरी देवी ने धैर्य और साहस के साथ परिस्थितियों का सामना करते हुए अपने परिवार और संपत्ति की रक्षा की।

अक्षयवट राय के पिता निरसु राय एक कर्मठ किसान थे और माता कमला देवी एक धर्मपरायण सात्विक महिला थीं। गाँव-गँवई के उस इलाके में पढ़ाई-लिखाई का कोई वातावरण ही नहीं था। स्कूल का अभाव था। फिर भी दादी बहरी देवी की प्रबल इच्छा और प्रयास से घर से दूर बिदुपुर लोअर प्राइमरी स्कूल में अक्षयवट का नामांकन हुआ। दस वर्ष की अवस्था में लोअर प्राइमरी पास करने के बाद मिडिल की पढ़ाई उन्होंने गोविंदपुर सिंघाड़ा, मध्य विद्यालय से सन 1915 में पूरी की। हाई स्कूल में नवमीं की परीक्षा पास करने के बाद एक बार फिर दुर्भाग्य ने अपनी काली छाया उन पर डाल दी। उनके पिता का हैजा के प्रकोप से देहांत हो गया। अब उनके लिए पढ़ाई को जारी रखने की कोई गुंजाइश नहीं रही और उस छोटी सी उम्र में ही वे परिवार का बोझ सँभालने में लग गए।

किन्तु, शिक्षा के प्रति उनके लगन में कोई कमी नहीं आई। वे अपने गाँव में रात्रि पाठशाला चलाने लगे, जिसमें बड़े-बूढ़े भी शामिल होते थे। वे उनके बीच रामायण, गीता, महाभारत, सुखसागर, प्रेमसागर और भागवत कथा प्रसंगों को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुनाते हुए शिक्षा का अलख जगाते रहे। उनके इस तरह के रचनात्मक कार्यों से उस इलाके में उनका प्रभाव और प्रतिष्ठा भी बढ़ने लगी।

वह समय था जब अंग्रेजों के शोषण और अत्याचार से देश की जनता त्रस्त थी। आमलोगों के बीच गोरों के प्रति नफरत और घृणा का भाव जन्म ले चुका था। पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से कांग्रेस पार्टी के कार्यक्रमों की सूचना लोगों तक गाहे-बगाहे पहुँच रही थी। महात्मा गाँधी की चम्पारण यात्रा ने बिहार की जनता के अंदर शोषण एवं अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाने की प्रेरणा भर दी थी। हाजीपुर में पं. जयनंदन झा, किशोरी प्रसन्न सिंह और उनके क्रन्तिकारी साथियों की विद्रोही गतिविधियों की चर्चा गाँव-गाँव पहुँच रही थी। पं. जयनंदन झा और अन्य साथियों की मदद से 7 दिसम्बर 1920 को हाजीपुर में महात्मा गाँधी के कर-कमलों से गाँधी आश्रम एवं राष्ट्रीय स्कूल की स्थापना की गई थी। आश्रम में सेनानियों को रहने और गाँधी के आह्वान पर स्कूल छोड़ चुके लोगों को पढने-पढ़ाने की व्यवस्था होनी थी। इसके लिए धन-संग्रह तथा मुठिया (अन्न) संग्रह किया जाने लगा। शीतलपुर ककरहटा में इसकी जिम्मेवारी गोकुलचंद्र राय, अमिचंद्र राय एवं मिरचाई राय को दी गई। प्रत्येक शनिवार को इस संग्रह को हाजीपुर पहुँचाने का काम अक्षयवट राय करते थे। झाजी एवं किशोरी बाबू की संगति में अक्षयवट रायजी स्वतंत्रता आन्दोलन के पथ पर चल पड़े। उनके नेतृत्व में नशीली वस्तुओं की दुकानों पर पिकेटिंग की गयी, जिसके लिए उन्हें मुजफ्फरपुर जेल में छः माह की सजा काटनी पड़ी। जेल में भी उनका आन्दोलन जारी रहा। उस वक्त कैदियों को गर्दन में लकड़ी का तौक पहनना होता था, जिसे अमानवीय व्यवहार बताते हुए इन्होंने पहनने से इनकार कर दिया। जेल प्रशासन ने इन्हें कठिन यातनाएँ दी। किन्तु अंततः वह लड़ाई उन्होंने जीत ली और कैदियों को तौक पहनने से मुक्ति मिली। जेल में पहले से बंद आन्दोलनकारी बिन्देश्वरी प्रसाद वर्मा, रामदयालु सिंह, जनकधारी सिंह एवं महेश प्रसाद सिंह आदि ने उनकी निडरता का लोहा माना। इन सबों का गहरा जुड़ाव हाजीपुर के गाँधी आश्रम से था।

हैजे में पिता एवं प्लेग महामारी में चाचा को खोने के बाद सम्पूर्ण परिवार की जिम्मेदारी आ जाने के बावजूद रायजी ने मुक्ति-संग्राम के पथ से कभी मुँह नहीं मोड़ा। काँग्रेस संगठन निर्माण, स्वयंसेवकों का प्रशिक्षण, आश्रम संचालन - प्रबंधन के लिए धन संचय, खाड़ी का प्रचार-प्रसार आदि उनके दैनिक जीवन का हिस्सा बने रहे। डा. राजेंद्र प्रसाद के नेतृत्व में पटना गवर्नर हाउस के सामने से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रतिबन्ध एवं धारा 144 के बावजूद जुलूस निकलने वाला था। अक्षयवट राय जी अपने साथियों सहित आगे बढ़े तो घुड़सवार सैनिकों ने रास्ता रोक लिया। उन्हें आन्दोलनकारियों को कुचल देने का आदेश था। रायजी साथियों सहित सड़क पर लेट गए। उन्हें पता था कि घोड़े के आगे लेट जाने पर वह पैर नहीं बढ़ाता है। अंततः घुड़सवार पीछे हट गए। मोतीलाल नेहरू की गवर्नर से बहस हुई। आखिर धारा 144 को वापस लेना पड़ा और जुलूस आगे बढ़ा।

पटना से लौटने पर अक्षयवट राय जी का नागरिक अभिनन्दन हुआ, जिसमें उनका जोरदार भाषण हुआ। उनके भाषण से इलाके के एक धनी और संभ्रांत व्यक्ति, बिदुपुर रेलवे स्टेशन के स्टेशन मास्टर बाबू रामदेनी सिंह इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने तत्काल गाँधी आश्रम के लिए तीस रुपए मासिक चंदा देने की घोषणा कर दी। बाबू लंगट सिंह के पुत्र नंदा बाबू ने भी तीस रुपये मासिक चंदा देना स्वीकार किया। उनकी क्रांतिकारिता एवं ओजस्विता के एक महत्त्वपूर्ण प्रभाव की चर्चा किशोरी बाबू अपनी पुस्तक 'राह की खोज' में करते हैं - रायजी के कारण पिछड़े वर्ग, खासकर यादव समुदाय से, बड़े पैमाने पर सहयोगी एवं स्वयंसेवक आन्दोलन में शामिल हुए। वह समय था जब उच्च वर्ग के लोग बड़ी आसानी से राजनीति में शामिल हो जाते थे, किन्तु पिछड़ों और दलित वर्ग में राजनीतिक चेतना का अभाव था। किशोरी बाबू कहते हैं कि स्थानीय नेताओं में राय जी बड़े पक्के आदमी थे। अपने जुझारूपन का खामियाजा भी उन्होंने खूब भुगता। अंग्रेजी सरकार का दमन चक्र जब बिदुपुर के इलाके में चला तो सर्वाधिक क्षति अक्षयवट राय को ही पहुँची। इसका विस्तृत विवरण जगदीश प्रसाद श्रमिक की पुस्तक 'स्वाधीनता संग्राम और मुजफ्फरपुर जिला कांग्रेस कमिटी का संक्षिप्त इतिहास' में मिलता है।

जून 1931 में पटना में प्रथम प्रादेशिक सोशलिस्ट पार्टी का गठन हुआ, जिसमें प्रो अब्दुल बारी अध्यक्ष चुने गए। पार्टी के संस्थापक सदस्यों में एम. एन. राय, रामवृक्ष बेनीपुरी, किशोरी प्रसन्न सिंह, अक्षयवट राय आदि थे। रायजी ने बरांटी और रजौली में भी आश्रम का निर्माण किया तथा बानर सेना गठित की जिसमें आठ से सोलह वर्ष के बच्चों को शामिल किया। बीस-बीस का जत्था बनाकर गाँव-गाँव में राष्ट्रीय गीत गाते हुए जन-जागृति का कार्य होने लगा। लेकिन सरकार को यह कैसे मंजूर होता। बानर सेना के जत्थे को गिरफ्तार कर लिया गया और आश्रम को ध्वस्त कर दिया गया।

सन 1941 में अक्षयवट राय ने किसान संगठन बनाकर पहला महासम्मेलन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अमीर गुरुजी के गाँव खजबत्ता (बिद्दुपुर) में किया। रामबृक्ष बेनीपुरी एवं योगेन्द्र शुक्ल उसमें मुख्य अतिथि थे। इसमें जमीन्दारी प्रथा खत्म करने का प्रस्ताव पास हुआ। साथ ही किसानों ने संकल्प लिया कि जब तक मातृभूमि को अंग्रेजों से मुक्त नहीं करा लेंगे, चैन की साँस नहीं लेंगे। इसी गाँव में किशोरी बाबू ने अक्षयवट राय तथा अमीर गुरु आदि के साथ मिलकर बकाश्त आन्दोलन चलाया। स्थानीय जमींदारों से संघर्ष कर इलाके के आठ गाँवों के किसानों की जमीनें मुक्त कराईं।

अगस्त क्रांति की घोषणा हुई। राय जी ने अपने साथियों को स्पष्ट संदेश दिया कि गांधीजी के नेतृत्व में हुई कांग्रेस कमिटी की बैठक में जो भी निर्णय होगा हम उसके अनुरूप काम करेंगे। यदि गांधीजी पहले ही गिरफ्तार हो गए तो विद्रोह होगा। साथियों को भूमिगत होने की सलाह देते हुए उन्होंने अपना निश्चय बतलाया - इस बार गिरफ्तार नहीं होना है। सत्याग्रह नहीं, सीधा युद्ध! गाँधी का संदेश आया - 'करो या मरो'। देश के सभी बड़े नेता गिरफ्तार कर लिए गए। समाजवादी नेतृत्व ने संघर्ष का आगाज किया। रेल, डाक, तार, सरकारी कार्यालयों में तोड़-फोड़ प्रारंभ हो गया। जनता सड़कों पर आ गई। शासन को भंग कर पूरी तरह अराजक स्थिति बना दी गई।

अजमतपुर में विजय ठाकुर के घर पर भूमिगत समाजवादियों की बैठक राय जी की अध्यक्षता में हुई। वहीं गुरिल्ला दस्ता तैयार किया गया। सरकारी जासूसों को खबर लग गई। 25 अगस्त को शीतलपुर निवासी लाल बहादुर सिंह के घर को अंग्रेजी सिपाहियों ने जला दिया। द्वारका प्रसाद का घर भी फूँक दिया गया। बिदुपुर बाजार में जुलूस पर गोलियाँ चलीं जिसमें राम औतार राय, हरवंश राय (शीतलपुर ककरहरा), हेमराज राय, (परोह दीअर) और बुद्धू पासवान शहीद हो गए। रौशन राय और रामवृक्ष राय (शीतलपुर ककरहरा) पुलिस गोली से घायल हुए। इस प्रकार अक्षयवट राय द्वारा जलाई देश-भक्ति की आग ने उनके गाँव को शहीदों का गाँव बना दिया।

आन्दोलन को उग्र बनाने हेतु जयप्रकाशजी आजाद दस्ता का गठन कर चुके थे। राय जी ने अपने साथियों सहित उससे जुड़ कर, दस्ता का नेतृत्व करते हुए जन्दाहा डाकघर पर धावा बोल दिया। दोपहर का समय था। जनता समझ नहीं सकी और डाकघर की सुरक्षा में भीड़ इकट्ठी हो गई। अमीर गुरु ने भीड़ को भगाने के लिए हवा में गोलियाँ चलाईं। राय जी ने जनता को बैठाकर उनके बीच परचा बाँटा। लोग घरों को लौट गए। आजाद दस्ता ने डाकघर लूट लिया। राय जी के पीछे पुलिस लगी ही रहती थी। 1944 में वे बेलकुंडा गाँव में गिरफ्तार कर लिए

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गए। उन दिनों वे अस्वस्थ चल रहे थे। उन्हें हाजीपुर जेल में डाल दिया गया। वहाँ से वे 1946 के अक्टूबर में रिहा हुए। 15 अगस्त, 1947 को देश आजाद हुआ। आजादी के बाद सरकार ने अंग्रेजी सरकार द्वारा नष्ट की गई राय जी की संपत्ति की क्षतिपूर्ति हेतु मुआवजे की राशि और सरकारी पत्र के साथ एक वरीय पदाधिकारी को उनके घर भेजा। राय जी ने उस पदाधिकारी की आवभगत करके मुआवजे की राशि यह कह कर लौटा दी कि देश आजाद हुआ, यही मेरा मुआवजा है।

मन वचन और कर्म से समाजवादी अक्षयवट राय ने जयप्रकाश नारायण और डा. लोहिया के नेतृत्व में समाजवाद का झंडा बुलंद किया। समाजवादी पार्टी प्रजा सोशलिस्ट के बैनर तले 1952 के आम चुनाव और विधान सभा चुनाव में समाजवादियों को भारी पराजय का सामना करना पड़ा। सभी नेता मायूस थे। डा. लोहिया ने नए सिरे से समाजवादी आन्दोलन का काम शुरू किया। उत्तरप्रदेश में सिंचाई कर के विरुद्ध किसान आन्दोलन का नेतृत्व करते हुए 1953 में वे गिरफ्तार हुए। बंदी के दौरान ही केरल में अपनी ही सरकार से इस्तीफा माँगा। उस समय सरकार का नेतृत्व पतताम ताजु पिल्लै कर रहे थे। शांतिपूर्ण जुलूस पर पुलिस ने गोलियाँ चलाई जिसमें कई लोग मारे गए। साथी नेताओं से खिन्न लोहियाजी ने 1955 में अलग सोशलिस्ट पार्टी बनाई, जिसके बिहार प्रदेश का अध्यक्ष अक्षयवट राय को बनाया। रायजी के नेतृत्व में बिहार में पार्टी को काफी मजबूती मिली। 1962 का चुनाव हाड़ कँपाती ठंड में संपन्न हुआ था। रायजी दिन-रात एक करते हुए पूरे प्रदेश में पार्टी की जीत के लिए जुटे रहे। परिणामस्वरूप पार्टी को जीत भी मिली तथा वोट प्रतिशत में गुणात्मक वृद्धि भी हुई, लेकिन रायजी ठंड के कारण गंभीर रूप से बीमार हो गए। हाजीपुर के अस्पताल में उन्हें भर्ती किया गया। खबर फैली तो साथियों, समर्थकों की भीड़ लग गई। सीताराम सिंह, अमीर सिंह आदि साथियों ने उन्हें पटना ले जाना चाहा। पर उन्होंने जाने से इंकार कर दिया। आखिर कार्तिक पूर्णिमा की रात्रि को उन्होंने इस संसार को अलविदा कह दिया।

❐

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुस्तकालय आंदोलन के पुरोधा जगन्नाथ प्रसाद साह

देवेन्द्र गुप्त

19वीं और 20वीं सदी के दौरान भारत में राजनीति और समाज सुधार के क्षेत्र में जो काम हुए, उसका परिणाम सामाजिक-सांस्कृतिक पुनर्जागरण के रूप में सामने आया। बेशक, इसमें पुस्तकालय आंदोलन की भूमिका अहम रही है। देश के मुख्तलिफ हिस्सों से ऐसे अनेक समाजसेवी-साधक सामने आये, जिन्होंने अपना जीवन समर्पित कर इस आंदोलन की मशाल को जलाये रखा। इन्हीं में से एक थे वैशाली जनपद के लाल जगन्नाथ प्रसाद साह। समाजसेवा का लक्ष्य लेकर जिस डगर पर उन्होंने कदम रखा, उसपर जीवन के आखिरी दिनों तक उनके कदमों के निशान दिखाई पड़ते हैं. सामाजिक-सांस्कृतिक उन्नयन और ज्ञान की रोशनी फैलाने की गरज से जगन्नाथ जी ने पुस्तकालय आंदोलन का रास्ता चुना। इस आंदोलन को मुकाम देने में जीवन पर्यंत जुटा रहा लालगंज का यह लाल। शायद इसीलिए, एक कर्मयोगी और सतत साधक के रूप में दूर देश तक साह जी की पहचान है। मैंने अपने बचपन से लेकर युवावस्था तक स्व. जगन्नाथ प्रसाद साह को काफी नजदीक से देखा है। लिहाजा, उस कर्मयोगी की साधना का मैं भी साक्षी रहा। उनकी जीवन-यात्रा और इस यात्रा के विभिन्न पड़ावों पर गौर करें, तो यही तथ्य उभरता है कि समाज की निःस्वार्थ सेवा और सत्य की तलाश ही साह जी के जीवन का एकमात्र लक्ष्य रहा। समाजसेवा को अपने जीवन का उद्देश्य बनाने वाले साह जी आखिरी वक्त तक इसके लिए प्रतिबद्ध रहे।

जगन्नाथ प्रसाद साह का जन्म लालगंज के एक संपन्न वैश्य परिवार में 25 दिसंबर 1901 को हुआ था। जन्म के 14 महीने बाद ही इनके सिर से पिता का साया उठ गया। जब पिता रामेश्वर लाल साह की असामयिक मृत्यु हुई, तो उस समय इनके अग्रज रामलखन प्रसाद साह महज 9 साल के थे। तब इनकी विधवा माँ पर परिवार चलाने से लेकर बच्चों के पालन-पोषण और शिक्षा-दीक्षा की जिम्मेदारी आन पड़ी। माँ वसुंधरा देवी साहसी, धैर्यशील और धर्मपरायण थीं। अपने इन्हीं गुणों के कारण वह बालक जगन्नाथ (जो उनकी आठवीं संतान थी)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के अंदर ऊँचे चरित्र और संस्कारों को गढ़ने में समर्थ हो सकीं। इतना ही नहीं, आगे चलकर इनके इस्पाती व्यक्तित्व का निर्माण करने में सफल हो सकीं।

जगन्नाथ जी की प्रारंभिक शिक्षा लालगंज में हुई और 1918 ई. में उन्होंने मिड्ल पास किया। इसके आगे की पढ़ाई के लिए जिला स्कूल, मुजफ्फरपुर में दाखिला लिया, जहाँ वे 1920 तक अध्ययनरत रहे। यह वही समय था, जब पूरे देश में गांधी की आंधी उठ रही थी। महात्मा गांधी ने असहयोग आंदोलन के बीच जब छात्रों का आह्वान किया और उन्हें स्कूल छोड़ने को कहा, तो साह जी ने 22 दिसंबर 1920 को स्कूल छोड़ दिया और आजादी के आंदोलन में कूद पड़े।

स्वतंत्रता संग्राम और राजनीति में साह जी की भागीदारी

गांधी जी के आह्वान पर जगन्नाथ प्रसाद साह स्कूल छोड़ने के बाद कांग्रेस का चवनिया सदस्य बनकर तिरंगा राष्ट्रीय ध्वज लिये गाँव-डगर घूमते और गांधी का संदेश सुनाते फिरते। 1922 ई. में गया में कांग्रेस का अखिल भारतीय अधिवेशन हुआ तो साह जी ने स्वागत समिति सदस्य और बिहार के प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया। 1929 ई. में लालगंज थाना कांग्रेस कमेटी के सहायक मंत्री चुने गये। 1930 में नमक सत्याग्रह में भाग लेने और सरदार भगत सिंह के सम्मान में जुलूस निकालने के कारण जेल जाना पड़ा। 1937 ई. में बिहार कांग्रेस का मंत्रिमंडल बनने के बाद वे मुजफ्फरपुर जिला कांग्रेस कमेटी के सहायक मंत्री चुने गये। 1940-41 में महात्मा गांधी के आह्वान पर व्यक्तिगत सत्याग्रह में भाग लिया, जिसके कारण छह महीनों के कठोर कारावास की सजा भुगतनी पड़ी।

1942 के आंदोलन में साह जी ने अदम्य साहस और वीरता का परिचय दिया। महात्मा गांधी ने 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' आंदोलन का आह्वान किया तो 10 अगस्त' 42 को साह जी कैद कर लिये गये। 15 अगस्त 1942 को हाजीपुर जेल की दीवारें तोड़कर साह जी अपने साथियों के साथ भाग निकले। लेकिन, पुलिस की नजरों से वे ज्यादा दिनों तक बच नहीं सके और लगभग एक माह के अंदर ही सितंबर में वे फिर जेल की सलाखों में डाल दिये गये। इस बार उन्हें नये ऑर्डिनेंस के कारण आठ वर्ष की दो सजाएँ हुईं। हालांकि हाई कोर्ट से ऑर्डिनेंस रद्द हो जाने के कारण 1943 के अंत में उन्हें जेल से छोड़ दिया गया। जेल से वे छूट तो गये, लेकिन जेल तोड़कर भाग जाने वाला मुकदमा 1947 ई. तक चलता रहा। उस मुकदमे से वे तभी मुक्त हुए, जब 15 अगस्त 1947 को देश आजाद हुआ और बिहार में कांग्रेस की सरकार बनी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

1942 के आंदोलन के बाद कांग्रेस का कार्य अवरुद्ध रहा, लेकिन महात्मा गांधी की प्रेरणा से साह जी देश के राजनीतिक संघर्ष से जुड़े रहे। यह एक महान संयोग था कि गांधीजी के अंतिम समय में साह जी को उनके साथ रहने का मौका मिला। वे बाबू दीपनारायण सिंह के साथ बापू के आखिरी दो दिन उनके निकट रहे। 30 जनवरी 1948 की शाम को बापू जब प्रार्थना सभा में जा रहे थे तो साह जी भी उनके पास थे। गांधीजी की शहादत के कुछ माह बाद 12 अप्रैल' 48 को साह जी ने कांग्रेस से नाता तोड़ लिया।

महात्मा गांधी से प्रभावित होकर जगन्नाथ प्रसाद साह देश की आजादी के लिए कांग्रेस से जुड़े थे, लेकिन बाद में उनपर सोशलिस्ट विचारों का गहरा प्रभाव पड़ा। लोकनायक जयप्रकाश नारायण से इनका घनिष्ठ संबंध था और उन्हीं के स्नेहवश साह जी सोशलिस्ट पार्टी में चले गये। 1955 ई. तक वे इस पार्टी के प्रभावी सदस्य बने रहे। हालांकि 1934 ई. में ही समाजवादी जीवन मूल्यों से प्रभावित होने के कारण वे कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के प्रबल पक्षधर हो गये थे। उस दौरान किसान आंदोलन का भी उन्होंने पुरजोर समर्थन किया था। इस तरह तथ्यों की रोशनी में हम पाते हैं कि स्वतंत्रता संग्राम के बीच जगन्नाथ प्रसाद साह ने अनेकानेक सम्मानित पदों पर अपने दायित्वों का निर्वाह किया। कर्मठता, ईमानदारी और त्याग में वे किसी से पीछे नहीं रहे। लेकिन, आगे चलकर राजनीति का रंग-ढंग उन्हें रास नहीं आया। राजनीति में छल-प्रपंचों का वर्चस्व देखकर वे असहज महसूस करने लगे। राजनीति के लिए शायद वे नहीं बने थे, इसलिए वहाँ खुद को उन्होंने अनफिट महसूस किया। यही वजह रही कि 1955 में सोशलिस्ट पार्टी से भी त्याग-पत्र देकर राजनीति से पूर्णतः अलग हो गये।

जगन्नाथ प्र. साह और श्री शारदा सदन पुस्तकालय

वैशाली जिले के एक छोटे से कस्बे लालगंज को अपनी जिस बेमिसाल संपदा के बल पर आज गौरवान्वित होने का अवसर मिला है, वह है श्री शारदा सदन पुस्तकालय। यह पुस्तकालय स्व. जगन्नाथ प्रसाद साह की सारस्वत साधना का एक जीवंत स्मारक है। उनके पुरुषार्थ का प्रतीक और सांस्कृतिक उन्नयन के लिए की गयी उनकी तपस्या का फल है—यह विराट पुस्तकालय। विविध भाषाओं का ऐसा संपन्न पुस्तकालय अपने देश के किसी ग्रामीण अंचल में शायद ही देखने को मिले। एक विद्वान ने उनके बारे में ठीक ही कहा है कि जिस प्रकार रवींद्रनाथ ठाकुर ने शांति निकेतन को बनाया, पंडित मदन मोहन मालवीय ने बनारस हिंदू

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विश्वविद्यालय की स्थापना की, उसी योग और तपस्या की तरह साह जी ने शारदा सदन पुस्तकालय का संचालन किया।

बचपन से ही पुस्तक प्रेमी रहे जगन्नाथ प्रसाद साह ने 1913 ई. में महज 12 साल की आयु में अपने घर पर ही एक शिशु पुस्तकालय स्थापित किया था। 1914 ई. में स्वामी सत्यदेव परिव्राजक जब लालगंज आये, तो यहाँ उन्होंने 'हिंदी हितैषिणी सभा' की स्थापना की। साथ ही एक पुस्तकालय की भी नींव डाली गयी। वही है आज का भव्य शारदा सदन पुस्तकालय। महात्मा गांधी पहली बार इस पुस्तकालय में 1917 ई. में पधारे थे। उन्हीं के कर कमलों से वाचनालय की स्थापना हुई। गांधीजी का पुनः पदार्पण इस पुस्तकालय में 1934 ई. में हुआ, जब वे भूकंप से हुई तबाही को देखने आये थे। स्थापना (1914) के बाद लगभग एक दशक तक पुस्तकालय का विकास काफी धीमा रहा, लेकिन 1924 ई. में पुस्तकालय को नये सिरे से गठित किया गया और जगन्नाथ प्रसाद साह इसके प्रधान सचिव बनाये गये। तब से पुस्तकालय दिन-ब-दिन तेजी से उन्नति करता गया।

साह जी बिहार में पुस्तकालय आंदोलन के जन्मदाताओं में रहे हैं। कहना गलत न होगा कि भारत के पुनर्जागरण काल में छोटे-बड़े शहरों से लेकर ग्रामीण अंचलों तक, ये पुस्तकालय ही थे जो न सिर्फ आजादी की भावना जागृत करने बल्कि समाज सुधार और सांस्कृतिक चेतना विकसित करने के भी केन्द्र बने रहे। इन पुस्तकालयों के माध्यम से ही सामाजिक रूढ़ियों और शोषण के खिलाफ संघर्ष का बिगुल फूंका गया। साहित्य और संस्कृति के अध्ययन व सृजन की प्रेरणा भी मिली। साह जी इसी पुस्तकालय आंदोलन के प्रवर्तक और पुरोधा के रूप में दिखायी देते हैं। पुराने मुजफ्फरपुर जिला से लेकर राज्य और देश के स्तर तक, जो भी सरकारी-गैरसरकारी पुस्तकालय संगठन हैं, उनके साथ वे गहराई से जुड़े रहे। 1932 ई. में बिहार राज्य पुस्तकालय संघ का गठन हुआ, जिसमें साह जी का अभिन्न सहयोग रहा। 1932 से 1965 तक वे संघ के मंत्री रहे। बाद के वर्षों में भी सक्रिय रूप से जुड़े रहे।

अपने सामाजिक जीवन में साह जी ने एक और रचनात्मक कार्य को बखूबी अंजाम दिया। यह था - निरक्षरता का निवारण और प्रौढ़जनों में साक्षरता के प्रसार का कार्य। स्वाधीनता के पूर्व 1937 ई. में बिहार में कांग्रेस मंत्रिमंडल बना तो तत्कालीन शिक्षा मंत्री डॉ. महमूद के मार्गदर्शन में साक्षरता का अभियान चला। तब जिले में इस साक्षरता अभियान के लिए हाजीपुर अनुमंडल पदाधिकारी की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्यक्षता में संचालन समिति का गठन हुआ। जगन्नाथ बाबू इसके उपाध्यक्ष हुए। मुख्य रूप से इन्हीं की देखरेख में उस अल्प अवधि में लालगंज थाना क्षेत्र में 92 पुस्तकालय और 23 समाज शिक्षा केन्द्र खोले गये। सिर्फ एक साल में 23,200 निरक्षरों को साक्षर बनाया गया। उतनी ही पुस्तकें भी वितरित की गयीं।

सहकारिता के क्षेत्र में भी साह जी का अहम योगदान रहा। देश की जनता के बहुमुखी आर्थिक विकास के लिए सहकारिता आंदोलन की शुरुआत हुई। साह जी इस आंदोलन से लगभग 50 वर्षों तक जुड़े रहे। इस दौरान उन्होंने लालगंज में सहकारिता आंदोलन को परवान चढ़ाया। हाजीपुर अनुमंडल और बाद में वैशाली जिला बन जाने के बाद भी कन्ज्यूमर्स एंड प्रोड्यूसर्स यूनियन के मंत्री और प्रमुख सदस्य के रूप में सक्रिय भूमिका निभायी। वे मुजफ्फरपुर जिला कोऑपरेटिव फेडरेशन के 1963-73 ई. तक मंत्री रहे। वैशाली जिला के अलग वजूद में आ जाने पर वैशाली जिला कोऑपरेटिव फेडरेशन के उपसभापति पद पर जीवन के अंतिम दिनों तक रहे। वे बिहार स्टेट कोऑपरेटिव प्रेस सोसाइटी लिमिटेड के 1963 से 73 तक प्रधान सचिव भी रहे। उल्लेखनीय है कि बिहार में सहकारिता आंदोलन की विकास यात्रा में जगन्नाथ प्रसाद साह ने अपने अनुभव, सूझबूझ और परिपक्व समझदारी से उसे नयी दिशा और गति दी।

साह जी की दो सेवाएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। 1934 ई. में बिहार में भयानक भूकंप आया, जिसमें लालगंज अंचल बुरी तरह प्रभावित हुआ। तब इस क्षेत्र के केन्द्राध्यक्ष के रूप में उन्होंने जी जान से पीड़ितों की सेवा की। महात्मा गांधी, बिहार रिलीफ कमेटी के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद और मुजफ्फरपुर जिला रिलीफ कमेटी के अध्यक्ष रामदयालु सिंह ने इनकी सेवा को काफी सराहा था। इसी तरह 1967 ई. में जब बिहार में भारी भुखमरी के हालात पैदा हुए, तो लोकनायक जयप्रकाश नारायण की अध्यक्षता में बिहार रिलीफ कमेटी की ओर से लालगंज क्षेत्र के गाँवों में हजार-हजार लोगों को प्रतिदिन नियमित भोजन कराया और भुखमरी के विरुद्ध संघर्ष की अगुआई की।

वैशाली के पुनरुद्धार में साह जी का योगदान

खंडहरों में खो गये वैशाली के गौरवशाली अतीत को देश-दुनिया के पटल पर स्थापित करने वाले द्रष्टाओं की दास्तान भुलायी नहीं जा सकती। स्व. जगदीश चन्द्र माथुर की अगुआई में अन्य इतिहासकारों व समाजसेवियों के साथ मिलकर जगन्नाथ प्रसाद साह ने जिस अथक परिश्रम और सूझबूझ के साथ वैशाली का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुनरुद्धार किया, उस गाथा को हमेशा याद रखा जायेगा। 1944 ई. में हाजीपुर सबडिविजन के अनुमंडलाधिकारी के रूप में आइसीएस जगदीश चन्द्र माथुर पदस्थापित थे। जगन्नाथ प्रसाद साह उनके कोर्ट में अभियुक्त थे। थोड़ी देर की देखादेखी मित्रता में बदल गयी। माथुर साहब उच्च कोटि के साहित्यकार, कलाचिंतक और इतिहास प्रेमी थे। उन्होंने साह जी के अंदर सुप्त पड़े साहित्यानुराग और इतिहास प्रेम को जाग्रत किया। जगदीश चन्द्र माथुर, डॉ. योगेन्द्र मिश्र और जगन्नाथ प्रसाद साह के सतत प्रयास और साधना के परिणामस्वरूप वैशाली संघ की स्थापना 1944 में हुई। माथुर साहब आजीवन इस संघ के सचिव रहे और साह जी इसके कार्यकारी सचिव।

वैशाली के पुनरुद्धार के लिए चिरस्थायी मूल्य के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक कार्यों को अंजाम दिया गया। इससे संबंधित साहित्य का प्रकाशन हुआ। ऐतिहासिक भग्नावशेषों की खुदाई हुई और वैशाली का महत्त्व प्रतिष्ठापित हुआ। उससे पहले वैशाली के महत्त्व से लोग अनभिज्ञ थे। वहाँ अशोक स्तंभ और गढ़ के सिवा कुछ भी नहीं दिखायी देता था। कहने की जरूरत नहीं कि वैशाली के इस नवनिर्माण में साह जी का अपार श्रम लगा हुआ है। वैशाली के सांस्कृतिक गौरव से आम जन को अभिप्रेरित करने के लिए वैशाली महोत्सव का आयोजन हुआ, जो पहली बार 31 मार्च एवं 1 अप्रैल 1945 को आयोजित किया गया। तब से लेकर आज तक (बीच के कुछ वर्षों को छोड़कर) वैशाली महोत्सव की अविच्छिन्न परंपरा कायम है। हर साल चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को भगवान महावीर के जन्मदिन के अवसर पर बड़े धूमधाम से वैशाली महोत्सव का आयोजन होता है। इसमें लोक कला और लोक संस्कृति की अनुपम छटा देखने को मिलती है। इस सांस्कृतिक परंपरा के प्रेरक तो माथुर साहब थे, लेकिन धरातल पर कार्यरूप देने वाले साह जी ही थे। 1984 ई. तक वैशाली संघ के द्वारा आम जनता के सहयोग से वैशाली महोत्सव आयोजित होता रहा, लेकिन उसके बाद बिहार सरकार ने इसे अपने जिम्मे ले लिया।

कहते हैं कि कीर्ति करने वाला ही अमर होता है। 95 वर्ष की आयु में जगन्नाथ प्रसाद साह 7 दिसंबर 1995 को यह दुनिया छोड़कर चले गये, लेकिन बेशक वे शारदा सदन पुस्तकालय और अपने सामाजिक सरोकार के कारण युग-युग तक अमर रहेंगे।

□

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वामपंथ के सच्चे सिपाही
किशोरी प्रसन्न सिंह

जयप्रकाश

सात दिसंबर 1920 को महात्मा गाँधी हाजीपुर आनेवाले थे, जहाँ हाजीपुर स्टेशन के पास ही एक मैदान में उनकी सभा होनी थी। स्टेशन से वहाँ तक जाने का रास्ता ठीक नहीं था। उस रास्ते को ठीक करने के लिए छात्रों का एक समूह अपने शिक्षक के नेतृत्व में सभा के एक दिन पहले यानी छह दिसंबर को ही पहुँच चुका था। रातोंरात रास्ते को ठीक किया गया। अगली सुबह आठ बजे महात्मा गाँधी हाजीपुर आये। उनकी महती सभा हुई। सभा में बड़ी संख्या में छात्र-नौजवान उपस्थित थे। अपने संबोधन में महात्मा गाँधी ने कहा– "बच्चो, हम सब गरीब हैं। हमारा देश गरीब इसलिए है, क्योंकि वह गुलाम है। पहले इस गुलामी से मुक्ति पा लो, फिर तुम लोग पढ़ लेना।" महात्मा गाँधी की इस बात का असर वहाँ मौजूद अनेक छात्रों पर हुआ। उन्हीं में से एक थे दसवीं कक्षा में पढ़नेवाले विद्यार्थी किशोरी प्रसन्न। उन्होंने गाँधीजी के आह्वान पर स्कूल छोड़ दिया और आजादी की लड़ाई में कूद पड़े। बाद में जयप्रकाश नारायण के साथ भी उनका बहुत ही नजदीकी रिश्ता हुआ। किसान सभा में उन्होंने स्वामी सहजानंद सरस्वती के साथ काम किया। सुभाषचंद्र बोस के लिए /फारवर्ड ब्लॉक में काम किया। भगत सिंह और क्रांतिकारी साथियों के साथ आजादी की लड़ाई में सक्रिय रहे। कितने ही साल जेल में बिताए। आजाद भारत में भी समाज के लिए उनकी लड़ाई जारी रही। हम सब उन्हें एक बड़े कॉम्युनिस्ट नेता किशोरी प्रसन्न सिंह के रूप में जानते हैं।

किशोरी प्रसन्न सिंह का जन्म वैशाली जिले के लालगंज इलाके के एक गाँव जागोडीह में 12 फरवरी 1903 ई. को एक गरीब परिवार में हुआ था। पिता खेती-बारी करते थे। ये सिर्फ दो साल के थे तभी इनकी माताजी का देहांत हो गया था। इनकी बड़ी बहन ही इनकी देखभाल करती थीं। किशोरी प्रसन्न सिंह पढ़ने में तेज थे। छात्रवृत्ति के जरिये ही इन्होंने दसवीं तक अपनी पढ़ाई की।

गांधीजी की पुकार पर किशोरीजी पूरे जोशो-खरोश के साथ स्वतंत्रता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आन्दोलन में कूदे थे। नवम्बर 2021 में गांधीजी ने पूरे देश में असहयोग आन्दोलन की घोषणा की थी। उनके नेतृत्व में चलाया जानेवाला यह प्रथम जन-आन्दोलन था। शहरी क्षेत्र के मध्यम वर्ग तथा ग्रामीण क्षेत्र में किसानों एवं आदिवासियों का व्यापक समर्थन इस आन्दोलन को था। इसमें श्रमिक वर्ग भी भागीदारी थी। इस प्रकार यह एक व्यापक जन-आन्दोलन बन गया था। फरवरी 1922 में किसानों के एक समूह ने गोरखपुर जिले के चौरी चौरा में एक पुलिस थाने पर आक्रमण कर उसमें आग लगा दी। इस घटना में तीन नागरिकों एवं 22 पुलिसकर्मियों की जान चली गई। अहिंसावादी गाँधी को यह मंजूर नहीं था। उन्होंने 12 फरवरी 1922 को राष्ट्रीय स्तर पर असहयोग आन्दोलन को वापस ले लिया। गाँधीजी के आंदोलन वापस ले लेने से छात्रों- नौजवानों को बड़ी निराशा हुई। स्कूल-कॉलेज छोड़कर आये लोगों की समझ में नहीं आ रहा था कि अब आगे क्या? किशोरी प्रसन्न सिंह भी इसी उधेड़ बुन में थे। इसी बीच गया में कांग्रेस अधिवेशन होना तय हुआ। किशोरी प्रसन्न भी गया पहुँच गए। गया कांग्रेस में ही चित्तरंजन दास ने असेम्बली के बहिष्कार के सवाल पर अध्यक्ष पद से इस्तीफा दे दिया। बाद में उन्होंने अलग पार्टी बना ली। किशोरी प्रसन्न सिंह गया से सीधे कलकत्ता चले गए।

कलकत्ता में न रहने का ठिकाना था न खाने का। हाजीपुर के ही किसी परिचित की वजह से रहने की जगह मिली। जीवन यापन के लिए कभी कलम-पैड बेचा, कभी चाय बेची, कभी बर्फ का गोला तो कभी ट्यूशन पढ़ाया। काफी दिनों तक किताब बेचने का भी काम किया। वे फुटबाल के अच्छे खिलाडी थे। कलकत्ता के मशहूर फुटबाल क्लब मोहन बगान से भी जुड़े। सभी कठिनाइयों के बीच वे अखबार जरूर खरीदते। नेशनल लाइब्रेरी में जाकर किताब पढ़ते। बड़ा बाजार में कुमार सभा नाम की संस्था से भी उनका जुड़ाव हो गया था। यह एक सांस्कृतिक संस्था थी। यह सभा एक बढ़िया पुस्तकालय भी चलाती थी। शाम का वक्त किशोरी प्रसन्न सिंह इसी पुस्तकालय में बिताते। पुस्तकालय से किताबें लाकर पढ़ते। कई बार तो काम न रहने पर पुस्तकालय में किताब पढ़ते हुए समय गुजारते। पुस्तकालय में उस समय के सभी महत्त्वपूर्ण अखबार भी आते थे जिससे उन्हें देश-दुनिया की खबर मिल जाती थी। यहीं पर उनका लगाव साहित्य से हुआ। प्रेमचंद के साहित्य से वे बहुत प्रभावित हुए।

कलकत्ता में रहते हुए उनकी राजनीतिक गतिविधियाँ भी चलती रहीं। कहीं भी किसी राजनैतिक सभा की सूचना मिलते ही वे वहाँ पहुँच जाते। उन दिनों पूरे कलकत्ता में इसी बात पर बहस हो रही थी कि गाँधीजी ने आंदोलन वापस लेकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ठीक किया या गलत। इस बात को लेकर नौजवानों में बहुत नाराजगी थी। हर जगह बैठकों का दौर जारी था। ऐसी ही किसी बैठक में उन की मुलाकात अमूल्य बोस नामक युवक से हुई जो फॉरवर्ड में काम करता था। अमूल्य ही इनको फॉरवर्ड में ले गया। फॉरवर्ड में इनको काम मिला संपादकीय विभाग में कॉपी होल्डर का। लेकिन एक समस्या खड़ी हो गई। किसी ने सवाल उठा दिया कि इनके पास ग्रैजुएट डिग्री नहीं है और ये बंगाली भी नहीं है। उस समय सुभाष चंद्र बोस फॉरवर्ड के मैनेजर थे। मामला उन तक पहुँचा तो सुभाष बाबू ने सबके सामने कहा– "यदि इन्हीं दो कारणों से कि इसके पास कोई डिग्री नहीं है और ये बिहार प्रान्त वाला है, योग्य होते हुए भी न लें, फिर हम नेशनलिस्ट किस बात के, तब तो यह ऑफिस बंद कर देना चाहिए।"

फॉरवर्ड में काम मिलने से रहने खाने की समस्या तो हल हो ही गई, राजनीतिक रूप से अधिक सक्रिय रहने का मौका मिल गया। तारकेश्वर मंदिर के महंथ के खिलाफ उसे गद्दी से हटाने के लिए सत्याग्रह चल रहा था। सत्याग्रह काफी लम्बा चला। उन दिनों मृणालकांति बसु फॉरवर्ड के संपादक थे। किसी प्रश्न पर मतभेद बढ़ जाने के कारण मृणाल बसु ने फॉरवर्ड से इस्तीफा दे दिया और आनंद बाजार पत्रिका में काम करने लगे।

फॉरवर्ड की नीति सत्याग्रह के समर्थन में थी और पत्रिका की नीति विरोध में। जो मृणाल बसु कल तक सत्याग्रह का समर्थन करते थे, उन्हीं की कलम से अब सत्याग्रह का विरोध होने लगा। किशोरी प्रसन्न सिंह को यह बात बड़ी अजीब लगी। "यह तो अपने को बेचने जैसा है। अगर यह पत्रकारिता है तब तो मुश्किल है। ईंट ढोकर पेट भरना अच्छा है बनिस्पत इसके कि जो चाहे वही हमारे दिमाग, हमारी बुद्धि, हमारे हुनर का दुरुपयोग करे।" उन्होंने कलकत्ता छोड़ने का निर्णय कर लिया। उन्होंने गाँधीजी को चिट्ठी लिखी कि वो साबरमती आना चाहते हैं। गाँधीजी ने कहा कि राजेंद्र प्रसाद से मिल लें। किशोरी प्रसन्न सिंह बिहार वापस आ गए।

कलकत्ता से लौटने पर राजेन्द्र प्रसाद से मुलाकात हुई। राजेन्द्र प्रसाद ने उन्हें बताया कि गाँधीजी ने आपके बारे में मुझे चिट्ठी लिखी है। राजेन्द्र प्रसाद के कहने पर किशोरी प्रसन्न सिंह चरखा संघ में शामिल हो गए। चरखा संघ ने उनको रुई खरीदने का काम दिया। उन दिनों चरखा संघ मिलों से रुई खरीदता था। ज्यादातर कानपुर की मिलों से। चरखा संघ के सामने एक सुझाव आया कि क्यों न सीधे किसानों से रुई की खरीद की जाये। किशोरी प्रसन्न सिंह ने बिहार के रुई उपजाने वाले कई इलाकों में घूमने के बाद दलसिंहस राय के गढ़सिसई नामक गाँव में रुई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खरीद केंद्र बनाना निश्चित किया। किशोरी प्रसन्न चरखासंघ का भी काम करते और कांग्रेस में भी सक्रिय रहते। इसी बीच इन्होंने शादी कर ली। इनकी पत्नी सुनीति भी इनके साथ सक्रिय हो गईं।

नमक आंदोलन शुरू हुआ तो किशोरी प्रसन्न सिंह वैशाली जिले में काफी सक्रिय थे। कई इलाकों में इन्होंने नौजवानों का दल भी खड़ा कर दिया था। इसी बीच कांग्रेस नेतृत्व का यह आम आदेश हुआ कि जहाँ-जहाँ सम्भव हो टैक्स देना बंद किया जाए। मुजफ्फरपुर जिला कमिटी ने इलाका चुनने की जिम्मेदारी किशोरी प्रसन्न सिंह को दी। इन्होंने वैशाली जिला का बिदुपुर इलाका चुना। इस आंदोलन का नेतृत्व किशोरी प्रसन्न सिंह और उनकी पत्नी सुनीति देवी ने किया। चौकीदारी टैक्स के खिलाफ यह आंदोलन पूरे इलाके में फैल गया। गाँव-गाँव पंचायतें बनाई गईं। स्वयं सेवक भर्ती किये गए। चौकीदारी न देने पर सम्पति जब्त करने का कानून था। लोगों ने लगान देने से इनकार कर दिया। किशोरी प्रसन्न सिंह को गिरफ्तार कर लिया गया। उनकी गिरफ्तारी के बाद उनकी पत्नी सुनीति ने मोर्चा संभाला। गाँव में फौज उतार दी गयी। लोगों के घर तोड़ दिये गए। चौखट दरवाजे उखाड़े गए। तम्बाकू और केले की खेती को बर्बाद कर दिया गया। सब हुआ पर चौकीदारी नहीं मिली। सुनीति भी गिरफ्तार कर ली गईं। फौज से टकराकर गिरफ्तार होने वाली सुनीति देवी पहली महिला क्रन्तिकारी थी। इस आंदोलन ने जनता में एक नए साहस और ऊर्जा का संचार किया। इस आंदोलन ने महिला पुरुष के भेद को तो कम किया ही, जातीय दीवार भी तोड़ी। गाँधी-इरविन समझौते के बाद सभी सत्याग्रही जेल से बाहर आये। गाँधीजी ने राजेन्द्र प्रसाद को लिखा कि सुनीति को उनके पास भेज दें। लेकिन टी.बी की बीमारी की वजह से वह जा न सकी।

कलकत्ता से लौटने के बाद किशोरी प्रसन्न सिंह ने चरखा संघ में शामिल होकर दलसिंहसराय के गढ़सिसई गाँव में रुई खरीद का केंद्र बनाया और वहीं रहकर संघ का काम करने लगे। रुई खरीदना, कतवाना सारा हिसाब किताब किशोरी प्रसन्न ही रखते थे। इस बीच इनका योगेद्र शुक्ल से संपर्क हो चुका था। सरदार भगत सिंह जब कलकत्ता जा रहे थे तो योगेंद्र शुक्ल के साथ गढ़सिसई गाँव भी गए थे। इनलोगों ने किशोरी प्रसन्न सिंह से कुछ रुपये मांगे। किशोरी प्रसन्न सिंह ने रुपये दे दिए। लेकिन जब हिसाब मिलाया तो साढ़ तेरह रुपये कम पड़ गए। इस रुपये को उन्होंने जहाँ-तहाँ खर्च में दिखा दिया पर उनके मन में ये बात चलने लगी कि उन्होंने रुपये की चोरी की है। उन दिनों 'हरिजन' में गाँधीजी का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लेख छपता था। गाँधीजी ने लिखा कि "अगर स्वयं से कोई गलती हो जाये तो उसको अपने दोस्तों से शेयर करो। शेयर कर दोगे तो आगे तुमसे गलती नहीं होगी।" किशोरीजी ने भी अपनी भूल को मित्रों के बीच स्वीकार कर लिया।

बैकुंठ शुक्ल लालगंज के मथुरापुर गाँव में प्राइमरी स्कूल के मास्टर थे। नमक सत्याग्रह की तैयारी के दौरान किशोरी प्रसन्न सिंह से उन की मुलाकात हुई थी। किशोरी प्रसन्न और सुनीतिजी से प्रभावित होकर वह भी आंदोलन में सक्रिय हो गए। असेम्बली बम कांड के बाद भगत सिंह जेल में थे, लेकिन बाहर उनकी ख्याति बढ़ रही थी। जिसका असर लाहौर काँग्रेस पर भी था। किशोरी प्रसन्न सिंह जब लाहौर काँग्रेस में थे वहाँ एक पंजाबी गीत गाया जाता था–"भगत सिंह तुम हँस-हँस फाँसी चढ़ना, इज्जत रहने देना।" 23 मार्च 1931 को भगत सिंह को फाँसी दे दी गई। देशभर में दुःख और गुस्से का माहौल था।

किशोरी प्रसन्न सिंह पहले ही कई क्रांतिकारियों के संपर्क में आ चुके थे। जिस फणीन्द्रनाथ घोष ने भगत सिंह और उनके साथियों के खिलाफ गवाही दी थी, वह बिहार के बेतिया का रहने वाला था। पंजाब के साथियो ने बिहार के साथियों को संदेश देकर पूछा कि बिहार पर जो कलंक है उसे धोओगे या ढोओगे। हाजीपुर स्टेशन के समीप ही आश्रम (गाँधी आश्रम) में मीटिंग हुई। फणीन्द्र घोष को मारना तय हुआ। सुनीति जी ने इस काम को अंजाम देने की इच्छा जाहिर की। प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी अक्षयवट राय इसपर तैयार नहीं हुए। अक्षयवट राय का कहना था कि सुनीति बहन हमारे बीच अकेली महिला हैं। संगठन के लिए उनका रहना जरूरी है। अब नाम की गोटी फेंकी गई। उसमें बैकुंठ शुक्ल का नाम आया। बैकुंठ शुक्ल ने चन्द्रमा सिंह के साथ मिलकर बिहार के कलंक को धो दिया। किसी परिचित की मुखबिरी के कारण बैकुंठ शुक्ल पकड़े गए। उनको फाँसी की सजा हुई। किशोरी प्रसन्न सिंह और सुनीति जी जब गया जेल में उनसे मिलने गए तो किसी बात पर किशोरी प्रसन्न सिंह थोड़े भावुक हो गए तो बैकुंठ शुक्ल ने कहा कि–"ऐसे मत करिए, आपको तो खुश होना चाहिये कि आपका भाई अपना कर्त्तव्य पूरा कर वहाँ जाने की तैयारी कर रहा है जहाँ एक दिन सबको जाना है।" बैकुंठ शुक्ल ने दो पंक्तियाँ कहीं जो कभी काकोरी के शहीदों ने कही थीं–

"सूख न जाये कहीं पौधा ये आजादी का
खून से अपने इसे इसलिए तर करते हैं
दर-ओ-दीवार पर हसरत से नजर करते हैं
खुश रहो अहल-ए-वतन, हम तो सफर करते हैं"।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किशोरी प्रसन्न सिंह का जय प्रकाश नारायण से बहुत ही नजदीकी रिश्ता रहा। जयप्रकाश नारायण के साथ उन्होंने लम्बे समय तक काम किया। हालाँकि बाद में दोनों के रास्ते अलग हो गए फिर भी रिश्ता बना रहा। जयप्रकाश नारायण से उनकी प्रथम मुलाकात 1931 में हुई थी। लेकिन इससे पहले ही उनकी पत्नी सुनीति देवी का संपर्क प्रभावती जी से हो चुका था। 1936 में सुनीति जी का देहांत टी. बी. के कारण हो गया। जयप्रकाश जी मीनू मसानी के साथ हाजीपुर आये और किशोरी प्रसन्न सिंह को राजगीर ले गए ताकि उनका मन कुछ हल्का हो। राजगीर प्रवास के दौरान मीनू मसानी लकड़ी तथा गोइठा का इंतजाम करते, गंगा शरण सिंह आटे की लोइया करते और जयप्रकाश नारायण लिट्टी सेंकते।

1931 के अप्रैल महीने में उग्र विचार वालों ने जयप्रकाश जी के नेतृत्व में बिहार सोशलिस्ट पार्टी बनाई तो उस मीटिंग में किशोरी प्रसन्न सिंह भी मौजूद थे। इसकी पहली बैठक पटना के बाकरगंज मुहल्ले में हुई थी। इस बैठक में जयप्रकाश नारायण, रामवृक्ष बेनीपुरी, अब्दुलबारी, अम्बिका कांत सिंह, श्यामनंदन सिंह, फूलन प्रसाद वर्मा, गंगा शरण सिंह, अवधेश्वर प्रसाद सिंह सहित अनेक लोग मौजूद थे। इसके बाद किशोरी प्रसन्न सिंह, जयप्रकाश नारायण के साथ सोशलिस्ट आन्दोलन में सक्रिय हो गए। 1934 में जब कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी बनी तो यह पार्टी ही बिहार शाखा में परिणत हो गई। 1935 में किशोरी प्रसन्न सिंह, बिहार सोशलिस्ट पार्टी के महामंत्री बने। जयप्रकाश नारायण ने उन्हें दो किताबें पढ़ने को दी थीं। 'हैंड बुक ऑफ मर्क्सिज्म' और 'थियोरेटिकल सिस्टम ऑफ कार्लमार्क्स।' इन दोनों किताबों को पढ़कर किशोरी जी बहुत प्रभावित हुए। जयप्रकाश जी यह भी चाहते थे कि किशोरी प्रसन्न बम्बई में पी.सी.जोशी के साथ रहकर पार्टी-संगठन का काम सीख लें। पर किशोरी जी बम्बई नहीं जा सके।

किशोरी प्रसन्न सिंह मार्क्सवाद से परिचित हो चुके थे। कम्युनिस्टों से भी उनका संपर्क पहले से था। कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी बनने के बाद यह संपर्क-संबंध और मजबूत हुआ। कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी और किसान सभा ने मिलकर काम करना शुरू किया तो इनका संपर्क स्वामी सहजानंद सरस्वती से भी हुआ। 1938 में सोनपुर में एक राजनीतिक ग्रीष्म विद्यालय (समर स्कूल ऑफ पॉलिटिक्स) का आयोजन किया गया। इसकी अवधि एक महीने से ज्यादा की थी। कुल 224 समाजवादी कार्यकर्ता विद्यार्थी थे। विद्यालय का उद्देश्य कार्यकर्ताओं को मार्क्सवादी सिद्धांतों से लैस करना था। जयप्रकाश जी इसके प्राचार्य थे और संचालन तथा खर्च जुटाने की जिम्मेदारी किशोरी प्रसन्न सिंह की थी। कॉम्युनिस्ट नेता शिवबचन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिंह इसके आयोजकों में थे। अध्यापक के रूप में इसमें आचार्य नरेन्द्र देव, राममनोहर लोहिया, जेड.ए.अहमद, स्वामी सहजानंद सरस्वती, सज्जाद जहीर, दिनकर मेहता, मुकुट बिहारीलाल आदि शामिल थे। विशेष रूप से भाग लेने वालों में मीनू मसानी, नंबूदरीपाद, अशोक मेहता, विश्वनाथ मुखर्जी, कमला देवी चट्टोपाध्याय, फरीद अंसारी आदि थे। विद्यार्थियों में पूर्णिया के नक्षत्र मालाकार और सरदार बलवंत सिंह, चम्पारण के केदारमणि शुक्ल और उमाशंकर शुक्ल, गया के सहदेव शर्मा, राधामोहन, मलयकृष्ण ब्रह्मचारी और बिगेश्वर मिश्र, मुंगेर के योगेन्द्र शर्मा और दयानंद झा, सारण के पशुपति सिंह, मंजर रिजवी, रामदुलारी देवी और कल्याणी देवी, मुजफ्फरपुर के विसुनदेव यादव तथा प्रसिद्ध कवि बाबा नागार्जुन, कर्पूरी ठाकुर आदि के नाम उलेखनीय हैं। ग्रीष्मकालीन विद्यालय में हाजरा बेगम की भी सभा हुई थी।

हजारीबाग जेल में किशोरी प्रसन्न सिंह की मुलाकात कॉ. सुनील मुखर्जी, रतन राय, विश्वनाथ माथुर, अली अशरफ, कार्यानंद शर्मा, विनोद मुखर्जी, योगेंद्र शुक्ल, चंद्रमा सिंह, चंद्रशेखर सिंह, राहुल सांकृत्यायन आदि से हो चुकी थी। पटना में रहते हुए सुनील मुखर्जी से उनका विशेष लगाव हो गया। सुनील मुखर्जी अक्सर उन्हें कॉम्युनिस्ट पार्टी की पत्र-पत्रिकाएँ पहुँचा दिया करते थे। जेल में रहते हुए पढ़ने का सिलसिला शुरू हुआ। सुनील मुखर्जी ने उन्हें ढेर सारी किताबें पढ़ने को दी। उन्हीं में एक किताब थी 'लेनिनवाद की समस्यायें' जिसे स्तालिन ने लिखा था। इस किताब से वो बहुत प्रभावित हुए। आंदोलन की सफलता के लिए सैद्धांतिक रूप से मजबूत होना जरूरी है। किशोरी प्रसन्न सिंह लगातार संघर्षों में शामिल तो रहे लेकिन सिद्धान्त पर उनकी पकड़ न थी। इस किताब को पढ़ने के बाद उन्हें लगा—"व्यवहार के बगैर सिद्धान्त व्यर्थ है और सिद्धान्त के बगैर व्यवहार" अंधेरे में टटोलना है। कुछ दिनों बाद इन सबों को देवली कैंप जेल भेज दिया गया। यहीं पर किशोरी प्रसन्न सिंह कॉम्युनिस्ट पार्टी में दाखिल हुए और आजीवन कॉम्युनिस्ट बने रहे।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद किशोरी जी देश के प्रमुख कम्युनिस्ट नेताओं में एक रहे। बिहार में पार्टी के नेतृत्वकर्ताओं में उनका स्थान प्रमुख था। जबकि उनका राजनीतिक कार्य-क्षेत्र हाजीपुर रहा। वे हाजीपुर विधान सभा से चुनाव भी लड़े तथा 1967 में विधायक चुने भी गए। समाज की शोषित. पीड़ित मजलूम जनता की लड़ाई लड़ते हुए 18 जून 1984 को उनका देहावसान हो गया।

❑

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निःस्वार्थ समाजसेवी सूर्यदेव प्रसाद

ऋचा कुमारी

सामाजिक संहिताएँ जीवन की जिन मान्यताओं के अनुकूलन और स्वीकृत विश्वसनीयता के आधार पर गढ़ी जाती हैं, उन्हीं आधारों पर भविष्य निर्माण होता है और उससे जुड़े व्यक्ति भविष्य-निर्माता होते हैं। आज का हाजीपुर जिन सांस्कृतिक आधुनिकताओं और आर्थिक परिवर्तनों की भूमि के रूप में जाना जाता है, उसकी पृष्ठभूमि गढ़नेवालों में सूयदिव प्रसाद का नाम उल्लेखनीय है। समय और समाज के निर्माण के लिए अपना जीवन समर्पित करनेवाले वे निःस्वार्थ समाजसेवी थे। हाजीपुर की सांस्कृतिक चेतना एवं कलाधर्मिता के वे संपन्न प्रतिपादक रहे तथा हाजीपुर के सद्भावनापूर्ण समाज के प्रभावक एवं अगली पीढ़ी के अभिभावक के रूप में जाने गये। हाजीपुर के प्रमुख विधिज्ञ और न्यायप्रिय अधिवक्ता के रूप में तो वे याद किये ही जाते हैं, समाज के विकास में सहायोगी अनेक संस्थाओं के निर्माण में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिकाओं की प्रेरक स्मृतियाँ आज भी जन मानस में बनी हुई हैं।

सूर्यदेव प्रसाद पेशे से वकील थे, संभवतः उनकी मेधा का उन दिनों कोई अन्य वकील नहीं था। कहा जाता है कि वह जिस केस को अपने हाथ में लेते थे, उसके संबंध में पहले ही घोषणा कर देते थे कि न्यायाधीश क्या निर्णय सुनायेंगे। अनेक न्यायाधीशों को उनकी विधिज्ञता पर इतना विश्वास था कि कई मामलों में वे विधान अनुकूल निर्णय देने के लिए उनकी राय लेते थी। कहा यह भी जाता है कि सूर्यदेव प्रसाद सिर्फ वैसे केस लेते थे, जो न्यायसंगत हों तथा जिनमें समाज के कमजोर तथा निर्दोष वर्ग की तरफदारी हो। उनकी स्मरणशक्ति अत्यंत तीक्ष्ण थी। वे अनेक सहायक वकीलों को अलग अलग मामलों से संबंधित दलीलें एवं तथ्य एक साथ लिखवा देते थे। धन संचय में उनकी रुचि नहीं थी। धन की उनके घर में कमी भी नहीं थी। वे जमींदार परिवार से ताल्लुक रखते थे। वे मानते थे कि इस देश का न्यायविधान संसार के अनेक देशों की अपेक्षा अधिक दोषरहित और उपयुक्त है। उनका विश्वास था कि न्याय प्रणाली के उचित उपयोग से देश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के शासन- तंत्र और समाज की सद्भावना को मजबूती दी जा सकती है।

सूर्यदेव प्रसाद अपनी आध्यात्मिक चेतना एवं परोपकारिक भावना के लिए भी जाने जाते थे। वे सत चरित्र को मनुष्य समाज के विकास का सौंदर्यपूर्ण सोपान मानते थे। उन्होंने ईश्वर की आराधना को आजीवन व्रत की तरह अपने लिए उपयोगी और प्रभावी माना। अपने पैतृक घर बागमली से पैदल साँचीपट्टी कदम घाट तक जाकर प्रतिदिन शिव मंदिर में पूजा - अर्चना करना और उसके बाद ही अपनी दिनचर्या आरंभ करने के कर्त्तव्य का उन्होने आजीवन निष्ठापूर्वक पालन किया। स्थानीय प्रतिभाओं के निर्माण एवं विकास में उन्होने सदैव उदारतापूर्वक सहयोग किया। 1966 ईस्वी में उन्होने चित्रगुप्त नाट्य परिषद् की स्थापना की। तब अनंत पूजा के दिन से नाट्याभ्यास शुरु हो जाता था। नाट्याभ्यास से लेकर चित्रगुप्त पूजा को होनेवाले प्रदर्शन तक का संपूर्ण व्यय-भार सूर्यदेव बाबू ही वहन करते थे। उन्होंने समाजसेवा, कला और शिक्षा के क्षेत्र की सर्वांगीण प्रगति के लिए अनेक संस्थाओं का गठन किया और अनेक लोगों की प्रतिभा का समुचित उपयोग कर हाजीपुर के निर्माण में अपनी भूमिका निभायी।

सूर्यदेव बाबू ने स्वतंत्रता आन्दोलन में भी भाग लिया। देश के अनेक सेनानियों से उनका करीबी संपर्क रहा। वे स्वतंत्रता सेनानियों को अनेक प्रकार से सहयोग करते थे। उनका जुड़ाव राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से था, परंतु वे गांधीजी के असहयोग आंदोलनसे अत्यंत प्रभावित थे। उन्होंने गांधीजी के आह्वान पर विदेशी वस्त्रों का परित्याग किया था और खादी वस्त्र धारण किये थे। उनकी घनिष्टता सत्येंद्रनारायण सिंह, महेश प्रसाद सिंह, कृष्णनंदन सहाय जैसे राष्ट्रहितैषियों से थी। वे लंबे सामय तक हाजीपुर नगरपालिका के अध्यक्ष रहे। अनेक बार हाजीपुर बार एसोसिएशन के सचिव एवं अध्यक्ष पद को सुशोभित किया। वे देश के पहले विधानसभा चुनाव में हाजीपुर से चुनाव भी लड़े थे, परंतु कुछ वोटों के अंतर से हार गये थे। उस चुनाव में वीरचंद् पटेल की जीत हुई थी।

सूर्यदेव प्रसाद का जन्म 1 जुलाई 1905 ईस्वी को हुआ था। उनके पिता वासुदेव प्रसाद जमींदार थे, खेती उनकी जीविका का आधार था। चार भाइयों में वे सबसे बड़े थे। वे बचपन से कुशाग्र बुद्धि एवं चंचल स्वभाव के थे। बचपन में खेल-खेल में किसी साथी के हाथों उनकी आँख में तीर लग गई, सो उनकी एक आँख पूरी तरह समाप्त हो गई। उस जगह वे पत्थर की आँख लगाते थे। स्थानीय जी एच हाई स्कूल में उनकी प्रारम्भिक शिक्षा हुई। उच्चतर शिक्षा के लिए मुजफ्फरपुर के लंगट सिंह कॉलेज में उन्होंने दाखिला लिया। बाद में स्नातक की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पढ़ाई उन्होंने भागलपुर के टीएनबी कॉलेज से पूरी की और पटना के विधि महाविद्यालय से कानून की पढ़ाई की। 1928 में उन्होंने वकालत शुरु की और जल्द ही प्रसिद्धि प्राप्त कर ली। उन्होंने अपनी जमीन में टाउन मिड्ल स्कूल, टाउन हाई स्कूल, गर्ल्स मिड्ल स्कूल तथा गर्ल्स हाई स्कूल जैसे शैक्षणिक संस्थानों की स्थापना कर शिक्षा का अलख जगाया। उनके द्वारा स्थापित ये संस्थान आज सरकारी संस्थान बन चुके हैं। वैशाली महिला कॉलेज की स्थापना में भी सूर्यदेव बाबू का उदार योगदान रहा है। हाजीपुर दातव्य औषधालय, मस्जिद चौक अवस्थित श्रीकृष्ण पुस्तकालय की स्थापना में भी उन्होंने सार्थक भूमिका निभायी थी। वे हाजीपुर के सर्वांगीण विकास के लिए सतत प्रयत्नशील रहे, इस पुण्य कार्य में धन और भूमि दान करने में कभी कोई संकोच नहीं किया।

सूर्यदेव प्रसाद संपन्न जमींदार परिवार में जन्मे थे। कहा जाता है कि हाजीपुर के बागमली मुहल्ले में अवस्थित अपने घर से प्रतिदिन साँचीपट्टी के शिव मंदिर में पूजा करने जाते हुए उन्हें दूसरे की जमीन में पाँव नहीं रखना पड़ता था। उन्होंने साँचीपट्टी के प्राचीन शिव मंदिर का जीर्णोद्धार करवाया था और कदमघाट का निर्माण करवाया था। उनके तीन अन्य भाइयों में तारकेश्वर प्रसाद मुख्तार हुए थे, कामेश्वर प्रसाद टाउन मिड्ल स्कूल में प्रधानाध्यापक रहे, जबकि छोटे भाई शिवकुमार प्रसाद ने भी हाजीपुर में वकालत की। उनका विवाह बिदुपुर प्रखंड के मथुरा गाँव में हुआ था। उनकी पत्नी का देहावसान मात्र तैंतीस वर्ष की अवस्था में हो गया था। उनके तीन बेटे हुए बृजनंदन प्रसाद, राजकिशोर प्रसाद और डाक्टर राजनंदन प्रसाद सिन्हा। बृजनंदन प्रसाद ने खेतीबारी संभाली, जबकि राजकिशोर प्रसाद पटना उच्च न्यायालय में अनुवादक हुए और राजनंदन प्रसाद सिन्हा ने राँची के मेडिकल कॉलेज में अध्यापन किया।

जब 67 वर्ष की अवस्था में वे बीमार हुए तो उन्हें पीएमसीएच में भर्ती कराया गया, लेकिन उन्हें बचाया न जा सका। 6 नवंबर 1971 को वे इस धराधाम से विदा हो गये।

सूर्यदेव बाबू अपनी लंबी समाजसेवा और सुविचारित कर्त्तव्यनिष्ठा के लिए अविस्मरणीय बने रहे। हाजीपुर के निर्माण - पुरुष सूर्यदेव बाबू की स्मृति पर गौरवबोध की अनुभूति करानेवाले संस्थान सूर्यदेव मेमोरियल स्कूल एवं उसके संस्थापक विजय कुमार उनकी सेवा परंपरा को आगे बढ़ा रहे हैं। वे अपने सद्कर्मों में सदैव जीवित रहेंगे।

संपर्क : प्रभा निकेतन, पत्रकार कॉलोनी, महनार, वैशाली

❑

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इतिहास के आईने में सुनीति देवी

जयप्रकाश

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिकाओं से इतिहास भरा पड़ा है। बिहार में ऐसी बहुतेरी क्रान्तिकारी महिलाएँ थीं, जो आजादी के आंदोलन में सक्रिय थीं। उन्हीं में एक प्रमुख नाम सुनीति देवी का है। वे बिहार के वैशाली जिले में काफी सक्रिय थीं। उन्हें लोग आज भी एक क्रान्तिकारी के रूप में याद करते हैं। वैशाली जिले में उन्होंने अनेक आंदोलनों का नेतृत्व किया था। उनमें टैक्स-बन्दी आंदोलन प्रमुख है। पर्दा-प्रथा के खिलाफ भी उन्होंने अभियान चलाया था। भगत सिंह के खिलाफ गवाही देने वाले फणीन्द्र घोष को मारने के लिए उन्होंने अपना नाम प्रस्तावित किया था, जिसे उनके साथियों ने स्वीकार नहीं किया। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद और जयप्रकाश नारायण जैसे बड़े नेताओं से उनका संपर्क था। टैक्स-बन्दी आंदोलन की सफलता के बाद महात्मा गाँधी ने राजेन्द्र प्रसाद को खत लिखकर सुनीति देवी को अपने पास बुलाने की इच्छा प्रकट की थी।

1927 में अपनी शादी के बाद सुनीति देवी आजादी के आंदोलन में शामिल हो गयी थीं। उनके पति किशोरी प्रसन्न सिंह पहले से स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय थे। शादी के तुरंत बाद ही वे लोग प्रशिक्षण के लिए हुबली चले गए, लेकिन वहाँ महिलाओं के रहने की जगह नहीं थी। सुनीतिजी ने कहा कि मुझे मर्द बनाकर रखो। उन्होंने अपने बाल कटवा लिए, दुगनी सिलाई देकर अपने लिए कपड़े बनवा लिए और नौजवान बनकर वहाँ रहने लगीं। लगभग नौ महीने तक वे मर्दाना वेश में रहीं। हुबली में वैचारिक प्रशिक्षण के साथ-साथ शारीरिक प्रशिक्षण भी दिया जाता था, जहाँ वह कटार चलाने में पारंगत हो गई थीं।

सुनीति देवी पर्दा-प्रथा और छुआछूत के खिलाफ भी अभियान चलाती रही थीं। वे पदयात्रा करतीं, गाँव-गाँव जातीं, महिलाओं को इसके बारे में समझातीं और जागरूक करतीं। गाँव में हैजा, प्लेग आदि होने पर या किसी भी अन्य तरह की समस्याओं में वे लोगों की सहायता व सेवा करतीं। पर्दा-प्रथा के विरोध के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कारण परिवार में उनकी इतनी अनबन हो गयी कि उन्हें घर छोड़ना पड़ा और वे सोन्धो गाँव में बने आश्रम में रहने लगीं। इस आश्रम को डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने बनवाया था। इसी आश्रम में उनकी मुलाकात जवाहरलाल नेहरू से हुई। जब नेहरूजी बिहार आये तो उन्होंने कोई गाँव देखने की इच्छा जाहिर की। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने उन्हें सोन्धो आश्रम भेजा था। बाद में भी नेहरूजी से उनका संपर्क बना रहा। लाहौर कांग्रेस के लिए जवाहरलाल नेहरू ने सुनीति देवी को आयोजक बनाकर एक महीना पहले ही भेजा था, ताकि महिला स्वयंसेवकों का एक संगठन तैयार किया जा सके। उसी लाहौर कांग्रेस में पूर्ण स्वराज का प्रस्ताव पास हुआ था। उस समय भगत सिंह जेल में थे, फिर भी उनका गहरा असर लाहौर कांग्रेस पर था।

सुनीति देवी ने एक राष्ट्रीय परिवार की स्थापना की थी, जिसमें बहुत सारी महिलाएँ शामिल थीं। इस राष्ट्रीय परिवार की अनेक महिला सदस्य हाजीपुर गाँधी आश्रम में सुनीतिजी के साथ रहकर आजादी के आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभा रही थीं। प्रसिद्ध क्रान्तिकारी बैकुंठ शुक्ल की पत्नी राधिकाजी भी इस परिवार की सदस्य थीं। सुनीति देवी के नेतृत्व में ये महिलाएँ विदेशी कपड़ों की होलिका और शराब की दुकानों पर पिकेटिंग करती थीं। नमक सत्याग्रह के समय आश्रम में महिला स्वयंसेवकों की संख्या में काफी वृद्धि हो गई थी। तब सुनीति देवी ही आश्रम को संभालती थीं।

1930 में टैक्स-बन्दी आंदोलन हुआ था। कांग्रेस नेतृत्व का आम आदेश हुआ कि जहाँ भी संभव हो, टैक्स देना बंद कर दिया जाये। सुनीति देवी और किशोरी प्रसन्न सिंह ने विदुपुर में आंदोलन शुरू किया। सुनीति देवी गाँव-गाँव घूमतीं और लोगों को चौकीदारी टैक्स-बन्दी के बारे में बतातीं। धीरे-धीरे लोग इस आंदोलन से जुड़ने लगे। छोटी-बड़ी बैठकें होने लगीं, मर्दों की भी और औरतों की भी। गाँव-गाँव में पंचायतें बनाई गईं। इन पंचायतों को लेकर पूरे इलाके का एक संगठन बनाया गया। स्वयंसेवक भर्ती किये गए। उनके जत्थे बनाए गए। छः गाँव में ही 1300 स्वयंसेवक संगठित हो गये। सबके लिए पोशाक संभव नहीं था तो सुनीति देवी ने सबके लिए लाल टोपियाँ सिल दी थीं। किशोरी प्रसन्न सिंह की गिरफ्तारी के बाद सुनीति देवी ने अकेले ही मोर्चा संभाला। टैक्स-बन्दी का आंदोलन आजादी की लड़ाई से जुड़ गया। इलाके में मिलिट्री आ गई। चौकीदारी वसूलने के नाम पर उन्होंने पूरे इलाके को तबाह करना शुरु कर दिया। चौकीदारी टैक्स देने से इनकार करने पर वे चौखट-दरवाजा उखाड़ते, चौकी-खटिया उठाकर ले

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जाते। यह पूरा इलाका तंबाकू की खेती वाला है। वे एकड़ के एकड़ तंबाकू के खेतों को घोड़ों से रौंदवा देते। केले की खेती को बर्बाद कर दिया जाता। छप्पर को बाँस से पिटवाते। इसके बावजूद इस इलाके से टैक्स नहीं मिले। यहाँ के चौकीदारों ने इस्तीफा दे दिया और जो प्रेसीडेंट थे, उन्हें इस्तीफा देने के लिए मजबूर कर दिया गया। सुनीति देवी को गिरफ्तार कर मुजफ्फरपुर जेल भेज दिया गया। उनकी गिरफ्तारी ने जनता में साहस और उत्साह भर दिया। आन्दोलन और भी तीव्र हो गया। गाँधी-इरविन समझौते के बाद इनकी रिहाई हुई। इस पूरे प्रकरण की खबर महात्मा गाँधी तक पहुँची। उन्होंने राजेन्द्र प्रसाद को खत लिखा कि सुनीति को उनके पास भेज दें।

यद्यपि सुनीति देवी गाँधी जी के सत्याग्रह आंदोलन में सक्रिय थीं, लेकिन उनका संपर्क और संबंध क्रांतिकारियों से ज्यादा था। भगत सिंह के दल में काम करने वाले बिहार के लगभग सभी साथियों से उनका संपर्क था। हाजीपुर गाँधी आश्रम में क्रांतिकारियों का आना-जाना लगातार बना रहता था। बैकुंठ शुक्ल तो सुनीति जी के साथ काम ही करते थे। भगत सिंह की फाँसी का सुनीति देवी पर बहुत असर हुआ था। वे इस बात को भूल नहीं पा रही थीं। भगत सिंह के खिलाफ गवाही देने वाला फणीन्द्र घोष बेतिया का रहने वाला था। जब पंजाब के साथियों ने बिहार के साथियों को इस सम्बन्ध में संदेश भेजा तो फणीन्द्र घोष को मारने के लिए एक बैठक बुलाई गई। यह बैठक गाँधी आश्रम, हाजीपुर में बुलाई गई थी। सुनीति देवी ने इस काम को अंजाम देने के लिए अपने नाम का प्रस्ताव दिया और साथियों से इसकी इजाजत मांगी। प्रसिद्ध क्रांतिकारी अक्षयवट राय ने सुनीतिजी के इस प्रस्ताव से अपनी असहमति प्रकट कर दी।अक्षयवट राय ने कहा कि संगठन के लिए सुनीति बहन का रहना अत्यंत जरूरी है। बाकी लोग भी इस काम के लिए तैयार थे। अंत में गोटी लगाई गई जिसमें बैकुंठ शुक्ल का नाम आया। बैकुंठ शुक्ल ने इस काम को अंजाम दिया, गिरफ्तार हुए और फाँसी चढ़ गए।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद और जयप्रकाश नारायण से भी सुनीति देवी के अच्छे रिश्ते थे। टैक्स-बन्दी आंदोलन के बाद जब महात्मा गाँधी ने सुनीति देवी को अपने पास बुलाने के लिए खत लिखा तो राजेन्द्र प्रसाद ने उन्हें भेजने का सारा प्रबंध कर लिया था। वहाँ जाने के क्रम में जब सुनीतिजी पटना में थी तो कांग्रेस के बड़े नेता ब्रजकिशोर प्रसाद को सुनीतिजी के स्वास्थ्य को लेकर कुछ संदेह हुआ। उन्होंने राजेन्द्र प्रसाद से कहा कि सुनीति को डॉक्टर से दिखा दें। राजेन्द्र बाबू सुनीति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जी को डॉक्टर के पास ले गए। जाँच में पता चला कि इन्हें तो टी.बी. है। उन्हें अस्पताल में भर्ती होना पड़ा। वो गाँधीजी के पास जा न सकीं। प्रभावती जी से भी सुनीति जी की मित्रता हो गई थी। जयप्रकाश नारायण जब भी हाजीपुर जाते सुनीति जी से जरूर मिलते। सुनीति देवी अक्सर क्रन्तिकारी साथियों को यह गीत गाकर सुनातीं :

प्राणों की इतनी ममता
ओ स्वतन्त्रता का सौदा
बिना तेल के दीप जलाने
का है कठिन मसविदा
मोती बिखराते सी बीतेंगी
सुंदर जीवन की घड़ियाँ
बिना चढ़ाये शीश नहीं
टूटेंगी माँ की कड़ियाँ
दुनिया में जीने का है
सबसे सुंदर मधुर तकाजा
ऐ शहीदो उठने दो अपना
फूलों भरा जनाजा।

अंततः जेल में लगी टी.बी. की बीमारी के कारण फरवरी 1936 ई0 में सुनीति देवी का निधन हो गया।

❑

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हरिमोहन झा : एक अकथ कहानी

मोहन मंगलम्

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर ने कभी लिखा था–

"कविता में कवि कहाँ छिपा है
इसका सुराग नहीं मिले
यह कलाकार की सच्ची स्थिति है
और इसे मैंने आज तक निभाया था
लोग समझते रहे कि
मैं देश का दर्द जानता हूँ
मगर दर्द मैंने अपना ही गाया था।"

मैथिली साहित्य के सिरमौर तथा दर्शन शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान प्रो. हरिमोहन झा की कालजयी रचनाओं को पढ़ते हुए कुछ ऐसी ही अनुभूति होती है।

हरिमोहन झा ने तत्कालीन सामाजिक-धार्मिक रूढ़ियों, विसंगतियों, विद्रूपताओं, अंधविश्वासों और पाखण्ड को अपनी रचनाओं में अत्यंत ही सरल-सहज शब्दों में प्रस्तुत करते हुए हास्य व्यंग्यपूर्ण शैली में उन पर जबर्दस्त चोट की तो पाठकों ने उसे हाथोंहाथ लिया। प्रो. हरिमोहन झा रचित मैथिली साहित्य ने लोकप्रियता के नये कीर्तिमान गढ़ डाले।

प्राचीन युग में विद्यापति ने मैथिली काव्य को उत्कर्ष के जिस उच्च शिखर पर आसीन किया था, हरिमोहन झा ने आधुनिक मैथिली गद्य को उसी उच्च स्थान पर पहुँचा दिया। मैथिली में आज भी सर्वाधिक खरीदी और पढ़ी जाने वाली पुस्तकें प्रो. हरिमोहन झा की ही हैं। मैथिली क्षेत्र के बाहर देश भर में कोई यदि आज मैथिली साहित्य के बारे में जानता है तो हरिमोहन झा की ही बदौलत।

हरिमोहन झा का जन्म 18 सितम्बर 1908 को बिहार के तत्कालीन मुजफ्फरपुर (सम्प्रति वैशाली) जिले के बाजितपुर गाँव में हुआ था। उनके पिताजी पं. जनार्दन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

झा 'जनसीदन' मैथिली और हिंदी के लब्धप्रतिष्ठ कवि-साहित्यकार थे। उन्होंने लंबे समय तक दरभंगा महाराज द्वारा संपोषित मैथिली पत्रिका 'मिथिला मिहिर' का सम्पादन किया। वे दरभंगा में रहते थे। ऐसे में हरिमोहन झा ने बचपन से ही मिथिलांचल की संस्कृति को बेहद करीब से देखा। वहीं पिताजी के सम्पादक होने के कारण उन्हें कम उम्र से ही अनेक विद्वानों और लेखकों के साथ उठने-बैठने का मौका मिला। हरिमोहन झा ने भी अपना अधिकतर साहित्य मैथिली में ही लिखा, जिसे बाद में हिंदी और दूसरी भाषाओं में भी अनूदित किया गया। मैथिली साहित्य में हरिमोहन झा की लेखनी का जादू आज भी बरकरार है। हालांकि अफसोस की बात है कि हरिमोहन झा एक 'अकथ कहानी' बने हुए हैं।

उनकी कृतियों में 'कन्यादान', 'द्विरागमन', 'प्रणम्य देवता','रंगशाला', 'बाबाक संस्कार', 'चर्चरी', 'एकादशी', 'खट्टर ककाक तरंग' और 'जीवन यात्रा' प्रमुख हैं। उनकी आत्मकथा 'जीवन-यात्रा' सन् 1984 में प्रकाशित हुई। यह उनकी एकमात्र पुस्तक है जो मैथिली अकादमी से प्रकाशित हुई और इसके लिए उन्हें सन् 1985 में (मरणोपरांत) साहित्य अकादमी पुरस्कार प्रदान किया गया।

हरिमोहन झा को अक्षरज्ञान से लेकर छंदों तक का परिचय पिता पं. जनार्दन झा 'जनसीदन' ने कराया। कविहृदय पिता के सान्निध्य का ही प्रसाद था कि हरिमोहन झा काफी कम उम्र में ही कविताएँ लिखने लगे। गाँव के कर्तार स्कूल तथा पचगछिया और दरभंगा में शुरुआती शिक्षा के बाद बहुमुखी प्रतिभा की बदौलत मुजफ्फरपुर के बी. बी. कॉलेजिएट स्कूल में सीधे मैट्रिक में उनका एडमिशन हुआ। मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास करने पर उन्हें डिस्ट्रिक्ट स्कॉलरशिप मिली। इसके बाद उन्होंने मुजफ्फरपुर के जी .बी. बी. कॉलेज से आईए की पढ़ाई की और 1927 के कंबाइंड स्टेट इंटरमीडिएट एग्जामिनेशन में बिहार-उड़ीसा में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करने पर स्वर्णपदक से सम्मानित हुए। इसके बाद उन्होंने पटना कॉलेज से इंग्लिश ऑनर्स के साथ स्नातक किया। इस दौरान 1928 में इलाहाबाद में आयोजित अखिल भारतीय वाद-विवाद प्रतियोगिता में अपने कॉलेज की टीम का नेतृत्व करते हुए उन्होंने भारतीय संस्कृति की विशेषताओं पर सारगर्भित व तर्कपूर्ण व्याख्यान दिया तथा विजेता बने। इसके बाद तो कॉलेज में हरिमोहन झा की प्रतिभा की धूम मचनी शुरू हो गयी। 1932 में दर्शनशास्त्र से एम.ए. में फर्स्ट क्लास फर्स्ट करने पर उन्हें स्वर्ण पदक से अलंकृत किया गया। इसके बाद उन्होंने बी.एन.कॉलेज पटना में दर्शनशास्त्र के व्याख्याता से नौकरी की शुरुआत की तथा क्रमशः पटना कॉलेज में प्राध्यापक, पटना विश्वविद्यालय में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के रिसर्च प्रोफेसर बने।

हरिमोहन झा का शुरू से ही मैथिली साहित्य की तरफ रुझान था। व्यंग्य उनके लेखन का सौंदर्य था तो हास्य उनका स्वभाव और प्रत्युत्पन्नमतित्व उनकी सहज प्रतिभा। 1933 में मैथिली में उनका पहला उपन्यास 'कन्यादान' प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में उन्होंने मिथिला की लोक संस्कृति को हू-ब-हू उतार दिया था, जिससे मिथिलांचल के घर-घर में लोग उन्हें जानने और पहचानने लगे। देखते ही देखते उनकी प्रसिद्धि मिथिलांचल और बिहार की परिधि को पार कर गयी तथा देश के लोकप्रिय साहित्यकारों में उनकी गिनती होने लगी। 'कन्यादान' के प्रकाशन के करीब तीन दशक बाद इस उपन्यास पर आधारित फिल्म भी बनी, जिसे पहली मैथिली फिल्म होने का गौरव हासिल हुआ।

प्रो. हरिमोहन झा तत्कालीन समाज में व्याप्त विसंगतियों, विद्रूपताओं और रूढ़ियों से काफी व्यथित थे। तभी तो वे अपने पहले उपन्यास 'कन्यादान' की भूमिका में लिखते हैं, "जो समाज बेटी को जड़ पदार्थ की तरह दान करने में कुंठित नहीं होता, जिस समाज के सूत्रधार लोग बेटे को पढ़ाने के लिए हजारों-हजार रुपये पानी में बहा देते हैं और बेटी के लिए दो पैसे का स्लेट खरीदना भी जरूरी नहीं समझते, जिस समाज में बीए पास पति की जीवन संगिनी ए.बी. तक नहीं जानती है, जिस समाज को दाम्पत्य जीवन की गाड़ी में सर्कस के घोड़े के साथ निरीह बछिया को जोतने में कोई ममता नहीं महसूस होती, उस समाज के महारथी लोगों के कठोर हाथों में यह पुस्तक सविनय, सानुरोध और सभय समर्पित।"

हरिमोहन झा ने अपनी साहित्यिक कृतियों के माध्यम से समाज में व्याप्त समस्याओं को प्रमुखता के साथ केवल उजागर ही नहीं किया, बल्कि उनका यथोचित समाधान भी सुझाया। तभी तो उनके प्रथम उपन्यास 'कन्यादान' के प्रमुख पात्र सीसी मिश्रा जो आधुनिकता के आंगन में पाश्चात्य संस्कृति में साँस लेते नजर आते हैं, वे दूसरे उपन्यास 'द्विरागमन' तक आते-आते मिथिला की परम्परा के सामने न केवल नतमस्तक दिखायी देते हैं, बल्कि उसे अंगीकार करने को भी मजबूर हो जाते हैं। वहीं पर्याप्त शिक्षा के अभाव तथा आधुनिक रहन-सहन के तौर-तरीकों से अनजान होने के कारण सुहागरात में ही पति द्वारा ठुकरा दिये जाने वाली 'कन्यादान' की बुच्ची दाई 'द्विरागमन' तक आते-आते अंग्रेजीदां पति को अपनी अंगुली पर नचाने के साथ ही खुद भी हाव-भाव तथा बात-व्यवहार में अंग्रेजी मेम के भी कान काटती नजर आती है। हरिमोहन झा ने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मैथिली में लिखी अपनी प्रसिद्ध व्यंग्य कृति 'खट्टरककाक तरंग' में खट्टर काका के रूप में विनोद-परंपरा के एक जीवंत पात्र का सृजन किया, जिनकी बातें एक से एक अनूठी, निराली और चौंकाने वाली होती हैं। पाखंड-खंडन में वे शास्त्रोक्त प्रमाणों और व्यंग्य-वाणों की ऐसी झड़ी लगा देते हैं, जिनका जवाब नहीं। हरिमोहन झा ने कई कविताएँ भी लिखीं, जैसे 'माछ', 'ढला झा', 'बुचकुन बाबा', 'पंडित ओ मेम' आदि। इन कविताओं के जरिये उन्होंने समाज के रूढ़िवादी तबकों पर जोरदार हमला किया।

हरिमोहन झा की पत्नी सुभद्रा झा भी प्रगतिशील विचारधारा की महिला थीं। उन्होंने पति को हमेशा लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। 1982 में पत्नी के देहावसान के बाद प्रो. हरिमोहन झा पटना से अपने बेटे के पास दरभंगा चले गये, जहाँ 23 फरवरी 1984 को उनका निधन हो गया।

मैथिली के साहित्यकार तथा साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित राजमोहन झा अपने पिता प्रो. हरिमोहन झा की मैथिली कहानियों के संग्रह 'बीछल कथा' की भूमिका में लिखते हैं :

"मैथिली में रातोंरात प्रसिद्ध होने का सौभाग्य जिस लेखक को मिला, वे थे हरिमोहन झा। 'मिथिला' के संपादक बाबू भोला दास एक दिन हरिमोहन झा के पास पहुँचे और जल्दी से जल्दी कुछ लिख देने का निवेदन किया। वे हरिमोहन झा की गर्दन पर सवार हो गये और कहने लगे कि 'मिथिला' का अंतिम फर्मा आपके लेख के लिए ही रुका हुआ है। उस समय हरिमोहन झा की छोटी बहन की शादी की बात चल रही थी। गाँव की औरतों में इस प्रसंग में हो रही चर्चा को आधार बनाकर उन्होंने 'कनेयाँमाइक ओरिआओन' शीर्षक से एक अध्याय लिख दिया और भोला बाबू से पिंड छुड़ाया। सन् 1929 में 'मिथिला' में यह 'कन्यादान' शीर्षक से छपा और छपते ही प्रसिद्ध हो गया। इसके बाद 'कन्यादान' का दूसरा अध्याय 'सभागाछीक दृश्य' 'मिथिला' में 'कन्यादान' शीर्षक से ही प्रकाशित हुआ और तीसरा अध्याय 'तार कोना पठाओल' अपने इसी शीर्षक से प्रकाशित हुआ। इन तीन अध्यायों के बाद किसी कारणवश हरिमोहन झा आगे के अंश नहीं लिख सके, मगर 'मिथिला' के पाठकों में इसे पढ़ने की भूख जग चुकी थी और वे आगे का अंश छापने के लिए प्रकाशक को पत्र पर पत्र लिखे जा रहे थे। हालांकि 'मिथिला' का प्रकाशन तो एक साल के बाद बंद हो गया, मगर प्रकाशक के लगातार अनुरोध पर हरिमोहन झा को 'कन्यादान' की गाड़ी आगे बढ़ानी पड़ी। अंततः 1933 में उपन्यास 'कन्यादान' पुस्तक के रूप में प्रकाशित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हुआ। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि यह उपन्यास मैथिली पाठकों की आकांक्षा और आग्रह का ही प्रतिफल था।"

प्रेमचंद और हरिमोहन झा

जिस तरह प्रेमचंद बिछावन पर पेट के बल सोकर लिखते थे, उसी तरह हरिमोहन झा भी लिखते थे। प्रेमचंद जिस तरह खुलकर हँसते थे, उसी तरह हरिमोहन झा भी हँसते थे। प्रेमचंद ने हिंदी साहित्य में एक नव सामाजिक चेतना का सूत्रपात किया, एक नया लक्ष्य दिया, वही काम हरिमोहन झा ने मैथिली में किया। जिस तरह प्रेमचंद के अनेक पात्र हमारे लिए अविस्मरणीय हो गये हैं, उसी तरह हरिमोहन झा के सभी पात्र पाठकों के मन पर सदा-सर्वदा के लिए अमिट छाप छोड़ जाने वाले हैं। अपने तत्कालीन परिवेश में प्रेमचंद और हरिमोहन झा दोनों ही का चिंतन क्रांतिकारी था। जिस तरह हरिमोहन झा पर उस समय की मैथिली संस्कृति और रीति-नीति के विध्वंसक होने का आरोप लगा, उसी तरह प्रेमचंद के कुछ आलोचकों ने भी उनके खिलाफ दुष्प्रचार किया था। प्रेमचंद से रूढ़िवादी और पुरातन पंथी व्यक्ति रुष्ट रहते थे क्योंकि वे अपने लेखन में प्रतिक्रियावादी तत्वों पर निसंकोच आक्रमण करते थे। कुछ ऐसा ही हाल हरिमोहन झा का भी था। जिस प्रकार प्रेमचंद को 'उपन्यास सम्राट' की संज्ञा किसी संस्था या सभा ने नहीं दी, उसी प्रकार हरिमोहन झा को 'हास्य रसावतार' या 'हास्य रसाचार्य' या 'हास्य व्यंग्य सम्राट' अथवा 'गल्प सम्राट' की उपाधि किसी संस्था या सभा की ओर से नहीं दी गयी, बल्कि उनके लेखन ने ही उनके लिए ये सारी उपाधियाँ जुटायीं।

हरिमोहन झा और देवकी नंदन खत्री

हरिमोहन झा ने मैथिली के लिए वह कार्य किया जो हिन्दी के लिए देवकीनंदन खत्री ने किया था। खत्रीजी की 'चंद्रकांता' और 'चंद्रकांता संतति' ने जिस तरह विशाल पाठक वर्ग का तेजी से निर्माण किया, कुछ वैसा ही चमत्कारी प्रभाव हरिमोहन झा के मैथिली उपन्यास 'कन्यादान' और 'द्विरागमन' का भी था। जिस तरह खत्री जी के पाठकों में सभी वर्ग के लोग होते थे, सामान्य और जमींदार साधारण अक्षर ज्ञान वाले निर्धन लोग, उसी तरह हरिमोहन झा के पाठक वर्ग में भी साहब से लेकर चपरासी तक होते थे। कहा जाता है कि 'चंद्रकांता' और 'चंद्रकांता संतति' को पढ़ने के लिए बड़ी संख्या में लोगों ने हिन्दी सीखी थी, वैसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही हरिमोहन झा के विषय में यह सर्वविदित है कि निरक्षर व्यक्तियों का भी एक समूह था जो उनकी रचनाओं का आस्वादन करता था। कोई एक साक्षर व्यक्ति उनकी रचनाओं को पढ़ता और झुंड के झुंड निरक्षर लोग उस रचना का आनंद उठाते।

खत्री जी अपने युग के ऐसे एकमात्र लेखक थे जो अपने पाठकों की संख्या लगातार बढ़ते हुए देखने का सुख प्राप्त कर सके, यही सुख हरिमोहन झा को भी जीवन भर मिला। दोनों ही साहित्यकारों ने अपने समय के साहित्य को अपनी-अपनी तरह से एक नया मोड़ दिया। इसमें हरिमोहन झा ने हास्य और व्यंग्य की धारा बहाकर पाठकों को अपना बनाया।

इतिहास रचने वाली कृतियाँ

1933 में 'कन्यादान' (उपन्यास), 1943 में 'द्विरागमन' (उपन्यास), 1945 में 'प्रणम्य देवता' (कथा-संग्रह),1949 में 'रंगशाला' (कथा-संग्रह), 1960 में 'चर्चरी' (कथा-संग्रह) तथा 1948 ई. में 'खट्टर ककाक तरंग' (व्यंग्य)।

साहित्यप्रेमियों के आग्रह पर हरिमोहन झा ने अवकाश प्राप्ति के बाद अपनी प्रसिद्ध व्यंग्य कृति 'खट्टरककाक तरंग' को नये सिरे से सजा-संवारकर अभिनव रूप में हिन्दी में प्रस्तुत किया, जो 1971 ई. में 'खट्टर काका' नाम से प्रकाशित हुआ। 1984 में 'जीवन यात्रा' (आत्मकथा)।

सम्मान का कीर्तिमान

साहित्य अकादमी पुरस्कारों के इतिहास में इसे अनूठा संयोग ही कहा जायेगा जब एक ही परिवार के चार लोगों को इस सर्वोत्कृष्ट सम्मान से अलंकृत होने का सौभाग्य मिला। मैथिली साहित्य के अप्रतिम हस्ताक्षर प्रो. हरिमोहन झा को उनकी आत्मकथा 'जीवन यात्रा' के लिए 1985 में मरणोपरांत साहित्य अकादमी पुरस्कार प्रदान किया गया। वहीं उनके सबसे बड़े पुत्र राजमोहन झा 1996 में मैथिली कहानी संग्रह 'आइ काल्हि परसों' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित हुए। इसके 19 वर्ष बाद 2015 में प्रो. हरिमोहन झा के सबसे छोटे बेटे मनमोहन झा को उनके कहानी संग्रह 'खिस्सा' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार दिया गया। इससे पहले प्रो. हरिमोहन झा के दामाद शैलेन्द्र मोहन झा को 1991 में सुबोधचन्द्र सेनगुप्त की अंग्रेजी में लिखी मूल कृति 'शरदचन्द्र : मैन एंड आर्टिस्ट' पर मैथिली में लिखी समालोचना 'शरदचन्द्र : व्यक्ति एवं कलाकार' के लिए

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साहित्य अकादमी का पुरस्कार प्रदान किया गया था।

संस्मरण

नारी जागरण के प्रबल पक्षधर, पर्दा प्रथा के सख्त खिलाफ

बाजितपुर में प्रो. हरिमोहन झा के पड़ोस में ही विजय भूषण कुमर (मुन्ना बाबू) का घर है। हरिमोहन झा पटना में नौकरी करते थे और मुन्ना बाबू भी वहीं रहकर पढ़ते थे, सो कई बार उनके डेरा पर उनसे मिलने चले जाते थे।

मुन्ना बाबू गुजरे जमाने को याद करते हुए कहते हैं, "तब गंगा नदी पर पुल नहीं बना था। हाजीपुर से पटना जाने के लिए नाव या स्टीमर का ही सहारा था। एक बार की बात है। मैं भी हरिमोहन काका के साथ पटना जा रहा था। किन्हीं कारणों से उस दिन पहलेजा घाट से पटना के लिए स्टीमर की सेवा उपलब्ध नहीं थी। ऐसे में कोनहारा घाट से नाव ही एकमात्र सहारा थी। हरिमोहन काका को नाव से गंगा पार करने में डर लग रहा था। खैर, जैसे-तैसे वे राजी हुए और नाव पर जूते उतारकर बैठ गये। पटना में उतरते समय जूते में पैर नहीं आने से वे काफी परेशान नजर आ रहे थे। कहने लगे, मेरा जूता किसी ने बदल लिया। मैंने देखा तो वे बायें पैर के जूते में दाहिना पैर घुसाने की कोशिश कर रहे थे। मैंने जूतों को सीधा करके उनके सामने रख दिया तब उनकी परेशानी खत्म हुई। कई बार तो वे कुर्ता भी उल्टा पहनकर उसमें पॉकिट खोजने लगते और न मिलने पर परेशान हो जाते।

हरिमोहन झा आधुनिक विचारों के हिमायती तथा नारी जागरण के प्रबल पक्षधर थे। महिलाओं का पर्दा करना उन्हें बिल्कुल पसंद नहीं था। गाँव में घर के सामने ही उनका आम का बगीचा था। एक दिन उन्होंने काकी से कहा कि आप खुद लग्गी से आम तोड़कर लायेंगी, तभी मैं खाऊँगा। पर्दा प्रथा का हवाला देते हुए काकी ने मना किया तो वे अड़ गये। आखिरकार काकी को आम तोड़कर लाना ही पड़ा।

मुन्ना बाबू कहते हैं, "हरिमोहन काका मुझे बहुत मानते थे। उन दिनों मैं इंटरनेशनल वूल सेक्रेटेरियेट की भारतीय शाखा में टेक्निकल ऑफिसर था। मेरी पोस्टिंग बम्बई में थी। एक दिन फोन पर उन्होंने बम्बई आने के बारे में बताया और वहाँ रह रहे मिथिलांचल के लोगों का गेट टुगेदर जैसा कोई आयोजन करने की भी बात कही। मैंने मिथिला मंडल के तत्कालीन अध्यक्ष विमल चंद्र दास से इस बारे में चर्चा की और गेट वे ऑफ इंडिया के पास स्थित एक होटल में कार्यक्रम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आयोजित किया गया। इस कार्यक्रम में परिचय देते हुए जब मैंने अपना नाम, गाँव और पिताजी का नाम बताया तो हरिमोहन काका ने मुझे टोकते हुए कहा, यह भी तो बताइए कि आप मेरे भतीजे हैं।"

हरिमोहन झा, दिनकर और जस्टिस सतीशचंद्र मिश्र की तिकड़ी

प्रो. हरिमोहन झा की भतीजी डॉ. रमा झा कहती हैं, काकाजी जब पटना में होते तो डेरा पर हिन्दी, मैथिली और दर्शनशास्त्र के विद्वानों की मंडली जुटती थी। पटना में उन दिनों प्रो. हरिमोहन झा, रामधारी सिंह दिनकर और पटना उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश जस्टिस सतीशचंद्र मिश्र की तिकड़ी काफी प्रसिद्ध थी। दादाजी के मित्र तथा पुस्तक भंडार के संस्थापक आचार्य रामलोचन शरण जब भी पटना आते तो काकाजी निश्चित रूप से उनसे आशीर्वाद लेने जाया करते। काकाजी को शतरंज खेलने का बड़ा शौक था। वे प्रतिद्वंद्वी से पूछते कि तुम किस प्यादे से मात खाओगे और फिर उसी प्यादे से मात देते भी। उन्होंने गाँव में जब पक्का घर बनवाया तो वहाँ भी सीमेंट की बेंच पर शतरंज की बिसात बनवायी।

काकाजी को सब्जियों का बड़ा चाव था। बाजितपुर में रहने के दौरान रविवार और बृहस्पतिवार को पड़ोस के गाँव बरडीहा में लगने वाले हाट से खूब सारी सब्जियाँ खरीदकर लाते। पटना में भी मुसल्लहपुर हाट से तरह-तरह की सब्जियाँ लाते। घर के बाहर से कोई कबाड़िन गुजरती तो उससे सारी सब्जियाँ खरीद लेते। जब पटना से बाहर जाते तो वहाँ से भी टोकरी भरकर सब्जियाँ लाना नहीं भूलते थे। काकाजी को मछली खाने का भी काफी शौक था। घर में एक ड्रम था जिसमें मछलियाँ रखी रहतीं। छठ और चौकचंदा के अलावा रोज ही मछली बनती थी। गाँव में रहने के दौरान बरैला चौड़ से चाहा व अन्य चिड़िया भी मँगवाते। खाने के साथ ही उन्हें खिलाने का भी शौक था। भोजन के समय जो भी होता, उसे बिना खाना खिलाये नहीं जाने देते थे।

रमा झा कहती हैं, "काकाजी परीक्षाओं की कॉपियाँ देखते समय बड़ी ही उदारता से नंबर देते थे। अपने विद्यार्थी जीवन में सफलताओं के कीर्तिमान बनाने वाले काकाजी का मानना था कि अच्छे अंक पाने से विद्यार्थियों का मनोबल बढ़ता है और इससे उत्साहित होकर वे और अधिक परिश्रम करते हैं, जिससे उनके स्वर्णिम भविष्य के दरवाजे खुल जाते हैं।"

प्रो. हरिमोहन झा की सादगी को याद करते हुए रमा झा कहती हैं, "काकाजी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मुझे बहुत मानते थे। पटना में होने वाले आयोजनों में मुझे साथ लेकर जाते। खाने-पीने के शौकीन काकाजी को दिखावा बिल्कुल पसंद नहीं था। एक बार वे किसी महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम में जा रहे थे। मैंने देखा, धोती में खरोंच लगी थी। मैंने दूसरी धोती बदल लेने के लिए कहा तो हँसते हुए बोले, कार्यक्रम में लोग मुझे देखेंगे और सुनेंगे, मेरी धोती को नहीं। संभवतः काकाजी की अध्ययनशीलता और ज्ञान के आधिक्य का ही प्रभाव था कि वे परिवार के लोगों के नाम भी भूल जाया करते थे। यही वजह थी कि उनके पुत्र तथा अन्य लोग उन्हें प्रणाम करते समय या उनसे बात करते समय पहले अपना नाम बता देते थे।"

हरिमोहन बाबू के सान्निध्य में : विष्णुकांत झा कांतजी

मैं सीधे हरिमोहन बाबू के कक्ष में प्रविष्ट हुआ। पलंग पर सुखासन में बैठे, मसनद पर रखी एक पतली-सी पत्रिका पर ध्यानस्थ थे प्रोफेसर साहब। उन्हें चरण स्पर्श करने के बाद मैं सामने रखे सोफे पर बैठा ही था कि सजग हो किंचित मुस्कान मुद्रा में मेरी ओर मुखातिब हुए- "कब आये?"

होली की छुट्टी के बाद गाँव से वापस आया था। प्रोफेसर साहब की अनुशंसा पर ही पटना में मेरी नौकरी लगी थी। मेरा करबद्ध उत्तर—"जी सर, घंटा भर पहले।" उन्होंने दूसरा प्रश्न किया-होली हो ली? मैंने कहा—"जी सर, द्वारे द्वारे भली भली।" "रंग अबीर संग घर द्वार कादो कीचड़ गली गली।" उनका प्रत्युत्तर। पुनः पुस्तक की ओर ध्यानस्थ। कुछ क्षण उपरांत—"आपके बाबूजी कैसे हैं?" मैं—"जी सर, सब कुशल, ठीक-ठाक।" पूर्ववत् उनकी जिज्ञासा—"और मेरी पंडौल वाली काकी?" मैं—"जी, वे इन दिनों निरक्षरता उन्मूलन अभियान के अंतर्गत खुद रात्रि पाठशालाओं का निरीक्षण करती हैं। अतः शाम के बाद व्यस्त रहा करती हैं।"

वे फिर चुप... निस्तब्ध... ध्यानस्थ... पत्रिका में नजरें गड़ाये। 5 मिनट... 10 मिनट... 15 मिनट बीते। वे तो मानो समाधिस्थ हो गये थे। मैं बैठे-बैठे बोर हो रहा था। मन में विभिन्न भाव आ-जा रहे थे। भला एक पतली पत्रिका...न पन्ना पलट रहे हैं... न पलकें झपकती हैं। इतने बड़े विद्वान... एशिया महाद्वीप के सात महानतम दर्शनशास्त्रियों में एक और इतनी एकाग्रता। आखिर यह कौन- सी पुस्तक है? पंजों के बल चलकर दुबकते... झुकते... पीछे से पुस्तक को देखते ही आकाश से गिरा। मन व्याकुल...। जैसे गया था, वैसे ही लौटकर अपनी जगह पर बैठ गया। मेरे जाने और लौटने का उन्हें कुछ भी भान नहीं हुआ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मेरे मन को कई विचारों ने घेर लिया। दरअसल वह पत्रिका पूर्वोत्तर रेलवे की समय सारिणी थी। मैंने सोचा, किसी ने ठीक ही कहा है दार्शनिक लोग अर्द्ध! यह क्या... मेरा ध्यान भंग हो गया। कार्तिक बाबू पधार रहे थे। मैंने उन्हें प्रणाम किया। वे प्रोफेसर साहब को नमन कर मेरे बगल में बैठे ही थे कि प्रोफेसर साहब की समाधि भंग हो गयी। पत्रिका को बंद कर बगल में रखा। प्रसन्न मुद्रा में उनका स्वागत करते हुए बोले—"आ...हा.... कार्तिक बाबू ! सटीक समय पर आपका आगमन हुआ।" उन्होंने अपना उद्‌गार जारी रखा—"एक विक्रेता अपनी दुकान सजाकर बैठा था। सामने खरीददारों की कतार। एक किशोर ने मिठाई की मांग की। पैसा देकर मिठाई ली और चला गया। दूसरी ग्राहक एक बुढ़िया... सिर पर टोकरी। उसे इमली की दरकार थी। कीमत चुका इमली लेकर चली गयी। तीसरा ग्राहक एक ग्वाला था। उसे भैंसा खरीदना था। दाम देकर भैंसा लिया और चलता बना। फिर एक महिला आयी। उसके बाल उलझे हुए...कपड़े पर जहाँ-तहाँ आटा लगा था। शायद वह आटा पीसने का काम करती थी। उसने एक सिलौट (मसाला पीसने की पत्थर की सिल) की माँग की। दाम चुका सिलौट ली और चली गयी।" इस तरह प्रोफेसर साहब ने 20-25 ग्राहकों की चर्चा की, जो मुझे अब याद नहीं। प्रोफेसर साहब बोले—"कार्तिक बाबू! ध्यान रहे, ग्राहक सब वही थे जो मैंने कहा किंतु मिठाई थी, पर मीठी नहीं। इमली थी, पर खट्टी नहीं। भैंसा था, पर कोई जानवर नहीं। सिलौट भी पत्थर का नहीं और वह बनिया सभी वस्तुओं को एक ही जगह से उठाकर ग्राहकों को दे रहा था। तो बताइए वह बनिया कौन था?" इतना कह कर प्रोफेसर साहब मसनद को परे कर बाथरूम की ओर बढ़ गये। कार्तिक बाबू किंकर्त्तव्यविमूढ़! उन्होंने मुझसे कहा—"विद्यार्थी, आप भी कुछ सोचिए।" "आप स्वयं पटना विश्वविद्यालय के भौतिकी विभागाध्यक्ष हैं और छत की ओर ताक रहे हैं। उन्होंने आपसे पूछा है, भला मैं क्यों अपना सिर खपाऊँ?" यह मेरी प्रतिक्रिया थी।

"क्या कार्तिक बाबू पता चला?" बाथरूम से लौटते हुए प्रोफेसर साहब ने पूछा। कार्तिक बाबू चुप। सिर झुक गया। प्रोफेसर साहब मेरी ओर मुखातिब होकर बोले, "आप तो पुस्तक भंडार में कार्यरत हैं। वहाँ की मासिक पत्रिका 'बालक' में इसे प्रकाशित करा दें और हाँ, सही उत्तर देने वाले को मेरी ओर से 10 रुपये का पुरस्कार मिलेगा, इसकी घोषणा करा दें।" अपना मंतव्य प्रकट कर प्रोफेसर साहब पुनः पलंग पर मसनद लगाकर बैठ गये। इधर कार्तिक बाबू की उत्सुकता बढ़ गयी। आखिर वह बनिया था कौन? वे मुझे कुरेदने लगे। प्रोफेसर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साहब ने इसे भाँप लिया। मैं जिद पर उतर आया... "उत्तर जानने के बाद ही मैं इसे प्रकाशित कराऊँगा, अन्यथा नहीं।" प्रोफेसर साहब के मुख मंडल पर हास्य। उन्होंने किंचित मुस्कान मिश्रित सरल शब्दों में कहा—"आप बच्चे हैं। बच्चों के पेट में बात पचती नहीं है।" मैंने कान छूकर कहा—"कसम से, 'बालक' में उत्तर आने तक मैं इसे गुप्त रखूँगा।" कार्तिक बाबू की ओर मुखातिब होकर प्रोफेसर साहब ने रहस्योद्घाटन किया—"विक्रेता रेलवे स्टेशन का बुकिंग क्लर्क था और मेरे द्वारा कथित सारी वस्तुएँ विभिन्न स्टेशनों के नाम हैं।"

❐

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संगीत के वैशाली घराने के संस्थापक सरयू भारती

अश्विनी कुमार आलोक

घराने से तात्पर्य किसी बड़ी या लंबी सांस्कारिक परंपरा का पालन और सम्मान करनेवाले परिजनों का समूह है। संगीत - क्षेत्र में परंपरा-रक्षा की मर्यादित शृंखलाएँ रही हैं। संगीत घराने के सदस्य या उत्तराधिकारी भले जैविक रूप से किसी परिवार के सदस्य रहे हों, वे अपने कर्त्तव्य को साधना के स्तर पर अपने संगीत घराने की परंपराओं में समर्पित कर देते हैं। वस्तुतः इन घरानों की पहचान इनके गायन की शैली से होती रही है। बिहार हालांकि संगीत साधना की दृष्टि से दुर्बल न रहा, पर ऐसे घरानों की बहुसंख्य परिचिति का यहाँ अभाव ही रहा है। सरयू भारती एक ऐसे संगीतज्ञ हुए, जिन्होंने संगीत की शैली विकसित की और अपने विलक्षण गायन से वैशाली घराने की स्थापना करने में सफल रहे। संगीतकारों के घराने वैसे ही उत्तर भारत में बहुतायत नहीं हैं। दक्षिण भारत ने हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत की परंपराओं को जीवित रखा है। यह स्वाभाविक है कि परंपराएँ अपने रूप की स्थिरता को लेकर न तो सावधान रहती हैं और न ही उनके परवर्ती समय को परंपरा-मोह की चेतना रहती है। हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत में संगीत के शास्त्र और क्षेत्रीय परंपराओं के संसर्ग से अनेक रूपों का विकास होता रहा है। ये रूप शैलीगत प्रयोगों से भी पहचाने जाते रहे हैं। इन्हीं प्रयोगों ने घरानों को जन्म दिया। अर्थात् शास्त्रीय संगीत के निर्धारित प्रारूपों में शैली की मौलिकता भी प्रभावी हो सकती है। बिहार में इस प्रकार के प्रभाव सरयू भारती ने जगाये। शास्त्रीय संगीत में दक्षिण भारतीय कलाकारों के नैष्ठिक अवदान के बाद मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के कुछ घरानों की कला पहचानी गयी, पर बिहार में ऐसे घराने सरयू भारती के अतिरिक्त अन्य कई कलाकारों ने बनाये। ऐसे घरानों में अमता घराना (दरभंगा), बेतिया घराना, बड़हिया घराना, गया घराना, भागलपुर का मिश्र घराना, डुमराँव घराना, सहरसा का पसराहा घराना आदि के नाम सम्मान के साथ लिये जाते हैं। सरयू भारती संगीत साधना को समर्पित रहे। उनका जीवन संगीत के अतिरिक्त किसी अन्य क्षेत्र में नहीं रमा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उन्होंने शिष्यों का एक दल बनाया, जिसने शास्त्रीय संगीत की साधना में लोकपरंपराओं और लोकसंगीत की गायन विधाओं के समावेश से एक विशिष्ट शैली का विकास किया। सरयू भारती के बाद उनके शिष्य वैशाली घराने की इस शैली का विस्तार करने में सफल भले नहीं रहे, परंतु सरयू भारती की संगीत - साधना आज भी सम्मान के साथ याद की जाती है।

सरयू भारती का जन्म वैशाली जिले के लालगंज प्रखंड अवस्थित मांगनपुर गाँव में हुआ था। उनके पिता का नाम गोपाल गिरि था। सरयू भारती के जन्म की तिथि तो ठीक - ठीक नहीं ज्ञात है, पर जन्म का वर्ष 1912 ईस्वी बताया गया है। सरयू भारती जाति से संन्यासी ब्राह्मण थे। वे माता-पिता की इकलौती संतान थे। सरयू भारती का रूप-रंग बाल्यावस्था ही से सुंदर था,पढ़ाई - लिखाई में भी मेधावी थे। उनकी विधालयी शिक्षा गाँव ही में हुई। परंतु संगीत में मन अधिक ही रमता था। परिवार की आर्थिक स्थिति संभालने के लिए वे आशा के अनुरूप कोई अच्छी नौकरी तो नहीं कर पाये, पर संगीत के लिए एक बड़ी शिष्य- मंडली तैयार कर गुरुदक्षिणा ही से परिवार का भरण-पोषण करते रहे।

सरयू भारती शाहबाजपुर, हरौली (वैशाली) निवासी संगीत कलाकार रामनंदन सिंह के सान्निध्य में आये थे। रामनंदन सिंह लोकसंगीत और पारंपरिक भजन के स्थानीय कलाकार थे। उन्हें बनिया बसाढ़ गाँव के त्रिवेणी सिंह का शिष्य बताया गया है। रामनंदन सिंह के साथ पटेढ़ा गाँव के निवासी और त्रिवेणी सिंह के ही एक अन्य शिष्य बैद्यनाथ सिंह तबले पर संगत किया करते थे। सरयू भारती ने संगीत की आरंभिक शिक्षा रामनंदन सिंह और बैद्यनाथ सिंह के साथ गाते-बजाते ली थी। उनके आरंभिक संगीत गुरुओं में रामनंदन सिंह और बैद्यनाथ सिंह के अतिरिक्त भागवत सिंह और बच्चा सिंह के भी नाम लिये जाते हैं।

सरयू भारती संगीत की पारंपरिक स्थानीयता में ही संकुचित रह जाना नहीं चाहते थे। वे संगीत के गंभीर ज्ञान, अभ्यास और प्रयोग के सम्यक् स्वरूप में नयी इबारत रचना चाहते थे। इसलिए वे शास्त्रीय संगीत की विधिवत शिक्षा के प्रति प्रवृत्त हुए थे। उनका गाँव मांगनपुर उन दिनों बाया नदी की बाधाओं से घिरा हुआ था। नदी पर कोई पुल नहीं था। लोग नाव से या तैरकर बाया नदी पार करते थे। उन्हीं दिनों सरयू भारती ने बनारस जाकर संगीत के गंभीर अभ्यास का निश्चय किया था। एक रात वे बाया नदी को तैरकर पार कर गये और गोरौल रेलवे स्टेशन से रेलगाड़ी पकड़ कर बनारस पहुँच गये। बनारस में उनकी किसी से जान - पहचान नहीं थी। संघर्ष का दौर था। उन्हें कान का कुंडल बेचना पड़

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गया। जीवन - यापन के लिए मजदूरी की, छोटे - मोटे काम किये। संगीत की अभिलाषा गयी नहीं। एक दिन बनारस के प्रसिद्ध संगीतज्ञ पंडित रामदास से उनकी भेंट हो गयी। रामदास के सान्निध्य में ही इनकी विधिवत संगीत - शिक्षा आरंभ हुई। पंडित रामदास के सान्निध्य में इन्होंने लगभग आठ वर्ष बिताये। बनारस से लौटते समय घर आने के बजाय सरयू भारती छपड़ा में अपने किसी रिश्तेदार के यहाँ रुके। उसके बाद उन्होंने छपड़ा के शिकारपुर गाँव के मठ में प्रवेश किया और थोड़े समय के बाद वहाँ महंथ बन गये। किंतु सरयू का बहता नीर शिकारपुर के मठ में ही ठहरकर शांत न हुआ, वह आगे बढ़ा। सोनपुर के अध्यात्म गुरु और संगीत के साथ - साथ आयुर्वेद-रसायन के ज्ञाता पंडित रामलखन दास से उनकी भेंट हुई। उन दिनों लोक सेवाश्रम की ओर से प्रति वर्ष रामलखन दास संगीत के विशिष्ट आयोजन की शुरुआत कर चुके थे। माना जाता है कि बिहार और बिहार के अतिरिक्त दूसरे प्रांतों से आनेवाले शास्त्रीय संगीत के कलाकार लोक सेवाश्रम के इस कार्यक्रम में एक तपस्वी की भाँति निःस्वार्थ भाव से अपना कार्यक्रम प्रस्तुत करने आते थे। छपड़ा के शिकारपुर मठ के महंथ सरयू भारती भी उसी कार्यक्रम में सम्मिलित होने आये थे। पंडित रामलखन दास एवं लोक सेवाश्रम के उस कार्यक्रम से सरयू भारती का इतना अपनापन बढ़ गया कि वह जीवन पर्यंत उन दोनों से जुड़े रहे। यह कार्यक्रम प्रति वर्ष श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर आयोजित झूले में होता था। जब किसी ने बाबा रामलखन दास की हत्या कर दी, तो उनकी पुण्यतिथि पर यह कार्यक्रम प्रति वर्ष 7 अगस्त को आयोजित किया जाने लगा। इस अवसर पर सरयू भारती उद्घोषक की भूमिका निभाने लगे। वह संगीतज्ञ के साथ - साथ एक उद्घोषक के रूप में भी सुख्यात हुए।

ज्ञान बाँटने से न सिर्फ बढ़ता है, बल्कि ज्ञान के होने की वजह भी यही है। सरयू भारती बनारस घराने की संगीत पद्धति को वैशाली के लोकराग से समाविष्ट कर एक नयी शास्त्रीय संगीत शैली का सूत्रपात कर चुके थे। उसके विस्तार और प्रचार का भी जिम्मा स्वयं संभाला। उन दिनों पारंपरिक नाचों से अनेक नौजवान कलाकार जुड़े हुए थे, उनकी जीविका का वही आधार था। सरयू भारती ने ऐसे अनेक कलाकारों को शास्त्रीय संगीत एवं शैलीगत गायन के लिए प्रोत्साहित किया। इनके ऐसे शिष्यों में देवी पंडित, चुल्हन जी और हरिमोहन झा प्रतिभावान कलाकार हुए। सरयू भारती की संगीत शिक्षक के रूप में ख्याति बढ़ी। वह संगीत के आरंभिक स्वर-अलंकार की शिक्षा देने के बाद शिष्यों से 'पुरीयाचनाश्री' राग का अभ्यास करवाते थे। वैशाली की स्थानीय बोली और संगीत परंपरा से उन्होंने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिस शास्त्रीय संगीत गायन पद्धति की नींव डाली थी, वह 'वैशाली घराने' की पहचान से प्रतिष्ठित हो गयी।

लालगंज में जगन्नाथ प्रसाद साह ने शारदा सदन पुस्तकालय की स्थापना की थी। वह पुस्तकालय में संगीत विभाग बनाकर संगीतज्ञों को एक अभ्यास गृह और मंच देना चाहते थे। 1952 ई में स्थापित इस पुस्तकालय के संगीत विभाग से सरयू भारती 1960 ई में जुड़े। वह पुस्तकालय के संगीत विभाग में संगीत की नियमित कक्षाएँ संचालित करने लगे। इसके अतिरिक्त उनके शिष्यों की अनेक मंडलियाँ दूसरे गाँवों में भी बनीं। इन गाँवों में बखरा, सरैया, हाजीपुर, गोरौल, सोनपुर, छपड़ा, भैरोपुर आदि गाँवों के नाम प्रमुखता से लिये जाते हैं। सरयू भारती को तत्कालीन दरभंगा राज और धरहरा राज ने बहुत सम्मान दिया। वे उनके कार्यक्रमों में सम्मिलित होते रहे। परंतु कभी भी उनके दरबारी गायक की सीमित पहचान नहीं स्वीकारी।

सरयू भारती ने पंडित रामलखन दास की आज्ञा से विवाह कर गृहस्थ जीवन आरंभ किया था। इनके तीन पुत्र और दो पुत्रियों ने कभी इन पर आर्थिक अभाव का बोझ नहीं डाला। सरयू भारती की जीविका का साधन संगीत ही रहा, परंतु उन्होंने कभी किसी शिष्य या उसके परिजन पर मांग का दवाब नहीं डाला। वह जब बुढ़ापे में गठिया रोग से परेशान हो गये, तो मांगनपुर में ही शिष्यों को बुलाकर अभ्यास कराने लगे। इन्होंने अनेक संगीत कलाकारों को वह गौरव प्रदान किया कि वे स्वयं को सरयू भारती का शिष्य कह सकें। ऐसे संगीतकारों में पंडित हरिमोहन झा, अजय कुमार सिंह, किरण कुमारी, जयप्रकाश तिवारी, राजेंद्र प्रसाद, शिलानाथ सिंह, रामनरेश ठाकुर, सरिता कुमारी के नाम प्रमुख कहे जा सकते हैं।

सरयू भारती वैचारिक तौर पर कम्यूनिस्ट रहे। वे सोनपुर निवासी शिववचन सिंह के राजनीतिक विचारों से प्रभावित रहे। परंतु जगन्नाथ प्रसाद साह से संपर्क बढ़ने के बाद सोशलिस्ट विचारधारा में आ गये। उन्हें जयप्रकाश नारायण, जॉर्ज फर्नान्डिस ने सम्मान दिया।

सरयू भारती का देहांत 27 नवंबर 1995 को हो गया। वर्ष 2007 में उनके शिष्य अजय कुमार सिंह ने सरयू भारती संगीत महाविद्यालय की स्थापना की। सरयू भारती संगीत महाविद्यालय के अतिरिक्त शारदा सदन पुस्तकालय, लालगंज का संगीत विभाग उनके नाम और यश को आदर के साथ प्रसारित कर रहा है। संगीत क्षेत्र के वैशाली घराने की शास्त्रीय संगीत गायन शैली सरयू भारती की स्मृति को मरने नहीं देगी।

❑

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

डॉ. दामोदर प्रसाद जो अपने सपनों को जीते थे

डॉ. व्रजकुमार पांडेय

आज से अंठावन साल हुए, मेरा सपना पूरा हुआ था। मेरे सहपाठी डिप्टी कलक्टरी के लिए बेचैन थे। जिन्हें वह मिल जाती - लोग पानी में आग लगाने का अहसास कराते। मैंने तो लेक्चररशिप की ही चाह की थी, सो हाजीपुर में पूरी हुई। तकदीर में हाजीपुर था, भटक कर क्या करता। उस वक्त हाजीपुर शहर नाम का एक बड़ा गांव था। वह गांव अब शहर बन गया है। जिला हेटक्वार्टर है। यहां, एस.डी.ओ. सबसे बड़ा अधिकारी होता था। इस पद पर यहाँ बड़े-बड़े आइ.सी. एस. और आइ.ए.एस. अधिकारी रह चुके थे। इन अधिकारियों में एल.पी.सिंह और जे.सी. माथुर को आज भी पुराने लोग याद करते हैं। जी. ए. हाई स्कूल और आर. एन. कॉलेज जैसी प्रतिष्ठित शैक्षनिक संस्थाएँ थीं, जो अब इतिहास बन कर रह गयी हैं। यहाँ के सबडिविजनल कोर्ट में कुछ नामी वकील थे। डॉक्टरों और वैद्यों के लिए भी हाजीपुर मशहूर था। इसी शहर के पं. बृजबिहारी चतुर्वेदी को आयुर्वेदिक चिकित्सा में, 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में काफी ख्याति मिली थी। कुछ होमियोपैथ चिकित्सकों का भी यहाँ बड़ा नाम था। इसी क्रम में एलोपैथ के एक महत्त्वपूर्ण चिकित्सक डॉ. दामोदर प्रसाद थे।

डा. दामोदर प्रसाद जी का जन्म 13 दिसंबर 1917 में हाजीपुर के प्रसिद्ध यूनानी चिकित्सक, उर्दू-फारसी के विद्वान एवं शायर स्व. रामनारायण लाल जी के तीसरे पुत्र के रूप में हुआ था। बाल्यावस्था में ये नटखट, परिहासपूर्ण एवं खुशमिजाज प्रकृति के थे। लगभग 7 वर्ष की अवस्था में पिता का साया इनके सर से उठ जाने के कारण परिवार को कठिन आर्थिक संकटों का सामना करना पड़ा था। जब ये बड़े हो रहे थे तो पराधीन भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए आन्दोलन चल रहे थे। इन आन्दोलनों का भी बड़ा प्रभाव इन पर पड़ा।

उस समय के पारिवारिक, आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक प्रभावों के कारण युवा दामोदर प्रसाद जी का व्यक्तित्व एक संवेदनशील, निर्भीक, स्वतंत्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विचारक और लीक से हटकर चलने वाले व्यक्ति के रूप में विकसित हुआ। दामोदर प्रसाद जी अपने काल में प्रचलित कुरीतिओं का विरोध करते थे एवं स्त्री शिक्षा के प्रबल समर्थक थे। स्त्री शिक्षा का वे केवल समर्थन ही नहीं करते थे, बल्कि अपने व्यवहार में भी लागू करते थे। उस समय हाजीपुर में लड़कियों के लिए सिर्फ मिडिल तक ही स्कूल था। जब इनकी छोटी बहन स्व. लक्ष्मी देवी ने मिडिल स्कूल पास कर लिया, तब आगे की पढ़ाई के लिए उनका नामांकन लड़कों के स्कूल में करवा दिया। पूरे स्कूल में स्व. लक्ष्मी देवी अकेली लड़की थीं।

14 वर्ष की अवस्था में दामोदर बाबू का विवाह मुंगेर के ख्याति प्राप्त वकील स्व. परमेश्वर प्रसाद सिंह की ज्येष्ठ पुत्री स्व. सरोजिनी देवी से हुआ।

लोग बाग डॉक्टरों को इस धरती का भगवान मानते हैं - जो बीमार व्यक्तियों को मौत के मुँह से निकाल लाते हैं। डॉक्टरों और वकीलों को रोज परीक्षा देनी पड़ती है। वकील की परीक्षा का परिणाम देर से आता है, जबकि डॉक्टरों की परीक्षा का परिणाम जल्द प्राप्त होता है। डॉ. दामोदर प्रसाद लगभग सत्तर वर्षों तक रोज परीक्षा देते रहे और सभी में अव्वल आते रहे -मेडिकल साइंस की अद्यतन जानकारियों से लैस। अब तो इनका बड़ा बेटा अमरीका में बड़ा डॉक्टर है और पोता भी। सुनते हैं जब एक परिवार कई पीढ़ियों तक एक ही तरह का काम करता होता है तो उसकी दक्षता की कोई स्पर्धा नहीं कर सकता।

मेरे परिवार में डॉक्टर शब्द का मतलब दामोदर बाबू होते थे। कभी-कभी मैं उनकी बढ़ती आयु और शारीरिक कमजोरियों के कारण उनके यहाँ परिवार के किसी बाल-बच्चे को दिखाने जाने से मना करता था तो मुझे तरह-तरह की बातें सुननी पड़ती थीं। कभी-कभी तो झूठ तक बोलने की नौबत आती थी कि अब वे मरीज नहीं देखते हैं। इतना अटूट विश्वास उनकी चिकित्सा का मेरे परिवार पर था। मेरा छोटा बेटा एक बार ऐसे रोग से पीड़ित हो गया कि पूरा परिवार चिन्तित हो गया और उसका रोग छूटने का नाम ही न ले। मेरे श्वसुर के भाई डॉक्टर हैं, जिन्होंने महीनों दवा की। कोई राहत नहीं मिली। पत्नी गाँव पर थी और बेटा भी। दूसरे डॉक्टरों से भी दिखाया गया। दवा हुई, लेकिन वह रोग मुक्त नहीं हो सका। उसे मैं हाजीपुर लाया। दूसरे दिन दामोदर बाबू के यहाँ ले गया। उन्होंने बिना किसी जाँच के दवा दी। तीसरे दिन ही वह चंगा हो गया। हमलोग चकित रह गये।

हाजीपुर की सीमा जहाँ मुजफ्फरपुर, समस्तीपुर, सारण और पटना को छूती है - इसके बीच की एक बड़ी आबादी के बीच चिकित्सक के रूप में दामोदर बाबू

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की शोहरत थी और कभी-कभी इसके पार भी। इन सभी इलाकों के मरीज इनके क्लिनिक में नजर आते रहते थे। इन पर जितनी आस्था मरीजों को थी, उतनी ही हमपेशा वरिष्ठ डॉक्टरों को भी। जब हाजीपुर में गंगा पर पुल नहीं बना था, बाढ़ के दिनों में गंगा पार करना दुष्कर कार्य होता था। ऐसे कठिन समय में बिहार के प्रसिद्ध चिकित्सक डॉ. ए. के. सेन अपने उत्तर बिहार के रोगियों को दामोदर बाबू को रेफर कर देते थे।

दामोदर प्रसाद जी का प्राकृत रूप से झुकाव साहित्य की ओर था। वे स्वयं तो शिक्षक बनना चाहते थे पर इनके श्वसुर जी के प्रोत्साहन से इनका नामांकन दरभंगा मेडिकल कॉलेज में हुआ और ये एक सफल डाक्टर सिद्ध हुए। डॉक्टर बनने के बाद इन्हें सरकारी नौकरी रास नहीं आयी। उस समय इनके गृह जिले और उसके आसपास के इलाकों में हैजा महामारी फैली थी और सुदूर देहात के लोगों का विश्वास एलोपैथी चिकित्सा से इतर झाड़-फूँक और तंत्र-मंत्र पर अधिक था। अतः ये कुछ महीनों की सरकारी नौकरी छोड़ अपने घर हाजीपुर आ गए और एकाग्रचित्त हो, तन मन से रोगियों की सेवा करने लगे। सायकिल पर अपना डाक्टरी सामानों का छोटा सा बैग लिए ये दूर गाँव- गाँव में रोगियों के घर जाकर उनका इलाज करने लगे। शुरुआत में इन्हें कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, किन्तु जैसे ही इनके उपचार से रोगियों को लाभ होने लगा, लोगों का विश्वास इन पर बढ़ने लगा। इस प्रयास से इन्हें पैसों से ज्यादा इज्जत और शोहरत मिली।

रोगियों की चिकित्सा के लिए ये दूर दूर के गाँव तक टमटम, बैलगाड़ी और बाढ़ के दिनों में नाव तक से जाया करते थे। इनके मरीजों का इन पर प्रगाढ़ विश्वास और स्नेह था। इसका एक कारण शायद लीक से हट कर इनकी चिकित्सा पद्धति का होना भी था। ये दम्मा के रोगी को इच्छा होने पर दही खाने से मना नहीं करते थे और पेट अल्सर के रोगी को मिर्ची। इनकी प्रारंभिक कर्म भूमि सोनपुर थी किन्तु जैसे जैसे इन्हें शोहरत मिलने लगी वैशाली, सारण और समस्तीपुर जिले तक के रोगी इनसे चिकित्सा करवाने आने लगे।

डॉ. दामोदर प्रसाद ने एक वरीय डॉक्टर होने के कारण ही समाज में प्रमुख स्थान नहीं प्राप्त कर लिया, बल्कि उनकी प्रसिद्धि का एक प्रमुख कारण था कि वे अपने पेशे के प्रति पूरी तरह सजग रहते हुए व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व के प्रति अपने दायित्व को भली-भांति समझते और निर्वाह करते थे। वे सभी संकीर्णताओं से ऊपर उठकर मनुष्य के नाते सम्पूर्ण मानव जाति के प्रति बिरादराना दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक समझते थे। इनका घर हर जाति और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धर्म के रोगियों के लिए खुला रहता था। इस मामले में राजनीतिक मतभेद भी बाधक सिद्ध नहीं होता था। सभी जानते हैं कि दामोदर बाबू वाम विचारों के प्रति इत्तफाक रखते रहे थे। फिर भी विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों और राजनीतिक दलों के लोग रोग-निवारण और आरोग्य लाभ के लिए इनके पास बेखटक आते थे।

डॉ. दामोदर प्रसाद ने युवावस्था में ही यह समझ लिया था कि सिर्फ डॉक्टरी पेशे से जुड़े रहना ही जीवन का उद्देश्य नहीं है, बल्कि ईमानदारी से चिकित्सा सेवा के दायित्वों का निर्वाह करते हुए राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक जीवनधारा को भी समझने की जरूरत है। इस समझ का ही परिणाम है कि उनके भीतर हमेशा कुछ नया करने की कशिश बनी रहती थी। अपने अति व्यस्त चिकित्सीय जीवन से समय निकाल कर उन्होंने हमपेशेवर डॉक्टरों के हक-हकूक, उनकी मान-मर्यादा और डॉक्टरी पेशा की स्तरीयता एवं मानक बनाये रखने के लिए स्थापित मेडिकल एसोसिएशन की शाखा हाजीपुर में स्थापित की। इसके लिए उन्होंने सदस्यता भर्ती का अभियान चलाया, डॉक्टरों को एक जगह इकट्ठा किया, उनका सम्मेलन बुलाया, उनकी नियमित बैठकें कीं और हाजीपुर में एक सशक्त संगठन के रूप में इसे प्रतिष्ठित किया। इसके लिए इन्होंने गाँधी चौक पर एक जमीन अर्जित कर मेडिकल एसोसिएशन का कार्यालय बनाया। कई वर्षों तक वे इसके सचिव और बाद में अध्यक्ष रहे। 1960 के दशक में इन्होंने "बिहार स्टेट मेडिकल कान्फ्रेंस" का सफल आयोजन हाजीपुर नगर में किया, जिसका उद्घाटन तत्कालीन मुख्य मंत्री श्री बाबू ने किया था। आज उनके उत्तराधिकारियों को इस ऐतिहासिक स्थल का ध्यान नहीं है। आज डॉक्टरों का यह उजड़ा नीड़ अपने उद्धारक की बाट जोह रहा है।

साहित्य और संस्कृति के लिए समर्पित व्यक्ति का नाम था - डॉ. दामोदर प्रसाद। कभी-कभी ऐसा लगता है कि डॉक्टर साहब यदि डॉक्टर नहीं होते तो वे साहित्य के होलटाइमर हुए होते। मधुर मुस्कान, प्रसन्न मुखमुद्रा, स्नेहपूर्ण व्यवहार, अकुंठ परोपकार के एकत्र समाहार का ही नाम था डॉ. दामोदर प्रसाद।

1948 में जब हिन्दी के उत्थान और प्रसार की दिशा में किरण मंडल की स्थापना हुई, तब उस समय के युवा कवि दामोदर प्रसाद जी इसके सचिव चुने गए और बाद में अध्यक्ष बने। अपने साहित्य प्रेम की दिशा में इन्होंने किरण मंडल की तन-मन-धन से सेवा की। आपके नेतृत्व में किरण मंडल के मंच से हाजीपुर और आसपास की जनता को भारत के अनेक ख्याति प्राप्त कवियों को सुनने का सुअवसर मिला। किरण मंडल के तत्वावधान में इन्होंने महिलाओं के विकास के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिए महिला मंडल, बच्चों के ज्ञानवर्धन हेतु शिशु मंडल, युवाओं के मानसिक विकास हेतु अध्ययन मंडल एवं संगीत प्रेमियों के लिए संगीत मंडल की स्थापना की। किरण मंडल से इनका लगाव जीवन के अन्तिम दिनों तक अक्षुण्ण बना रहा।

एक कवि के रूप में इनकी पैनी नजर अपने समाज, नगर, राज्य और देश में घट रही घटनाओं और परिवर्तनों पर रहती थी। इसके प्रभाव से इनकी कविताएँ आज की परिस्थितियों में भी प्रासंगिक हैं। साहित्य रचना की दिशा में इनके दो कविता संग्रह "जनता मैया" और "तस्वीर उत्तर ढूँढती है" का प्रकाशन हुआ। यद्यपि इनकी अनेक अप्रकाशित कविताएँ सुरक्षित हैं। सोवियत रूस की यात्रा के पश्चात लिखा गया संस्मरण तत्कालीन जनशक्ति अखबार में प्रकाशित हुआ था। हिन्दी के अलावा बंगला भाषा पर भी इनका समान अधिकार था। इन्होंने बंगला की कुछ पुस्तकों का हिंदी अनुवाद भी किया।

तत्कालिक सोवियत रूस के अलावा दामोदर प्रसाद जी ने इंग्लैंड, फ्रांस और अमेरिका का भी भ्रमण किया। अपने अमेरिका प्रवास के दौरान इन्होंने "सत्यनारायण" कथा का काव्य रूपांतरण किया जो उस समय के भारतीय-अमेरिकी समाज में काफी सराहा गया। उसकी एक प्रति डॉक्टर साहब ने मुझे भी दी थी। उत्तर भारत में प्रत्येक मांगलिक काम के अवसर पर सत्यनारायण कथा सुनायी जाती है। डॉक्टर साहब की पुस्तक पढ़ने के पहले तक मैं समझता था कि यह कथा किसी भगवान की कथा है या उसी के निमित्त यह कथा है। डॉक्टर साहब की पुस्तक के माध्यम से जाना कि यह भगवान की कथा नहीं - यह तो सत्य की कथा है। डॉक्टर साहब द्वारा लिखित इस सत्य कथा का व्यापक प्रचार-प्रसार होना चाहिए - ऐसी मेरी धारणा है।

इनके द्वारा रचित आठ गीतों का एक औडियो कैसेट स्व. नूर मुहम्मद नूर के संगीत निर्देशन में बना जिसे काफी लोगों ने पसंद किया। इनकी साहित्य सेवाओं को देखते हुए - बिहार राष्ट्रभाषा परिषद ने इन्हें—"वरिष्ठ साहित्य सेवी" पदक से सम्मानित किया।

दामोदर प्रसाद जी ने अपना योगदान हाजीपुर "बालिका उच्च विद्यालय" के संचालक मंडल के सदस्य के रूप में दिया। तत्कालीन जी.ए.एम.एच.एस. स्कूल के संचालक मंडल के सचिव कई वर्षों तक रहे। हाजीपुर वैशाली महिला महाविद्यालय के भी ये संस्थापक सदस्य रहे।

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन के कुछ सपने होते हैं— जो शायद ही सभी पूरे होते हैं। कुछ सपने ऐसे होते हैं जिन्हें दूसरे नहीं जानते। शुक्ल पक्ष-कृष्ण पक्ष हर महीने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धर्म के रोगियों के लिए खुला रहता था। इस मामले में राजनीतिक मतभेद भी बाधक सिद्ध नहीं होता था। सभी जानते हैं कि दामोदर बाबू वाम विचारों के प्रति इत्तफाक रखते रहे थे। फिर भी विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों और राजनीतिक दलों के लोग रोग-निवारण और आरोग्य लाभ के लिए इनके पास बेखटक आते थे।

डॉ. दामोदर प्रसाद ने युवावस्था में ही यह समझ लिया था कि सिर्फ डॉक्टरी पेशे से जुड़े रहना ही जीवन का उद्देश्य नहीं है, बल्कि ईमानदारी से चिकित्सा सेवा के दायित्वों का निर्वाह करते हुए राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक जीवनधारा को भी समझने की जरूरत है। इस समझ का ही परिणाम है कि उनके भीतर हमेशा कुछ नया करने की कशिश बनी रहती थी। अपने अति व्यस्त चिकित्सीय जीवन से समय निकाल कर उन्होंने हमपेशेवर डॉक्टरों के हक-हकूक, उनकी मान-मर्यादा और डॉक्टरी पेशा की स्तरीयता एवं मानक बनाये रखने के लिए स्थापित मेडिकल एसोसिएशन की शाखा हाजीपुर में स्थापित की। इसके लिए उन्होंने सदस्यता भर्ती का अभियान चलाया, डॉक्टरों को एक जगह इकट्ठा किया, उनका सम्मेलन बुलाया, उनकी नियमित बैठकें कीं और हाजीपुर में एक सशक्त संगठन के रूप में इसे प्रतिष्ठित किया। इसके लिए इन्होंने गाँधी चौक पर एक जमीन अर्जित कर मेडिकल एसोसिएशन का कार्यालय बनाया। कई वर्षों तक वे इसके सचिव और बाद में अध्यक्ष रहे। 1960 के दशक में इन्होंने "बिहार स्टेट मेडिकल कान्फ्रेंस" का सफल आयोजन हाजीपुर नगर में किया, जिसका उद्घाटन तत्कालीन मुख्य मंत्री श्री बाबू ने किया था। आज उनके उत्तराधिकारियों को इस ऐतिहासिक स्थल का ध्यान नहीं है। आज डॉक्टरों का यह उजड़ा नीड़ अपने उद्धारक की बाट जोह रहा है।

साहित्य और संस्कृति के लिए समर्पित व्यक्ति का नाम था - डॉ. दामोदर प्रसाद। कभी-कभी ऐसा लगता है कि डॉक्टर साहब यदि डॉक्टर नहीं होते तो वे साहित्य के होलटाइमर हुए होते। मधुर मुस्कान, प्रसन्न मुखमुद्रा, स्नेहपूर्ण व्यवहार, अकुंठ परोपकार के एकत्र समाहार का ही नाम था डॉ. दामोदर प्रसाद।

1948 में जब हिन्दी के उत्थान और प्रसार की दिशा में किरण मंडल की स्थापना हुई, तब उस समय के युवा कवि दामोदर प्रसाद जी इसके सचिव चुने गए और बाद में अध्यक्ष बने। अपने साहित्य प्रेम की दिशा में इन्होंने किरण मंडल की तन-मन-धन से सेवा की। आपके नेतृत्व में किरण मंडल के मंच से हाजीपुर और आसपास की जनता को भारत के अनेक ख्याति प्राप्त कवियों को सुनने का सुअवसर मिला। किरण मंडल के तत्वावधान में इन्होंने महिलाओं के विकास के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिए महिला मंडल, बच्चों के ज्ञानवर्धन हेतु शिशु मंडल, युवाओं के मानसिक विकास हेतु अध्ययन मंडल एवं संगीत प्रेमियों के लिए संगीत मंडल की स्थापना की। किरण मंडल से इनका लगाव जीवन के अन्तिम दिनों तक अक्षुण्ण बना रहा।

एक कवि के रूप में इनकी पैनी नजर अपने समाज, नगर, राज्य और देश में घट रही घटनाओं और परिवर्तनों पर रहती थी। इसके प्रभाव से इनकी कविताएँ आज की परिस्थितियों में भी प्रासंगिक हैं। साहित्य रचना की दिशा में इनके दो कविता संग्रह "जनता मैया" और "तस्वीर उत्तर ढूँढती है" का प्रकाशन हुआ। यद्यपि इनकी अनेक अप्रकाशित कविताएँ सुरक्षित हैं। सोवियत रूस की यात्रा के पश्चात लिखा गया संस्मरण तत्कालीन जनशक्ति अखबार में प्रकाशित हुआ था। हिन्दी के अलावा बंगला भाषा पर भी इनका समान अधिकार था। इन्होंने बंगला की कुछ पुस्तकों का हिंदी अनुवाद भी किया।

तत्कालिक सोवियत रूस के अलावा दामोदर प्रसाद जी ने इंग्लैंड, फ्रांस और अमेरिका का भी भ्रमण किया। अपने अमेरिका प्रवास के दौरान इन्होंने "सत्यनारायण" कथा का काव्य रूपांतरण किया जो उस समय के भारतीय-अमेरिकी समाज में काफी सराहा गया। उसकी एक प्रति डॉक्टर साहब ने मुझे भी दी थी। उत्तर भारत में प्रत्येक मांगलिक काम के अवसर पर सत्यनारायण कथा सुनायी जाती है। डॉक्टर साहब की पुस्तक पढ़ने के पहले तक मैं समझता था कि यह कथा किसी भगवान की कथा है या उसी के निमित्त यह कथा है। डॉक्टर साहब की पुस्तक के माध्यम से जाना कि यह भगवान की कथा नहीं - यह तो सत्य की कथा है। डॉक्टर साहब द्वारा लिखित इस सत्य कथा का व्यापक प्रचार-प्रसार होना चाहिए - ऐसी मेरी धारणा है।

इनके द्वारा रचित आठ गीतों का एक औडियो कैसेट स्व. नूर मुहम्मद नूर के संगीत निर्देशन में बना जिसे काफी लोगों ने पसंद किया। इनकी साहित्य सेवाओं को देखते हुए - बिहार राष्ट्रभाषा परिषद ने इन्हें—"वरिष्ठ साहित्य सेवी" पदक से सम्मानित किया।

दामोदर प्रसाद जी ने अपना योगदान हाजीपुर "बालिका उच्च विद्यालय" के संचालक मंडल के सदस्य के रूप में दिया। तत्कालीन जी.ए.एम.एच.एस. स्कूल के संचालक मंडल के सचिव कई वर्षों तक रहे। हाजीपुर वैशाली महिला महाविद्यालय के भी ये संस्थापक सदस्य रहे।

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन के कुछ सपने होते हैं— जो शायद ही सभी पूरे होते हैं। कुछ सपने ऐसे होते हैं जिन्हें दूसरे नहीं जानते। शुक्ल पक्ष-कृष्ण पक्ष हर महीने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अदला-बदली करते रहते हैं, लेकिन कौन कह सकता है कि शुक्ल पक्ष पहले हुआ या कृष्ण पक्ष। डॉ. दामोदर प्रसाद के जीवन के एक सपने के शुक्ल पक्ष-कृष्ण पक्ष को मुझे करीब से जानने का मौका मिला। उनके जीवन का शुक्ल पक्ष किरण मंडल था, उसकी गतिविधियाँ थीं, कौमुदी महोत्सव और मधु पर्व का आयोजन था। हाजीपुर को सांस्कृतिक संस्कार देने वाली इस संस्था का जुड़ाव, शरीर और आत्मा के संबंध की तरह डॉक्टर साहब से जुड़ा था। हिन्दी का कौन ऐसा कवि था, जिसको सुनने की इच्छा हाजीपुर के कवि प्रेमियों ने की हो और डॉक्टर साहब ने उन्हें न बुलाया हो। यों तो क्षेपक में कुछ लोग ऐसे दावे करते हुए भी सुने गये थे कि किरण मंडल मैंने या 'उसने' स्थापित किया। चाहे स्थापना किसी ने की हो - चलाया डॉक्टर साहब ने ही। खूब चलाया और उसे चरमोत्कर्ष तक पहुँचाया। डॉक्टर साहब अध्यक्ष और स्व. बालेश्वर बाबू सचिव, किरण मंडल को ऐसे अधिकारी मिले थे - जो किसी तरह के काम को सहज बना देते थे। किरण मंडल के शुक्ल पक्ष के दिनों में भी किरण मंडल का एक प्रतिपक्ष हुआ करता था और वह प्रतिपक्ष अपनी महत्त्वाकांक्षाओं को अदृश्य रूप में उपस्थित करता रहता था, लेकिन मुखर होकर नहीं। जब कौमुदी महोत्सव मनाने के दिन समीप आने लगता - स्व. विप्लव जी विचित्र तनाव में नजर आते थे। वे क्या चाहते थे, बैठकों में कहने से कतराते थे। ऐसा क्यों करते थे - आज तक मेरे लिए यह अबूझ पहेली बना हुआ है। स्व. उमाकान्त वर्मा जो बिहार भर में एक चर्चित कवि के रूप में ख्यात थे, किरण मंडल के साथ उनका लगाव प्रेम और घृणा वाला था। उसी तरह स्व. हरिहर चौधरी नूतन थे, जिनकी किरण मंडल के मंच पर उपस्थिति की अनिवार्यता को सभी महसूस करते थे। शायद किरण मंडल के आयोजक उनको अपना समझकर वैसा सम्मान नहीं देते हों, जिसकी अपेक्षा उनको रही हो।

मैं अपने अनुभव और अनुमान से ऐसा कहने का दावा कर सकता हूँ कि बालेश्वर बाबू का दुनिया से अलविदा हो जाने के बाद ही किरण मंडल अंधकार युग में प्रवेश कर गया। डॉक्टर साहब किसी योग्य सचिव की तलाश करते रहे। मुझे यह पद देने की पेशकश उन्होंने कई बार की, लेकिन मेरी कोई रुचि किरण मंडल में नहीं थी और मैं साफ इंकार करता रहा। इस क्रम में कुछ ऐसी घटनाएँ घटीं कि किरण मंडल एक गहरी साजिश के तहत छल का शिकार हो गया। इस छल की कहानी सभी जानते हैं। डॉक्टर साहब ने कोर्ट-कचहरी, प्रशासन, आन्दोलन और मंत्रियों तक गुहार लगायी। कहीं कुछ नहीं हुआ। अन्त में जिसने गहरी अन्तरंगता दिखलाई, डॉक्टर साहब ने किरण मंडल उसके हाथों सौंप दिया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फिर क्या-क्या हुआ, किरण मंडल को जानने वाले सब जानते हैं।

डॉक्टर दामोदर प्रसाद जी के द्वारा अपने नगर हाजीपुर के लोगों के लिए किये गये सुकृत्यों को याद करते करते बरबस उनके द्वारा लिखित निम्नांकित पंक्तियाँ गुनगुनाने को जी चाहता है—

याद सतायेगी तब मेरी उस दिन बहुत जमाने भर को
छोड़ चला जाऊँगा यह परदेश, लौट मैं अपने घर को।

❒

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

डा. योगेन्द्र मिश्र

डा. जयश्री मिश्र

डा. योगेन्द्र मिश्र की प्रसिद्धि तो तभी हो गई थी, जब वे 1937 ई. की मैट्रिक परीक्षा में पूरे प्रांत में प्रथम आये थे। देशरत्न डा. राजेन्द्र प्रसाद के बाद ये दूसरे बिहारी थे जो मैट्रिक की परीक्षा में प्रथम आये थे। डा. राजेन्द्र प्रसाद कलकत्ता विश्वविद्यालय की परीक्षा 1902 ई. में प्रथम आये थे, जब बंगाल के अंतर्गत बिहार और उड़ीसा भी सम्मिलित थे। पटना विश्वविद्यालय की स्थापना 1917 में हुई, जिसमें बिहार और उड़ीसा के साथ नेपाल के विद्यार्थी भी शामिल होते थे। 1952 के पहले तक मैट्रिक की परीक्षा का संचालन पटना विश्वविद्यालय ही करता था। रिजल्ट निकलने के बाद जब वे मुजफ्फरपुर पहुँचे, तब वहाँ के छात्रों ने उन्हें अपने कंधों पर बिठाकर आसपास की सड़कों पर माला पहनाकर घुमाया था। पटना कालेज में नाम लिखाया तो पटना के दूसरे कालेजों के छात्र भी यह देखने आते थे कि वह कौन दुबला-पतला विद्यार्थी है, जो इस वर्ष की मैट्रिक परीक्षा में प्रथम आया है। होनहार बीरवान के होत चिकने पात वाली कहावत इनके बाल्यकाल में ही दीखने लगी थी। जब वे पाँचवीं कक्षा में पढ़ते थे, तभी पड़ोसी के यहाँ पूछताछ के लिए पुलिस आई। अंग्रेजों के जमानें में गाँव में पुलिस का पहुँचना बड़ी बात होती थी। काफी भीड़ जुट गयी। दारोगा को यह देख बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह कौन बालक है जो आसपास में इतने शोरगुल के बावजूद अपनी किताब-कॉपी में तल्लीन है। जाते वक्त उस दारोगा ने यह कहा भी कि 'यह लड़का आगे चलकर कुछ अच्छा जरूर करेगा। तब गाँवों में घोर अशिक्षा का वातावरण था।

योगेन्द्र मिश्र का जन्म वैशाली जिले के बाजितपुर, पातेपुर के समीप एक गाँव में 31 मार्च 1920 को हुआ था। इनके पिता रामस्वार्थ मिश्र मध्यम वर्गीय किसान थे। इनकी माता का नाम चंचला देवी था। इन्होंने गाँव के बाहर जिला स्कूल, मुजफ्फरपुर और पटना कालेज में शिक्षा ग्रहण की और रामकृष्ण कालेज, मधुबनी, मुंशी सिंह कालेज, मोतीहारी, राजेन्द्र कालेज, छपरा, लंगट सिंह कालेज, मुजफ्फरपुर तथा पटना कालेज, पटना में अध्यापन कार्य किया। कुछ समय के लिए वे मगध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विश्वविद्यालय में प्राचीन भारतीय और एशियाई अध्ययन विभाग के संस्थापक अध्यक्ष रहे। 31 मार्च 1980 को इन्होंने पटना विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग के अध्यक्ष पद से अवकाश ग्रहण किया। इन्होंने दो दर्जन से अधिक पुस्तकों का लेखन, अनुवाद और सम्पादन किया। इनकी प्रमुख पुस्तकें हैं-भारत का ऐतिहासिक एटलस (1952), अशोक (1965) द्वितीय संवर्धित संस्करण 1993), दि हिन्दू शाहिज ऑफ आफगानिस्तान, दि पंजाब (1972), श्वेतपुर की खोज और उसका इतिहास (1979), हिस्ट्री ऑफ विदेह (1980), डा. सुविमल चन्द्र सरकार स्मृति-ग्रंथ (1997) आदि। इतिहास-जगत् में इनकी ख्याति दूर-दूर तक फैली। तीरभुक्ति की विस्मृत राजधानी श्वेतपुर की खोज का श्रेय इन्हें ही है। वे अनेक वर्षों तक भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद्, नयी दिल्ली के सदस्य भी रहे। इनके व्यंग्य-विनोद का लोग आज भी स्मरण करते हैं। इतिहास-जगत के साथ-साथ साहित्य जगत में भी इनकी काफी प्रतिष्ठा थी। वे राज्य के अनेक साहित्यिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संस्थाओं से जुड़े रहे। 1944 में प्रयाग हिन्दी साहित्य सम्मेलन से इन्होंने 'साहित्य रत्न' की उपाधि प्राप्त की थी।

योगेन्द्र मिश्र पटना विश्वविद्यालय से इतिहास में एम.ए की डिग्री प्राप्त कर रामकृष्ण कालेज, मधुबनी में अध्यापन कर रहे थे, जब हाजीपुर के तत्कालीन एस.डी.ओ. जगदीश चन्द्र माथुर ने उन्हें वैशाली-महोत्सव के अवसर पर वैशाली के इतिहास-लेखन का आग्रह किया। इंकार की कोई बात ही न थी। यह उनके अपने ही घर की बात थी पर उन्होंने अपनी कठिनाई बतलायी। पूरा इतिहास जुटाने में समय लगता और इतनी छुट्टी उन्हें कालेज से शायद न मिलती। माथुर साहब ने कहा 'क्यों नहीं मिलेगी ? छुट्टी अवश्य मिलेगी।' उन्होंने कालेज के सचिव को पत्र दिया, जिन्होंने डा. मिश्र को सहर्ष सवैतनिक पूरे समय के लिए कालेज के कार्य से मुक्त कर दिया।

प्रथम वैशाली-महोत्सव के लिए वैशाली-अभिनन्दन-ग्रन्थ के सम्पादन के लिए डा. सुविमल चन्द्र सरकार और योगेन्द्र मिश्र को चुना गया। लेख आमंत्रित किये गये। काफी संख्या में लेख आ गये। प्रथम वैशाली-महोत्सव की तिथि 31 मार्च 1945 निर्धारित थी। कम समय में अभिनन्दन-ग्रंथ का प्रकाशन संभव न हुआ, पर हिन्दी में वैशाली पर एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक इन दोनों के सम्पादकत्व में संभव हो सकी।

प्रथम वैशाली-महोत्सव के समय प्रकाशित वैशाली नामक पुस्तक के बाद डा. योगेन्द्र मिश्र ही वैशाली-संघ सम्बन्धी प्रकाशनों की रूपरेखा का भार वहन करते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहे। वैशाली-महोत्सव के समय प्रकाशित निमंत्रण-पत्रों, पैम्पलेट, अपीलों, अध्यक्षीय भाषणों आदि के मुद्रण के लिए वे शक्ति से अधिक खटते थे। वैशाली-महोत्सव के कार्यक्रम में उन्होंने बार बार लोगें को वैशाली का इतिहास सुनाया। कभी-कभी तो इन्हें वहाँ द्विभाषीय का भी काम करना पड़ा। पेट के ऑपरेशन के कारण 1970 में और पिता की मृत्यु के कारण 1979 के वैशाली-महोत्सव में वे न जा सके अन्यथा वे कभी भी वैशाली-महोत्सव के प्रांगण में अनुपस्थित न रहे। वे वैशाली-संघ के मंत्री भी रहे।

1948 के पूर्व वैशाली-महोत्सव, मार्च-अप्रैल महीने में सुविधानुसार किसी भी तिथि को आयोजित होता था। प्रथम महोत्सव 31 मार्च 1945, द्वितीय महोत्सव 10 अप्रैल 1946। रामनवमी और तीसरा 14 अप्रैल 1947 चैत्र संक्रान्ति को संपन्न हुआ था। 1947 में डा. योगेन्द्र मिश्र ने श्रमण भगवान महावीर की जन्मभूमि की पहचान पर एक पुस्तिका अंग्रेजी में प्रकाशित करायी, जिसका हिन्दी संस्करण अगले वर्ष 1948 में प्रकाशित हुआ। तब से वैशाली-महोत्सव महावीर के जन्म-दिवस, चैत सुदी तेरह को आयोजित होने लगा। उस वर्ष वह दिवस 21 अप्रैल 1948 था। इस महोत्सव की दूसरी विशेषता यह थी कि कलकत्ता, पटना, छपरा, बनारस और गुजरात के जैन धर्मावलंबी काफी संख्या में यहाँ पधारे। तीसरी और सबसे अहम् विशेषता यह थी कि इस वर्ष वैशाली-संघ द्वारा वैशाली-अभिनन्दन-ग्रन्थ का प्रकाशन किया गया। यह ग्रन्थ जगदीश चन्द्र माथुर और योगेन्द्र मिश्र द्वारा सम्पादित हुआ था। इस पुस्तक की भूमिका देशरत्न डा. राजेन्द्र प्रसाद ने लिखकर इसकी गरिमा बढ़ा दी थी। पुस्तक का मुद्रण बड़े ही कलात्मक तरीके से हुआ था। इस ग्रन्थ का स्वागत देश-विदेश की अनेक पत्र-पत्रिकाओं और शोध-पत्रिकाओं ने किया था। पूर्व में अभिनन्दन-ग्रन्थ प्रकाशन की परम्परा विशिष्ट व्यक्तियों के सम्मान के लिए थी। यह पहला अवसर था, जब किसी नगर विशेष के ध्वंसावशेष को नवजागृत करने के लिए ऐसे ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ था। चौथी विशेषता यह थी कि इस अवसर पर वैशाली-संघ ने न्यास का रूप लिया, जिसके एक आजीवन सदस्य डा. मिश्र भी बनाये गये।

डा. मिश्र का वैशाली से इतना लगाव हुआ कि वे ज्यादातर वैशाली पर ही पुस्तकों के प्रणयन में लग गये। प्राचीन वैशाली के इतिहास, उसकी महान् विभूतियों, उसकी सांस्कृतिक और सामाजिक विशेषताओं और धर्मिक प्रवृत्तियों पर एक संक्षिप्त किन्तु प्रामाणिक पुस्तक की आवश्यकता थी। अब वे पटना कालेज में स्थापित हो चुके थे। अध्ययन की सुविधा अधिक थी। इसलिए उन्होंने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैशाली की सिलसिलेवार गाथा वैशाली की झांकी नामक पुस्तक में पिरो दी। इस पुस्तक में प्राचीन बौद्ध, जैन एवं ब्राह्मण ग्रन्थों से वैशाली-सम्बन्धी सामग्री अत्यन्त सुव्यवस्थित रूप में प्रस्तुत की गयी है। इस पुस्तक की भूमिका में जगदीश चन्द्र माथुर ने लिखा है-'मिश्रजी ने भाषा सुबोध रखी है, कथा प्रारंभ से अन्त तक रोचक और सुपाठ्य है। ग्रन्थ का कोई भी अंश ऐतिहासिक तथ्यों के पथ से भटका नहीं है। लेखक ने एक इतिहासज्ञ के उत्तरदायित्व को सचेत रहकर निभाया है, वरना तो वैशाली के उपासकों और उन्नायकों में से एक होने के नाते उनके लिए कल्पना की लगाम ढीली छोड़ देना स्वाभाविक होता'।

शिक्षक-जीवन में प्रगति के लिए उन्हें अपना शोध-प्रबन्ध तैयार करना था। वे विषय के चयन पर चिंतन कर रहे थे। तभी उनके गुरु प्रख्यात इतिहासकार डा. अनंत सदाशिव अल्तेकर ने कहा कि आप वैशाली पर ही काम क्यों नहीं करते। इसपर इन्होंने उनसे पूछा कि क्या यह संभव है? डा. अल्तेकर ने उत्साह के साथ कहा—"हाँ, आप यह कर सकते हैं"। तब उन्होंने वैशाली पर ही थीसिस लिखने का निश्चय किया। किन्तु उन्होंने सामग्री कम जुटने के भय से वैशाली के साथ-साथ विदेह को भी समेट लिया। शिक्षण के साथ-साथ रिसर्च में बाधा पहुँच रही थी। तब उन्होंने पूरे 18 महीने का अध्ययन-अवकाश लिया। उनकी निष्ठा इतनी थी कि उनका शोध-प्रबन्ध सात सौ से अधिक पृष्ठों का तैयार हुआ। 1957 में उन्हें इस कार्य के लिए पीएच.डी. की उपाधि मिली। आगे चलकर इसे उन्होंने ऐन अर्ली हिस्ट्री ऑफ वैशाली (1962) और हिस्ट्री आफ विदेह (1980) के रूप में प्रकाशित कराया। उनका यह ग्रन्थ वैशाली के इतिहास पर अत्यन्त प्रामाणिक और अलभ्य शोध सामग्री से भरपूर है। जैन मुनि विद्यानन्द जी की प्रेरणा से जैन समाज ने वैशाली पुस्तक के लिए 2 अक्टूबर 1973 को स्वर्णपदक, ढाई हजार रुपये, अंगवस्त्र और सम्मान-पत्र के साथ इनका नागरिक-अभिनन्दन मेरठ में कराया।

वैशाली-संघ के प्रयत्नों से 1950 से ही विधिवत् खुदाई शुरु थी। विपुल पुरातात्त्विक सामग्री प्राप्त हो चुकी थी। तब डा. योगेन्द्र मिश्र ने वैशाली का संक्षिप्त इतिहास और गाइड तैयार किया तथा डा. सीताराम राय ने वैशाली संग्रहालय की एक क्रमबद्ध और प्रामाणिक सूची तैयार की। दोनों को मिलाकर, गाइड टु वैशाली एण्ड दि वैशाली म्यूजियम (1964) नामक पुस्तक प्रकाशित की गयी। डा. मिश्र ने इसी वर्ष वैशाली-पथ-प्रदर्शिका नाम से एक गाइड हिन्दी में लिखा, जिसे संघ ने जनसाधारण का ध्यान रखकर प्रकाशित किया था। वैशाली

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उनके रोम-रोम में बस गयी थी। वे सदा वैशाली में ही जीना चाहते थे। इसी उद्देश्य से 1964 में इन्होंने पटना में नवनिर्मित अपने आवास का नाम 'वैशाली-भवन' रखा, जहाँ इतिहास, साहित्य, कला आदि के प्रेमी बराबर आया-जाया करते थे। अम्बपाली फिल्म के निर्माण के क्रम में फिल्म-निर्माता लेख टंडन ने भी वहाँ पधारने का कष्ट किया था। उनपर वैशाली-भवन की यात्रा का असर अत्यधिक पड़ा था। उन्होंने इसका उल्लेख फिल्मी पत्रिका माधुरी में अम्बपाली का विवरण प्रस्तुत करने के क्रम में किया है।

1972 में वैशाली जिला कायम हुआ। इसके उद्घाटन के समय महावीर प्रसाद शर्मा 'विप्लव' ने वैशाली-मण्डल-परिदर्शन नामक पुस्तक प्रकाशित की। इसकी भूमिका डा. मिश्र ने लिखी। वैशाली के ध्वस्त होने पर प्राचीन वैशाली का शासन कहाँ से चलता रहा, यह इतिहास में अज्ञात था। इसकी राजधानी की खोज का श्रेय डा. मिश्र को ही जाता है, जब उन्होंने 22 अप्रैल 1976 को घोषणा की कि चेचर वैशाली जिला के मुख्यालय हाजीपुर से 10-15 कि.मी. पूरब ही प्राचीन श्वेतपुर है और यही तीरभुक्ति प्रान्त की राजधानी थी। इसपर उन्होंने लेख और पुस्तिकाओं के अतिरिक्त श्वेतपुर की खोज और उसका इतिहास (1979) नामक पुस्तक भी लिख डाली। इस पुस्तक के लिए इन्हें राजभाषा विभाग, बिहार सरकार द्वारा काशी प्रसाद जायसवाल पुरस्कार से 1986 में सम्मानित किया गया।

वैशाली-संघ ने 1976 में जगदीश चन्द्र माथुर द्वारा रचित वैशाली-लीला नामक हिन्दी नाटक प्रकाशित किया। इसकी कथा-सामग्री डा. मिश्र की वैशाली की झांकी से ली गयी थी। लोकगीत पद्मश्री विंध्यवासिनी देवी ने लिखे थे। माथुर साहब के विदेश में होने के कारण इसे सम्पादित कर मुद्रित कराने का जिम्मा डा. मिश्र पर रहा।

1967 में ही वैशाली-दिग्दर्शन नामक पुस्तक की योजना बनी थी। इस पुस्तक के प्रकाशन का प्रस्ताव माथुर साहब के समक्ष डा. मिश्र ने रखा था। पुस्तक का नामकरण माथुर साहब का किया हुआ है। पुस्तक में वैशाली का इतिहास, वैशाली का पुरातत्त्व, वैशाली के इतिहास पर आधारित मंचनीय कोई नाटक, वैशाली-संघ और वैशाली-महोत्सव का इतिहास तथा वैशाली-सम्बन्धी चित्रावली तैयार करने का जिम्मा क्रमशः डा. योगेन्द्र मिश्र, डा. सीताराम राय, जगदीश चन्द्र माथुर, उपेन्द्र महारथी तथा जगन्नाथ प्रसाद साह को दिया गया था। 1967 तक वैशाली-महोत्सव का क्रमबद्ध इतिहास माथुर साहब ने तैयार कर दिया था। पुस्तक का प्रकाशन अर्थ-संकट और कतिपय अन्य कारणों से समय पर न हो सका। इस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बीच माथुर साहब का स्वर्गवास 14 मई 1978 को हो गया। डा. मिश्र को इस बात का मलाल ही रहा कि माथुर साहब अपनी प्यारी चीज मुद्रित रूप में देख न सके। माथुर साहब के निधन के कारण 1968 से 1980 तक वैशाली-महोत्सव का विवरण तैयार करने का दायित्व डा. मिश्र पर ही था। विलम्ब से ही सही, पर पुस्तक 1981 के महोत्सव के समय प्रकाशित हो गयी। इसी वर्ष रामयाद बहादुरपुरी ने वैशाली का इतिहास लिखा तो इस पुस्तक की भूमिका उन्होंने डा. मिश्र से लिखवायी।

वैशाली-अभिनन्दन-ग्रन्थ का प्रथम संस्करण अप्राप्य था। वैशाली का विकास बहुमुखी दिशाओं में हो चुका था। इस ग्रन्थ के पुनर्मुद्रण की आवश्यकता थी। इस कार्य के लिए श्री माथुर वर्ष 1955-56 से ही चेष्टा कर रहे थे। बिहार के राज्यपाल डाक्टर ए.आर. किदवई ने इस कार्य में गहन रुचि ली। पुस्तक अपने नये रूप में अधिक सामग्री के साथ 1985 में प्रकाशित हुई, जिसे प्राकृत, जैनशास्त्र एवं अहिंसा शोध-संस्थान, वैशाली ने प्रकाशित किया। पूर्व के महोत्सवों में वैशाली-महोत्सव के मंच पर किसी-न-किसी एक विद्वान् का भाषण भी होता था, जिसे मुद्रित कर वितरित किया जाता था। उन मुद्रित भाषणों को दूसरे संस्करण में सम्मिलित कर लिया गया है। इनमें उल्लेखनीय नाम हैं- महापंडित राहुल सांकृत्यायन, सुविमल चन्द्र सरकार, अनन्त सदाशिव अल्तेकर, कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी, सुखलालजी संघवी, हीरालाल जैन, राजेन्द्र प्रसाद, वासुदेव शरण अग्रवाल, सातकड़ि मुखर्जी, टी.एन. रामचन्द्रन आदि।

पत्र-पत्रिकाओं में वैशाली पर उनकी कितनी रचनाएँ छपीं, उन्हें यहाँ गिनाना संभव नहीं है। इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इस विषय पर उनकी पहली रचना 1945 में पटना से प्रकाशित बालक में 'मेरी वैशाली-यात्रा' थी। बाद के वर्षों में कुछ लोगों ने वैशाली की गरिमा धूमिल करने के उद्देश्य से महावीर की जन्म-भूमि दक्षिण बिहार में स्थापित करने का जबरन प्रयास किया। इस प्रयास का मुँहतोड़ जवाब उन्होंने अकाट्य प्रामाणिक तथ्यों के आधार पर पटना से प्रकाशित आत्मकथा पत्र के माध्यम से 1990 में दिया। तब से लगता है लोग चुप हो गये। ये वैशाली स्थित प्राकृत विद्यापीठ से भी अनेक रूपों में जुड़े रहे।

वे वैशाली का 484 ई.पू. के आगे का इतिहास लिखने में लगे थे। इसी क्रम में उनका लेख 'वैशाली के लिच्छवि गणराज्य का पुनरुत्थान' कई जगहों पर प्रकाशित हुआ। पर उनका यह संकल्प उनके कमजोर शरीर, गिरते स्वास्थ्य और वृद्धावस्था के कारण पूरा न हो सका। वैशाली भवन, पटना से 21 अप्रैल 1993

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की संध्या में उनकी शवयात्रा निकली और गंगा के किनारे उनका शरीर पंचतत्त्व में विलीन हो गया। उन्हें बिहार सरकार द्वारा 1981 में वरिष्ठ हिन्दी-सेवी-सम्मान दिया गया था। इतिहास की सेवा के लिए 1990 में बिहार पुराविद् परिषद् ने भी उन्हें सम्मानित किया था। 23 अप्रैल 1992 को बलवा-क्वारी (हाजीपुर की एक सांस्कृतिक संस्था द्वारा वीर कुँवर सिंह-विजयोत्सव के अवसर पर इनका नागरिक अभिनन्दन किया गया था। फरवरी 1995 में बिहार पुराविद परिषद् ने अपनी शोध-पत्रिका को प्रो. योगेन्द्र मिश्र स्मृति-अंक के रूप में प्रकाशित किया।

❑

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शास्त्रीय रागों के पुरस्कर्ता मथुरा प्रसाद रसिक

अश्विनी कुमार आलोक

शास्त्रीय धुनों में संगीत का शास्त्र विराजता है, स्वाभाविक है कि उनमें आदि प्रवर्त्तनों का महत्त्व होगा। किंतु ऐसा भी नहीं कि ये धुनें पूरी तरह से स्थिर अथवा अपरिवर्त्तनीय हों। इनमें क्षेत्रीय लोकभावों की प्रतिध्वनि जगाने के प्रयोग होते रहे हैं। इन प्रयोगों से ये शास्त्रीय धुनें न सिर्फ सामान्य श्रोताओं की रुचि में संयुक्त होती हैं, बल्कि नये रागों का भी जन्म होता है। ऐसे शास्त्रीय धुन - पुरस्कर्ताओं में कभी राष्ट्रीय स्तर पर मथुरा प्रसाद रसिक का नाम-यश फैला था। उनकी बनायी हुईं अनेक शास्त्रीय धुनें उनके जीवनकाल में संगीत पत्रिकाओं की शोभा बनीं। उन्होंने ऐसी धुनों की रचना एकाधिक रागों एवं तालों के संयोग से की थी। इन धुनों पर लिखी गयीं उनकी किताब की पांडुलिपि कोई मित्र ले गये थे। किंतु लौटाना आवश्यक नहीं समझा था। उनके बनाये हुए अनेक राग पत्र - पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए थे। यह संतोष का विषय है कि मथुरा प्रसाद रसिक के देहांत के दो दशक से अधिक का समय बीत जाने के बावजूद उनके संगीतज्ञ पुत्र शेषनाग रसिक ने पत्रिकाओं के उन अंकों को अपने पास सुरक्षित रखा है और इस विषय पर जानकारी प्राप्त करनेवालों को निकालकर दिखाते हैं। यद्यपि मथुरा प्रसाद रसिक की तरह उनके बेटों में संगीत साधना की उत्कट अभिलाषा नहीं है, तथापि छोटे पुत्र अपने परिवार के दायित्वों का ध्यान रखते हुए संगीत में रुचि रखते हैं। शेषनाग रसिक ने पिता मथुरा प्रसाद रसिक से संगीत की जो थोड़ी - बहुत शिक्षा ली थी, वह स्नातक की पढ़ाई पूरी करने के बाद। मथुरा प्रसाद रसिक के बड़े पुत्र हरिनारायण प्रसाद साह एएनडी कॉलेज, शाहपुर पटोरी में रसायन विज्ञान के प्राध्यापक रहे, अब स्थायी रूप से पटोरी ही में रहते हैं। शेषनाग रसिक और उनसे बड़े राजकुमार प्रसाद महनार (वैशाली) में आभूषणों की दो अलग-अलग दुकानें चलाते हैं।

मथुरा प्रसाद रसिक ने शास्त्रीय रागों में प्रयोगात्मक प्रवर्त्तनों से जो विशिष्टता समन्वित की, उसको शास्त्रीय संगीत के अनेक घरानों ने उपयोगी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मानकर स्वीकृति दी। संगीत के क्षेत्र में वे अनेक राज्यों में अपनी उपस्थिति दर्ज कराते रहे। यद्यपि इसका कोई पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता, परंतु कहा जाता है कि उन्होंने जो धुनें बनायीं, उनपर मोहम्मद रफी और लता मंगेशकर जैसे अनेक नामी फिल्म कलाकारों ने गाने गाये। फिल्म क्षेत्र में उनका नाम एमपी रसिक रूप से चर्चित हो रहा था, किंतु वे पारिवारिक उत्तरदायित्वों के कारण अधिक दिनों तक नहीं टिक पाये।

मथुरा प्रसाद रसिक के संगीत गुरु मुख्य रूप से बिलट सिंह थे। बिलट सिंह शास्त्रीय संगीत के ग्वालियर घराने से शिक्षित थे। अतः मथुरा प्रसाद रसिक के गायन पर ग्वालियर घराने का प्रभाव देखा गया। संगीत विशारद की परीक्षा 1944 ई में बिहार, बंगाल और उड़ीसा के छात्रों ने भाग लिया था। उस परीक्षा में उन्हें सर्वोच्च अंक मिले थे। उनका नाम मूलतः मथुरा प्रसाद साह था, संगीत के प्रति उनकी अभिरुचि और साधना का सम्मान करते हुए मुजफ्फरपुर के तत्कालीन जिलाधिकारी ने उन्हें 'रसिक' उपाधि दी थी। एक बार उन्हें बंगाल के तत्कालीन राज्यपाल द्वारा दार्जिलिंग में सम्मानित किया गया था।

उनकी मान्यता थी कि शास्त्रीय संगीत में जिन रागो का जो समय निर्धारित हो, उसी समय में उसे गाया जाना चाहिए। वे शास्त्रीय संगीत के निर्धारित समय को वैज्ञानिक आधार पर उपयुक्त और शुभ फलदायी समझते थे। उनके बनाये हुए अनेक राग हाथरस से प्रकाशित होनेवाली संगीत पत्रिका 'संगीत' और अलीगढ़ से प्रकाशित होनेवाली पत्रिका 'संगीत मार्त्तण्ड' में प्रकाशित हुए थे। इन पत्रिकाओं के विभिन्न अंकों में जो राग प्रकाशित हुए, उनमें 'रेवती कान्हड़ा' (कहत रसिक राज बोल गुनी कौन राम), बड़ा ख्याल एक ताल 'शिवरंजनी' (भूल न जाना बनवारी मुरारी), त्रिताल 'मालगुज्जी मध्य लय', 'बागेश्वरी' तीन ताल, मारव मध्य लय तीन ताल (प्रभु मोरे नाव उतारो पार), बरवा तीन ताल (पावस की यह साँझ रंगीली) आदि प्रमुख रहे।

मथुरा प्रसाद रसिक का अनेक शीर्षस्थ संगीतज्ञों से मित्रवत संबंध रहा। उन संगीतज्ञों में मुख्य रूप से रघु झा (पचगछिया), अल्लारक्खा खाँ (बनारस), कुंदन खाँ, रामदेव पाठक आदि के नाम शामिल हैं। इनके यहाँ संगीतज्ञों की श्रेष्ठ मंडली जुटती रही, इस मंडली में अहमद जान थिरकवा, पद्मश्री गोदई महाराज, रामचतुर मल्लिक, लच्छू महाराज, बालाभाव डमेड़कर आदि के नाम सम्मिलित रहे। उन्होंने अपनी परवर्ती पीढ़ी तैयार करने में भी पूरी निष्ठा दिखायी। गणपति सिंह, राधे सिंह, राजेन्द्र सिंह, अमृत दास, रामवरण दास (सभी वैशाली जिला), कैलाश सिंह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(समस्तीपुर) आदि उनके प्रमुख शिष्य रहे।

मथुरा प्रसाद रसिक जन्मजात संगीतज्ञ थे। उन्होंने अपने युवाकाल में संगीत साधना की जो गति अपनायी, उससे उनके पिता चरित्र साह और माता नुनू देवी को चिंता हो आयी थी। पिता आभूषणों की दुकान से जीवन यापन करते थे। लेकिन वे धार्मिक स्वभाव के थे, सालभर अलग अलग तीर्थों की यात्राओं पर जाते ही थे। पिता की कुल दस संतानें थीं। दो भाइयों एवं आठ बहनों में मथुरा प्रसाद रसिक तीसरे क्रम पर थे। दो बहनों के विवाह के बाद पिता का सारा दायित्व इन्हीं पर आ गया था। पिता भगवत् भजन में रमे रहते थे, उन्होंने ठाकुरबाड़ी की भी स्थापना की थी। प्रत्येक शाम डफली बजाकर भजन गाते थे। पिता का संगीत के प्रति अनुराग यहीं था। पिता के अतिरिक्त दूर-दूर तक परिवार में कोई संगीत से संबंधित नहीं था। न तो ससुराल सोनपुर (सारण) में कोई संगीत की ओर रुचि रखता था और न ही ननिहाल नाड़ी महथी (वैशाली) में। मथुरा प्रसाद रसिक के छोटे भाई सत्यनारायण प्रसाद दिवाकर भी संगीत साधना की ओर आकर्षित हो रहे थे। वे सितार बजाया करते थे। किंतु इंटरमीडिएट परीक्षा के दौरान महाविद्यालय के प्राचार्य से उनका संबंध बिगड़ गया था, वे न आगे की पढ़ाई जारी रख सके और न संगीत सीख सके। मथुरा प्रसाद रसिक ने मैट्रिक के बाद पढ़ाई जारी नहीं रखी। संगीत से विशारद हुए और पिता की इच्छा के अनुरूप व्यवसाय संभालने लगे। उन्होंने पारिवारिक दायित्वों की पूर्ति करने के लिए अपनी सांगीतिक इच्छाओं की बलि दे दी।

मथुरा प्रसाद रसिक का पैतृक परिवार मध्यम वर्गीय रहा। उनका जन्म 1922 ई को वैशाली जिले के महनार में हुआ था। वे आजीवन संगीत साधना में लगे रहे। संगीत की सैद्धांतिक और व्यावहारिक स्थापनाओं के लिए समर्पित रहे। सावन माह में प्रति वर्ष संगीत के कार्यक्रम तो करवाते ही थे, जब तक जीवित रहे इस प्रकार के कार्यक्रमों के अवसर बनाते रहे। उनका निधन 10 जनवरी 2000 ई को हो गया। वैशाली जिले के श्रेष्ठ संगीतज्ञों में प्रतिष्ठित मथुरा प्रसाद रसिक की ख्याति पूरे देश में रही।

❑

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रखर नेत्री का. सुधा बिंदु मित्रा

सुधांशु कुमार चक्रवर्ती

कामरेड सुधा बिंदु मित्रा का जन्म 1ली नवंबर 1923 को वैशाली (तब मुजफ्फरपुर) जिला मुख्यालय हाजीपुर के समीपवर्ती ग्राम दिग्घी में हुआ था। वह समय था अंग्रेजों की बर्बर हुकूमत का। समाज तमाम तरह की कुप्रथाओं एवं अंधविश्वासों में जकड़ा हुआ था। पिता हंसराज सिंह आर्य समाज के प्रवक्ता थे, जबकि माँ विदुषी देवी आजादी की लड़ाई में खुलकर भाग लेतीं थी। हंसराजजी बाहरी आडम्बर, अन्धविश्वास और सामंतवाद के सख्त विरोधी थे, जबकि चाचा जमींदारों के शोषण के विरुद्ध संघर्ष में सक्रिय थे। महिला मुक्ति संग्राम की नेत्री सुधा बिंदु मित्रा ने स्त्री-शिक्षा और स्त्री-पुरुष समानता के लिए अपने परिवार से प्रेरणा ग्रहण की थी।

सुधाजी के दो भाई और पाँच बहनें थीं। परिवार में शिक्षा का संस्कार था। उन्होंने हिंदी के अतिरिक्त संस्कृत और बांग्ला भाषा का भी अध्ययन किया था। शास्त्रीय गीत-संगीत में भी इनकी गहरी रुचि थी। उनका विवाह 1946 में कबीरपंथी परिवार के डा. रामबहादुर मित्रा से हुआ। मित्राजी एक होमियोपैथी चिकित्सक थे तथा वामपंथी विचारधारा के सक्रिय नेता थे। उनका वैवाहिक जीवन सफल नहीं रह सका। उनकी एक ही पुत्री थीं, जिसके विवाह के बाद से सुधाजीने अपना सारा जीवन बेटी-दामाद और उनके परिवार के साथ ही बिताया।

राजनीति तो जैसे उनके खून में थी। सन् 1949 में वे कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्य बनी। पार्टी में विभाजन के बाद वे सी.पी.आई.एम. में आ गईं। 1984 से आजीवन वे सी.पी.आई.एम. की राज्य कमिटी, बिहार की सदस्या रहीं। सन 1962 से 1974 तक लगातार हाजीपुर नगर पालिका में वार्ड कमिशनर बनी रहीं। भारत स्काउट एवं गाइड की जिला कमिटी में उन्होंने 1954 से 1978 तक अपनी सेवाएँ दीं। 1963 में सरकारी डाक्टरों की निजी प्रैक्टिस के विरोध में उन्होंने पटना मेडिकल कालेज के गेट पर 13 दिनों तक भूख हड़ताल की, जिसकी वजह से उन्हें गिरफ्तार होना पड़ा। 3 महीने 15 दिन उन्होंने बांकीपुर जेल में बिताये। सन 1977

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में बिहार राज्य जनवादी महिला समिति की वे उपाध्यक्ष बनीं। 1980 में 'एडवा' बिहार की संयोजक बनकर राज्य में महिलाओं के रोज-बरोज के सवाल, कार्य-स्थलों पर उनके शोषण, न्यूनतम मजदूरी, भ्रष्टाचार आदि के खिलाफ संघर्ष को नेतृत्व दिया। सन 1981 से 1998 तक वे जनवादी महिला समिति के राज्य सचिव के पद पर कार्यरत रहीं। 1998 में वे जनवादी महिला राज्य समिति की राज्याध्यक्ष चुनी गईं जहाँ वे जिंदगी की अंतिम साँस, 2016 तक बनीं रहीं। 1981 से लेकर 2007 तक वे एडवा की केन्द्रीय कमिटी की भी सदस्य रहीं। सन 1983 में कांग्रेस सरकार की जनविरोधी नीतियों के विरुद्ध संघर्ष में गिरफ्तार होकर 35 दिनों तक जेल में रहीं।

सुधा बिंदु मित्रा अत्यंत निर्भीक महिला थीं। सन 2002 में उन्होंने हाजीपुर रामचौड़ा की एक प्रताड़ित महिला को उनके ससुराल वालों से मुक्ति तो दिलाई ही, ससुराल वालों से जेल की चक्की भी पिसवाई। जब बाबरी मस्जिद गिराई गई, उस समय देश के अनेक हिस्सों में दंगे भड़क उठे थे। ऐसे विकट समय में सुधाजी बिहार के विभिन्न भागों में घूम-घूमकर सद्भावना एवं सांप्रदायिक एकता के लिए काम करती रहीं। स्त्री-शिक्षा पर उनका विशेष बल था। उनका कहना था कि जबतक महिलाएँ शिक्षित नहीं होंगी, तबतक अपने अधिकारों से कैसे परिचित होंगीं? उन्होंने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए 'आंगन पुस्तकालय' का प्रचलन बढ़ाया। उनके इस प्रयास का विस्तार अविभाजित बिहार के अनेक जिलों - वैशाली, बेगुसराय, खगड़िया, गया, आरा, बक्सर, मधेपुरा, सहरसा, धनबाद, रांची आदि के सैकड़ों गाँवों की महिलाओं तक पहुँचा।

हाजीपुर के गाँधी आश्रम में उन्होंने अपनी निजी जमीन दान देकर उस पर एक विद्यालय बनवाया था, जो आज राजकीय मध्य विद्यालय, अनवरपुर (गाँधी आश्रम) के नाम से जाना जाता है। वह चाहे राजपत्रित या अराजपत्रित कर्मचारियों का संघर्ष हो, आंगनबाड़ी सेविकाओं की समस्या हो अथवा सरकारी अस्पतालों की नर्सों का संघर्ष, वे हमेशा उनके कंधों से कंधा मिलाकर साथ देती रहीं।

सुधाजी विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में आलेख और कहानियाँ लिखा करती थीं। पुरुष वर्ग द्वारा मनोवैज्ञानिक ढंग से उपभोक्तावादी संस्कृति में स्त्री को भोग्या वस्तु समझा जाता है। वे लगातार इसके विरुद्ध लिखतीं और बोलती रहीं। स्वार्थपरता, अवसरवाद, भोगवाद, बाजारवाद के युग में महिलाओं के बीच जनवादी सोच रखनेवाली सशक्त हस्ताक्षर सुधाबिंदु मित्रा का 14 मार्च 2016 को निधन हो गया।

❑

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी बालेश्वर प्रसाद सिंह

डॉ. व्रजकुमार पांडेय

किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में लिखना, जानना, कुछ कठिन समस्या है जिसके जीवन के विविध पक्ष और व्यक्तित्व के विविध आयाम होते हैं। कुछ ऐसे होते हैं जो ऐसे व्यक्ति के दैनिक जीवन से जानकारी रखते हैं, कुछ ऐसे होते हैं जो उनकी पढ़ाई-लिखाई के बारे में विशेष जानकारी रखते हैं, कुछ ऐसे होते हैं जो वैसे व्यक्ति के उस पक्ष को जानते हैं, जिसका संबंध उसके पेशे से होता है - जो अपने पेशे की बारीकियों को समझता है।

ऐसा आदमी आम आदमी से भिन्न होता है। ऐसे व्यक्ति के बारे में जानने के लिए जरूरी होता है कि उस इतिहास को जाना जाए जिस काल खण्ड में वह पैदा हुआ था। उस समय की राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियाँ कैसी थीं। ऐसे व्यक्ति के सर्वांग को जानना आसान नहीं होता है - फिर भी समाज के लोग उसके सर्वांग को जान कर ही उसे प्रतिष्ठा देते हैं।

इस पृष्ठभूमि में 1963 से 1983 के बीच मेरा एक ऐसे शख्स से सम्पर्क हुआ, जो उदार, प्रगतिशील और लोकप्रिय व्यक्तित्व के स्वामी थे। उनका नाम बालेश्वर प्रसाद सिंह था। वे पेशे से वकील थे। उन्होंने कम दिनों में ही अपने पेशे में महारत हासिल कर ली थी। हाजीपुर के बौद्धिक जगत में उनकी शोहरत थी। बालेश्वर बाबू चर्चित और ख्याति प्राप्त वकील के रूप में प्रतिष्ठित थे। मैंने पटना विश्वविद्यालय में बी.ए. के साथ लॉ में भी नाम लिखवाया था। लॉ कॉलेज के कैंटीन में एक साथी ने पूछा - पांडेय, लॉ क्यों पढ़ रहे हो ? क्या वकालत करेंगे? मैंने कोई जबाव नहीं दिया। फिर भी वह मुझे सलाह देने से बाज नहीं आया - 'यदि वकालत करनी है तो तीन चीजें जरूरी है। पहला परिवार में कोई वकील हो या रहा हो। दूसरा कम से कम दस हजार रूपये की कानून की किताबें हों और तीसरा कम-से-कम 5-7 वर्ष तक खाने-पीने का जोगाड़ हो'। हाजीपुर में बालेश्वर बाबू की कम दिनों में वकालत की चमक सुनकर मुझे लॉ कॉलेज कैंटीन की वे बातें याद आयीं जो हमारे साथी ने कही थी। एक बार उनसे अपने साथी की टिप्पणी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की चर्चा करते हुए मैंने उनकी सफलता का राज पूछा तो उन्होंने बड़े विश्वासपूर्वक मुझसे कहा - पांडेजी, आई एम अ लॉयर बाई च्वायस!

बालेश्वर बाबू का जन्म वैशाली (तत्कालीन मुजफ्फरपुर) जिलान्तर्गत पातेपुर प्रखंड के तिसिऔता ग्राम में 27 मार्च 1928 को एक अत्यंत ही साधारण किसान परिवार में हुआ था। इनके पिता स्व. विशेश्वर प्रसाद सिंह तथा माता स्व. राम ज्योति देवी का देहांत तभी हो गया था जब बालेश्वर बाबू छात्र-जीवन में थे। माता-पिता के प्रति वे अत्यंत ही श्रद्धावान थे। हाजीपुर में जब उन्होंने अपना भव्य भवन बनवाया तो उसका नाम अपनी माता के नाम पर ज्योति भवन रखा। गाँव में प्राथमिक शिक्षण के बाद उन्होंने पहले जन्दाहा तथा बाद में अपने ननिहाल में रहकर मैट्रिक की परीक्षा पास की। घर की आर्थिक स्थिति अत्यंत सामान्य होने की वजह से उनके पिता नहीं चाहते थे कि वे आगे पढ़ाई जारी रखें। लेकिन जिद करके उन्होंने अपना नामांकन एल.एस. कालेज, मुजफ्फरपुर में कराया। इंटर करने के साथ ही 1948 में उनका विवाह मुजफ्फरपुर जिला के ग्राम रेपुरा में राजवती देवी से हुआ। बी.ए. पास करने के बाद तो उनपर अर्थोपार्जन का दबाव इतना बढ़ा कि वे कुछ दिनों के लिए पूसा के पास एक खानगी स्कूल में मास्टरी करने लगे। वकालत के प्रति उनका लगाव शुरू से ही था। यही कारण था कि कठिन अर्थाभाव में भी वे वकालत की पढ़ाई करने कलकत्ता (अब कोलकाता) चले गए। तब तीन वर्षीय एल.एल.बी. की पढ़ाई बिहार में नहीं होती थी। इस बीच उनके माता-पिता का देहांत हो चुका था। परिवार में कोई चाचा या भाई वगैरह तो थे नहीं, सो अपनी पत्नी एवं एकमात्र पुत्र के साथ कोलकाता में रहकर पढ़ाई करने लगे। वहाँ उन्होंने बच्चों को ट्यूसन पढ़ाकर गुजारा किया। उसी दौरान वे 'विश्वमित्र' तथा 'लोकमान्य' जैसे समाचार पत्रों से भी जुड़े। सन 1957 में उन्होंने एक मेधावी युवा अधिवक्ता के रूप में हाजीपुर के वकालत पेशे में प्रवेश किया। अपनी योग्यता, लगन एवं परिश्रम के बल पर कुछ ही दिनों में उन्होंने अपना एक विशेष स्थान बना लिया तथा सामान्य से उठकर 'मान्य' हो गए।

1964 के फरवरी महीने के किसी रविवार की बात है। मैं आर-एन-कॉलेज ज्वाइन करने के बाद चौहट्टा स्थित चौबेजी के मकान में रहता था। कमरा खुला था। मैं अखबार पढ़ रहा था। अचानक कॉलेज के कर्मचारी सदानन्द मिश्र के साथ प्रसिद्ध कम्युनिस्ट नेता किशोरी भाई आये। कुछ देर कुशल-क्षेम की बातें हुईं। फिर उन्होंने कहा -तैयार हो जाओ, मैं आज तुमको कुछ लोगों से मिलाना चाहता हूँ। मैं तैयार होकर उनके साथ पहले डॉ. दामोदर प्रसाद, फिर जंग बहादुर शर्मा वकील

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के पास गया। दोनों किशोरी भाई के अंतरंग और कम्युनिस्ट पार्टी के हमदर्द लोग थे। शर्माजी तो पार्टी मेम्बर रह चुके थे। किशोरी भाई ने दोनों से मिलाया, मेरे बारे में बताया और उनदोनों के बारे में विस्तृत जानकारी दी। इसके बाद वे गांधी आश्रम स्थित पार्टी कार्यालय के समीप रह रहे बालेश्वर बाबू वकील के पास ले गये। गौर वर्ण, सतत मुस्कानयुक्त दमकता चेहरा और छरहरे बदन वाले बालेश्वर बाबू से मिलकर प्रसन्नता हुई। किशोरी भाई ने परिचय कराया और बालेश्वर बाबू के बारे में विस्तृत जानकारी दी, मेरे बारे में कुछ बातें बालेश्वर बाबू को बतलायीं। मेरे छात्र जीवन की गतिविधियों के बारे में बालेश्वर बाबू को जानकारी दी। इस परिचय के बाद करीब 20 वर्षों तक मेरा उनके साथ जीवन्त लगाव रहा। हाजीपुर के सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक मंचों पर मैं उनके साथ किसी न किसी रूप में जुड़ा रहा।

अपने विद्यार्थी जीवन से ही बालेश्वर बाबू समाजवादी विचारधारा के पोषक थे। आगे चलकर उनका झुकाव साम्यवाद की ओर हो गया। वामपंथ की सभी धाराओं के कार्यकर्ता उनसे हर तरह का सहयोग पाते थे। जातिवाद तथा सम्प्रदायवाद का उन्होंने सदैव विरोध किया। हाजीपुर की साहित्यिक और सांस्कृतिक संस्था किरण मंडल जो हाजीपुर के बुद्धिजीवियों, कवियों, लेखकों, समाज के संभ्रान्त लोगों ने स्थापित की थी, जो आज 74 वर्षों से अधिक समय से अपनी जीवन्तता को प्रमाणित करती आ रही है। वह हाजीपुर की, एकमात्र ऐसी सांस्कृतिक संस्था थी, जिसमें पूरे वैशाली जनपद के लोग बड़ी संख्या में उपस्थिति और भागीदारी देते थे। उसके साठ से सत्तर के दशक का गौरवशाली अध्याय बालेश्वर बाबू के सचिव काल का स्वर्णिम इतिहास रहा है। मृत्युपर्यंत वे इस संस्था के उपाध्यक्ष रहे। वे चर्चित सांस्कृतिक केंद्र वैशाली कला मंच के निर्माण काल से आजीवन प्रधान सचिव रहे।

वैशाली जिला इस्कस की स्थापना के समय से ही बालेश्वर बाबू इसके अध्यक्ष थे। इस संगठन में उनकी गहरी रुचि थी। इसके लिए इनका तन मन धन सब न्योछावर था।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद दुनिया के बुद्धिजीवियों, अधिवक्ताओं, रंगकर्मियों ने तीसरा विश्व युद्ध न हो इसके लिए विश्व शान्ति परिषद की स्थापना की। यह संगठन भारत में भी बना। यहाँ तक कि भारत के हर जिला में भी इसकी शाखा खुली। वैशाली पीछे कैसे रहता। बालेश्वर बाबू इस संगठन के भी कर्णधार बन कर उभरे। न इसके महासचिव के रूप में बल्कि महासचिव से अधिक इस संगठन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को प्राणवान बनाने में आजीवन जुटे रहे। इस संगठन के बैनर तले वैशाली में अन्तर्राष्ट्रीय फासीवाद विरोधी सम्मेलन हुआ, उस सम्मेलन को सफल बनाने में बालेश्वर बाबू ने अपनी क्षमता से बाहर जाकर काम किया। वैशाली जिला फासिस्ट विरोधी सम्मेलन के अवसर पर जो स्मारिका छपी थी, उसका सारा भार बालेश्वर बाबू ने अकेले ही उठाया था।

भारत के मुक्ति संघर्ष में जब अंग्रेज शासकों को लगा कि भारतीय बहुत दिनों तक उन्हें यहाँ रहने नहीं देंगे। उन्होंने बाँटो और शासन करो की नीति अपनायी। हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच दंगे भड़काने की साजिशें रची गईं। उन दंगों का तांता कभी टूटा ही नहीं। पाकिस्तान बनने और आजादी के 74 वर्ष बाद भी दंगों से देश मुक्त नहीं हुआ है। लेकिन, जहाँ तक लोगों की याददाश्त जाती है, हाजीपुर में कभी दंगा नहीं हुआ है। मुझे याद है 1967 में जब संविद की सरकार बनी थी, जिस सरकार में जनसंघ भी शामिल था। उस समय हाजीपुर सदर अस्पताल में एक मुसलमान डॉक्टर की पदस्थापना हुई थी। अस्पताल में किसी रोगी की अनदेखी का मामला उठाकर कुछ दक्षिण पंथी लोगों ने दंगा कराने की साजिश रची थी। यहाँ के प्रबुद्ध जनों को जब इसकी जानकारी हुई तो सभी पार्टियों, संगठनों, बुद्धिजीवियों और शिक्षकों की बैठक बुलायी गई। इस बैठक में शान्ति बहाल कराने के जो प्रयास किये गये उसमें किरण मंडल की अहम भूमिका थी। अध्यक्ष डॉ- दामोदर प्रसाद और महासचिव बालेश्वर प्र. सिंह की मुस्तैदी काम आयी। उस समय किशोरी प्रसन्न सिंह हाजीपुर के एम.एल.ए. थे। उन्होंने हफ्ते भर पूरे शहर में घूम घूम कर लोगों के बीच सौहार्द बना रखने की अपील की थी।

1977 में जब जनता पार्टी की सरकार बनी थी - उसके साथ ही राज्यों में चुनाव हुआ था। बिहार में विधानसभा चुनाव में जनता पार्टी की जीत हुई थी और कर्पूरी ठाकुर मुख्यमंत्री बने थे। इस सरकार ने बिहार के लिए आरक्षण का कानून पारित कराया था, जिसको लेकर बिहार की अगड़ी पिछड़ी जातियों में ऐसा तनाव पैदा हुआ कि लगता था लोग आपस में लड़ कर मर जायेंगे। दहशत और अराजकता का ऐसा आलम जैसा न कभी हुआ था और न किसी ने देखा था। इस जातीय तनाव तथा इसके वीभत्स रूप को देखकर सर्वाधिक चिन्तित दिखे डॉ. दामोदर प्रसाद और बालेश्वर प्रसाद सिंह। दोनों ने अपनी संस्था किरण मंडल की ओर से शहर के तमाम तबके, संगठन और प्रबुद्ध नागरिकों की बैठक बुलायी। इकट्ठा हुए लोगों ने अपनी-अपनी राय व्यक्त की और समाज में सौहार्द स्थापित करने की अपील की गई। यह कहा गया कि आरक्षण राजनीतिक विषय है - इसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राजनीतिक मंच पर हल किया जाना चाहिए। इस बैठक में एक अपील जारी की गई जिसे सम्पूर्ण शहर में बाँटा गया। यह आंदोलन 6 महीने से अधिक चला। लेकिन किरण मंडल की पहल में जातीय दंगे को शान्त करने में बालेश्वर बाबू की भूमिका सराहनीय रही।

बालेश्वर बाबू की लोकप्रियता और शालीनता सम्मोहनकारी थी। उनका मृदुल स्वभाव, सबके साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार और कठिनाइयों में दूसरों को मदद करने की तत्परता विरले ही किसी मनुष्य में देखने को मिलती है। क्रोध तो उन्हें छू भी नहीं गया था। मैंने महसूस किया था कि वे वैसी कोई महत्त्वाकांक्षा नहीं पालते थे जिसे साकार करना संभव न हो। वे अपने वकालत पेशे में दूसरों के लिए प्रेरणादायी भी थे और कइयों के लिए ईर्ष्या की वजह भी। 2 अप्रैल 1983 को उनका असमय अवसान हो गया। उनकी लोकप्रियता का सही प्रमाण तो उनकी शवयात्रा में दिखाई पड़ा, जब सम्पूर्ण हाजीपुर कौनहारा घाट पर उमड़ पड़ा था। हाजीपुर कचहरी से उनकी अर्थी को तत्कालीन जिला कलक्टर श्री मुख्तयार सिंह ने कंधा दिया था। जिला समाहर्ता एवं जिला जज के विशेष आदेश से उनके शोक में उस दिन कार्यालय बंद कर दिए गए। जिला के सर्वोच्च अधिकारीगण से लेकर नगर के प्रतिष्ठित नागरिक, साहित्यिक, प्राध्यापक, चिकित्सक, अधिवक्ता तथा भारी संख्या में जन साधारण उनकी शव यात्रा में शामिल हुए। उनकी मृत्यु के बारे में जहाँ जिस किसी ने सुना, वह दुःख के सागर में डूब गया। वे एक विरल व्यक्तित्व थे जिनकी कमी हाजीपुर को सदैव सालती रहेगी।

□

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रो. हरेन्द्र सिंह विप्लव

रामनरेश शर्मा

बहुआयामी व्यक्तित्व के स्वामी प्रो. हरेन्द्र सिंह विप्लव का जन्म 17 फरवरी 1929 को वैशाली (तब मुजफ्फरपुर) जिला के अंतर्गत ग्राम रघुनाथपुर सहथा में हुआ था। 1956 में उन्होंने लंगट सिंह महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर से हिंदी साहित्य में स्नातकोत्तर किया। वे एक समर्पित शिक्षाविद्, प्रतिभासंपन्न साहित्यकार एवं सहकारिता आन्दोलन के प्रखर नेता थे। उत्तर बिहार के बड़े भू-भाग में हजारों वर्षों से बोली जानेवाली भाषा 'बज्जिका' को पुनर्प्रतिष्ठित करनेवाले आन्दोलन के वे प्रणेता थे। बज्जिकांचल विकास पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री देवेन्द्र राकेश उन्हें 'जय बज्जिका के कृत पुरुष, लोक संवेदना के कर्णधार तथा जीवन चेतना के अमर गायक' के रूप में याद करते हैं।

विप्लवजी ने अपना सारा जीवन साहित्य और समाज को समर्पित किया हुआ था। उनके द्वारा स्थापित संस्थानों की सूची लम्बी है - लक्ष्मी नारायण उच्च विद्यालय, भगवानपुर मध्य विद्यालय, बांथू सरस्वती बाल विद्यापीठ, रघुनाथपुर सहथा लालगंज महाविद्यालय, लालगंज तथा लक्ष्मी नारायण महाविद्यालय, भगवानपुर उनकी अमर कृतियाँ हैं। लालगंज महाविद्यालय के तो वे संस्थापक प्राचार्य (1981-1985) रहे। जनवरी 1992 से अवकास प्राप्ति के काल तक लक्ष्मी नारायण महाविद्यालय में उन्होंने प्राचार्य का कार्य-भार संभाला। इसके अतिरिक्त वे लम्बी अवधि तक (1949-1977) सी.डी.सी.एम. यूनियन के जेनरल सेक्रेटरी तथा सहकारिता आन्दोलन के आजीवन सक्रिय कार्यकर्ता रहे।

लोक-जीवन को समर्पित विप्लवजी ने अपनी मातृभाषा की भी अथक सेवा की। आधुनिक बज्जिका के प्रथम महाकाव्य 'कच देवयानी' (1983) के वे प्रसिद्ध रचनाकार थे। इसके पूर्व 1980 में ही उन्होंने 'अखिल भारतीय बज्जिका साहित्य सम्मेलन' की स्थापना की। 12 अप्रैल 1981 को लालगंज महाविद्यालय के प्रांगण में आपने अखिल भारतीय प्रथम बज्जिका साहित्य सम्मेलन आयोजित किया, जिसके मंच पर तत्कालीन माननीय रेल मंत्री केदार पांडे एवं तत्कालीन कृषि मंत्री

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(बिहार सरकार) ललितेश्वर प्रसाद शाही की गरिमामयी उपस्थिति रही। उनके साहित्यिक योगदान की सूची भी लम्बी है। 'उलाड़ करके लदली जिनगी के गाड़ी' (गीत-नाटक), 'ई बिजुरिया न हय, कनखी चलावे बदरा' (गीत-संग्रह), 'भकुआ' (व्यंग्य-कविता संग्रह), 'बज्जिका लोक तरंग' (गीत-संग्रह), 'उलाड़ गाडी चलत हय अगारी' (नाटक) 'जय बज्जिका आन्दोलन क्यों?', 'भकुआ रे भकुआएले रहबे, जिनगी भर पछुआएले रहबे', 'मिथिला राज्य और भाषायी विस्तारवाद' आदि उनके निबंध तथा 'श्री जगन्नाथ प्रसाद साह : व्यक्तित्व और कृतित्व' (जीवनी) आदि उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

विप्लवजी की अमर रचना कच देवयानी को स्मरण करते हुए संस्कार भारती के प्रदेश अध्यक्ष डा. शिवदास पांडे ने अपने संदेश में कहा था कि 'विप्लवजी बज्जिका भाषा को भाषा-संसार में स्थापित करनेवाले वृहस्पति पुत्र कच से कहीं भी कम नहीं हैं'। विप्लवजी का जीवन बज्जिका के प्रति उनके समर्पण का नाम है। वैशाली की मिट्टी के इस महान साहित्यकार पर बज्जिकांचल को गर्व है।

❐

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बूबना परिवार

मनीष रंजन

उन्नीसवी सदी के उत्तरार्ध में राजस्थान के फतेहपुर शेखावाटी से चलकर यह व्यवसायी परिवार उत्तर भारत के विभिन्न प्रान्तों और नगरों में फैलने लगा था। इसी सिलसिले में सेवकरामजी बूबना के पुत्र गोकुलचंदजी बूबना का आगमन हाजीपुर में हुआ था। वे एक उद्यमी, साहसी और व्यवसाय में निपुण व्यक्ति तो थे ही, सामाजिक एवं धार्मिक कार्यों में अभिरुचि उनकी पारिवारिक परंपरा में शामिल थी। वह समय इस क्षेत्र के प्रशासनिक परिवर्तन का भी था। मुजफ्फरपुर जिला एवं हाजीपुर सब-डिवीजन आदि का गठन इसी काल-खंड में हुआ था, सो इस क्षेत्र में विकास की चहल-पहल तेज थी।

सन 1902 में गोकुलचंदजी के पुत्र मनोहरदासजी का जन्म हुआ था। 1901 के आसपास उन्होंने अपने व्यापार का विस्तार पटना के प्रसिद्ध सेठ जौहरीमल जिन्दाराम के साथ मिलकर किया। इनका विवाह धाया देवी से हुआ, जिनसे वक्त के साथ उन्हें सात पुत्र-रत्न प्राप्त हुए। 1. जयनारायण बूबना 2. हरनारायण बूबना 3. शिवनारायण बूबना 4. गुलाब राय 5. भीमराज बूबना 6. रामनिवास बूबना एवं 7. वैद्यनाथ बूबना। कालांतर में इन सभी भाइयों ने अपने व्यवसाय का विस्तार बिहार, यूपी, बंगाल तक किया। जयनारायण बूबना तथा हरनारायण बूबना ने अपना व्यावसायिक केंद्र पटना को बनाया जबकि गुलाब राय ने महनार-देसरी के इलाके को अपना कर्म क्षेत्र बनाया। शिवनारायण बूबना एवं वैद्यनाथ बूबना ने कलकत्ता और बनारस में अपना कारोबार फैलाया। भीमराज बूबना एवं रामनिवास बूबना का कार्यक्षेत्र हाजीपुर, लालगंज, तथा गुलाब राय के साथ मिलकर महनार, देसरी आदि रहा।

मनोहरदासजी ने 1934-35 के आसपास हाजीपुर में अपना पहला स्वतंत्र व्यापार जयनारायण हरनारायण के नाम से किरासन तेल डिपो और गल्ले का शुरू किया। बाद में भीमराज रामनिवास के नाम से कपड़े एवं चांदी का काम शुरू किया। इन दोनों व्यापारों में इन्होंने बहुत ही अच्छी सफलता प्राप्त की। बाद में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस फर्म का नाम बदलकर रामनिवास रामबल्लभ हो गया, जिसके अन्तर्गत पेट्रोलियम, किरासन तेल एवं गल्ले का व्यापार होता था और जिसकी शाखाएँ बेगुसराय, भगवानपुर, महनार एवं देसरी में हुआ करती थीं। रामबल्लभ बूबना रामनिवासजी के पुत्र थे। उस समय भीमराजजी बूबना की गिनती इस इलाके के अत्यंत प्रतिष्ठित व्यवसायियों में होती थी। उन्होंने जमीन का एक बड़ा सा प्लाट खरीद कर उस पर गौरक्षिणी की स्थापना की और आजीवन उसके फाउन्डर अध्यक्ष रहे। बाद में उनके पुत्र नरसिंह प्रसादजी बूबना उसकी देखभाल करते रहे। वह गौरक्षिणी आज भी मौजूद है। मनोहर मिल के नाम से इनका व्यवसाय पटोरी में भी चलता था, जिसमें सरसों तेल, तम्बाकू इत्यादि की प्रोसेसिंग होती थी। 1941 में शिक्षा के क्षेत्र में योगदान करते हुए गुलाब रायजी के पुत्र मिश्रीलालजी बूबना ने पटोरी में गुलाब राय बूबना हाई स्कूल की स्थापना की, जिसके वे संस्थापक सचिव रहे। बाद में रामनिवासजी बूबना के पुत्र रामबल्लभजी बूबना ने यह कार्यभार संभाला। यह स्कूल आज भी सरकारी नियंत्रण में चल रहा है। 2016 में इस स्कूल के 75 वर्ष पूरे होने पर स्वर्णजयंती समारोह का आयोजन किया गया था।

भीमराजजी ने बूबना धर्मशाला का निर्माण करवाया, जिसमें तब से अब तक मुफ्त चिकित्सा का आयुर्वेदिक दातव्य औषधालय चल रहा है। वे हाजीपुर नगरपालिका के अध्यक्ष भी रहे। बाद में उनके पुत्र नरसिंह प्रसादजी बूबना गौरक्षिणी तथा धर्मशाला की देखभाल लम्बे समय तक करते रहे और हाजीपुर नगरपालिका के अध्यक्ष भी रहे। नरसिंह प्रसादजी के पुत्र देवकीनंदन बूबना का साहित्य एवं संस्कृति से गहरा लगाव था। हाजीपुर की प्रतिष्ठित साहित्यिक सांस्कृतिक संस्था 'किरण मंडल' के वे सदैव संरक्षक रहे। संस्था के वृहत आयोजनों में बाहर से आनेवाले सम्मानित अतिथियों के आतिथ्य का भार वे सहर्ष उठा लेते थे। भीमराज जी बूबना के दूसरे पुत्र देवी प्रसाद जी बूबना ने कपड़ा, चांदी तथा अन्य अनेक व्यवसायों में सफलता पाई। देवी प्रसाद जी के चार पुत्रों में सिर्फ एक पुत्र नवल किशोर बूबना ने हाजीपुर में अपना कारोबार रखा। हाजीपुर का गणेश सिनेमा उन्हीं की कृति है। बहरहाल, संभवतः वे भी अब अपना कारोबार यहाँ से समेटने में लगे हैं। भीमराज जी के तीसरे पुत्र रामस्वरूपजी बूबना ने पटना में कपड़े का व्यापार किया। हाजीपुर के तत्कालीन एस.डी.ओ. जगदीश चन्द्र माथुर जब वैशाली के पुनरुद्धार में लगे थे तो रामस्वरूपजी ने तन मन धन से उनका सहयोग किया था। हाजीपुर में एक पुस्तकालय की भी उन्होंने स्थापना की।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रामस्वरूपजी के पुत्र सज्जनजी बूबना हुए जो दवा आदि के व्यापार में संलग्न है।

रामबल्लभजी बूबना ने हाजीपुर में अनेक उल्लेखनीय कार्य किये। नरसिंह प्रसादजी बूबना के बाद बहुत दिनों तक उन्होंने गौशाला का अध्यक्ष पद संभाला। वे हाजीपुर नगरपालिका के चेयरमैन रहे। हाजीपुर का पहला सिनेमा हॉल, नेशनल सिनेमा उन्ही की देन है। हाजीपुर में ग्लास फैक्ट्री, जिसमें लालटेन और लैम्प के शीशे तथा शीशे की रंग-बिरंगी चूड़ियाँ बनती थीं, निर्मित की। इन्होंने हाजीपुर में नाव (नौका) की फैक्ट्री भी लगाई थी, जहाँ निर्मित नावों का उपयोग द्वितीय विश्वयुद्ध के समय किया गया था। तत्कालीन एस.डी.ओ. एम. के. चटर्जी की प्रेरणा से इन्होंने शहर की मुख्य सड़क पर 26 कट्ठे जमीन दान देकर नगरवासियों के सार्वजनिक हित में चटर्जी पार्क का निर्माण करवाया। कालांतर में उसी परिसर के एक भूखंड पर प्रसिद्ध समाजसेवी रायबहादुर रामशंकर सिंह के नाम पर एक क्लब भी चला करता था। आज उसी परिसर में लड़कियों के लिए वैशाली महिला कॉलेज चलता है, जो बी.आर.अम्बेडकर बिहार विश्वविद्यालय की एक अंगीभूत इकाई है।

बूबना परिवार की व्यापारिक गतिविधियों ने हाजीपुर नगर के विकास में तो योगदान किया ही है, यहाँ के राजनीतिक, धार्मिक एवं सामाजिक कार्यों में भी बढ़ चढ़ कर भागीदारी की है। शहर के प्रमुख मंदिरों के पुनरुद्धार एवं देख-रेख में वे सदैव सहयोगी रहे हैं। अभी भी रामबल्लभजी बूबना के एकमात्र पुत्र श्री कृष्ण कुमार बूबना शहर के ऐतिहासिक पातालेश्वर मंदिर या एम. चौक स्थित सत्यनारायण मंदिर तथा अन्य धार्मिक स्थलों की देख-रेख में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। विकास की होड़ में हो रहे आधुनिक परिवर्तन के दौर में शहर को पहला 'सिनेकृष्णा मॉल' इन्ही की देन है। अत्यंत ही सहृदय कृष्ण कुमारजी बूबना शहर की तमाम साहित्यिक सांस्कृतिक गतिविधियों में तन-मन-धन से सहयोग करते रहे हैं। बढ़ती उम्र के साथ अब उनकी गतिविधियाँ थोड़ी शिथिल हो गई हैं, लेकिन उनके दोनों पुत्रों सर्वश्री नीरज बूबना एवं विशाल बूबना ने उनकी जिम्मेदारियाँ अच्छी तरह संभाल ली हैं। इनके कारोबार तो अब दिल्ली, मुंबई तक फैल चुके हैं, लेकिन हाजीपुर के कामकाज एवं सामाजिक जिम्मेवारियों को विशालजी बूबना बखूबी संभाल रहे हैं।

❑

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हिंदी के सुख्यात आलोचक नंदकिशोर नवल

पूर्वा भारद्वाज

लिखाई-पढ़ाई नवलजी के जीवन के केंद्र में शुरू से थी। बिहार के हाजीपुर (वैशाली जिला) की बगल में बसा उनका पैतृक गाँव चाँदपुरा बहुत बड़ा नहीं है। वहीं एक साधारण किसान परिवार में 2 सितंबर, 1937 (बृहस्पतिवार) को उनका जन्म हुआ। माँ का नाम सबुज परी और पिता का नाम बाबू राम परोहन सिंह। दस भाई-बहनों का परिवार। चार बहनें बड़ी थीं और दो छोटी। एक बड़े भाई थे और दो छोटे भाई। लेकिन बाकी चचेरे भाई-बहनों का जिक्र किए बिना नवलजी का परिवार पूरा नहीं होता। तब यह संयुक्त परिवार था, एक आँगन वाला और गुलजार। बाबू-ईआ, बड़का बाबू-बड़की चाची, मँझला काका-चाची और छोटका काका-कनिया का। इस परिवार के विध्वस्त होने का मलाल नवलजी की भीतरी चोट थी।

नवलजी और उनके बड़े-छोटे सभी भाई औपचारिक शिक्षा हासिल करनेवाली पहली पीढ़ी में थे। चाँदपुरा के सुंदर मिडिल स्कूल के बालवर्ग से लेकर पटना विश्वविद्यालय के एम. ए. तक एक-दो बार छोड़कर नवलजी हमेशा अव्वल स्थान पाते रहे। उनकी साहित्यिकता, क्रांतिकारिता, राजनीति प्रेम और बुद्धि की तीक्ष्णता के साथ स्वभाव के अक्खड़पने के बीज को खाद-पानी मिला गुरुजी यानी बाबू रामसोहाग सिंह से। पढ़ाई में सख्ती और नियमितता उन्होंने गुरुजी की तरह ही आजीवन बरती।

अपने मिडिल स्कूल के शिक्षक बाबू रामदयाल सिंह को नवलजी मास्टर साहब बुलाते थे और जीवन भर उनके ऋणी रहे। अनुपम स्नेह के लिए और एम. ए. की पढ़ाई, हॉस्टल की फीस से लेकर हर मोड़ पर आर्थिक मदद के लिए भी। एक बार नवलजी बीमार पड़े तो उनको रोजाना आधा किलो दूध पीने की सलाह मिली। अब वह कहाँ से आता! तब मास्टर साहब ने मेस के लिए सरकार से मिलनेवाले महीने के पंद्रह रुपए में से आधा देकर उनके लिए दूध की व्यवस्था की और खुद एक ही शाम मेस में खाने लगे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चाँदपुरा के बगल के गाँव दयालपुर के हाई स्कूल से नवलजी ने मैट्रिक किया। तब तक वे हाजीपुर की 'किरण मंडल' संस्था के साहित्यिक कार्यक्रमों में नियमित शामिल होने लगे थे। पटना और बाहर के रचनाकारों से उनकी भेंट-मुलाकात होने लगी थी। इन सब ने नवलजी को उड़ान भरने का सपना दिया और क्षमता भी दी। वे गाँव के नवयुवक पुस्तकालय में किताब-प्रेमी पाँच-सात युवकों की मंडली में 1951 में ही शामिल हो गए थे। शिक्षकों के मुँह से विद्यापति, तुलसीदास, बिहारी, अयोध्या सिंह 'हरिऔध', मैथिलीशरण गुप्त, रामधारी सिंह दिनकर आदि की रचनाओं से उनका परिचय हो ही चुका था। यही नहीं, पुस्तकालय ने हिंदी की छोटी-बड़ी अनेक पत्रिकाओं, किताबों और कपिलदेव नारायण सिंह 'सुहृद', श्यामनंदन किशोर जैसे रचनाकारों को भी नवलजी की दुनिया में प्रवेश दे दिया था।

कविता नवलजी छठी कक्षा में ही लिखने लगे थे। उनकी पहली कविता 'साथी, किस पर मैं अपना प्यार लुटाऊँ' 1951 में पटना के साप्ताहिक 'योगी' में छपी थी। इसी साल उन्होंने शरद पूर्णिमा को आयोजित होनेवाले किरण मण्डल के कौमुदी महोत्सव के मंच से अपनी कविता पढ़ी थी। उस कवि-सम्मेलन के अध्यक्ष थे पं. रामदयाल पांडे और कविता पढ़नेवालों में थे रामगोपाल शर्मा 'रुद्र', ब्रजकिशोर नारायण, बेधड़क बनारसी, श्यामनन्दन किशोर, महेंद्र शास्त्री आदि। जब महावीर प्रसाद शर्मा 'विप्लव' कवियों की सूची बना रहे थे तो नवलजी ने जाकर अपना नाम भी उसमें लिखवा दिया था। नवलजी के शब्दों में, "बिना किसी हिचक के उन्होंने मुझ कुल-गोत्रहीन बाल कवि का नाम लिख लिया।" इस छोटी-सी घटना ने नवलजी के काव्य को दिशा दे दी और एक तरह से जीवन को भी। तब तक वे अपना नवल उपनाम रख चुके थे और लोग बच्चे के कवि सूचक इस नाम का मजाक उड़ाते-उड़ाते स्वीकार भी करने लगे थे।

1954 में जब नवलजी नौवीं कक्षा में थे तो उनका पहला काव्य संग्रह 'मंजीर' पटने से छपा। यह शीर्षक आचार्य शिवपूजन सहाय का दिया हुआ था। किशोर वय की उन रूमानी कविताओं ने उस समय माखनलाल चतुर्वेदी, नागार्जुन, दिनकर जैसे वरिष्ठ रचनाकारों का भी ध्यान अपनी तरफ खींचा। धीरे धीरे नवलजी गद्य की तरफ मुड़े। स्कूल के दिनों में ही वे कविता के साथ आलोचनात्मक लेख लिखने की कोशिश करते थे। बाद में पटना विश्वविद्यालय में बी.ए.-एम.ए. की हिन्दी की पढ़ाई और वहाँ के प्रो. नलिनविलोचन शर्मा जैसे विद्वानों के कारण आलोचना के प्रति उनका झुकाव बढ़ता गया। उनका कहना था कि वे वस्तुतः अपने लिए, हिन्दी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के लेखकों और उनकी कृतियों को समझने के लिए आलोचना लिखते हैं। शुरुआती सालों में उन्होंने कुछेक कहानियाँ भी लिखी थीं। पटना के दैनिक 'आर्यावर्त' में उनकी 'बेनी चाचा' और जमालपुर से निकलनेवाले 'वीर बालक' में 'बैटरी शॉट' कहानी प्रकाशित हुई थी।

कविता से नवलजी ने मुँह नहीं मोड़ा, लेकिन वह अंतर्मुखी हो गये। जब तब वे लिखते रहे। प्रकृति और प्रेम के गीत गाते रहे, शब्द-क्रीड़ा करते रहे। एक तरह से आलोचना और कविता का भेद उनमें मिट गया था। काफी बाद में उनका एक कविता संग्रह 'कहाँ मिलेगी पीली चिड़िया' निकला। बालसखा सिद्धिनाथ मिश्र के साथ 'द्वाभा' नाम से उनकी कविताओं का संकलन 2010 में प्रकाशित हुआ। अपने जनपद वैशाली को लेकर उनका लगाव बरकरार रहा। वहाँ के तरुण और नवलजी के समकालीन कवियों का संकलन 'जनपद के विशिष्ट कवि' नाम से आया, जिसमें उनकी भी 10 कविताएँ शामिल थीं।

जब नवलजी बी. ए. में पढ़ रहे थे तभी रामगोपाल शर्मा 'रुद्र' की ज्येष्ठ पुत्री रागिनी शर्मा से उनका विवाह सम्पन्न हुआ। वे थे ग्रामीण परिवेश से आए प्रतिभाशाली युवा कवि और रागिनी थीं कत्थक नृत्यांगना, रेडियो पर कार्यक्रम देनेवाली, 'चुन्नू मुन्नू', 'विद्यार्थी', 'बालक' जैसी पत्रिकाओं में यदा कदा कविता-कहानी लिखनेवाली शहरी किशोरी। इनके विवाह में दूल्हे की अगवानी करनेवाले और उनको गोद में उठाकर जनवासा लानेवाले थे आचार्य शिवपूजन सहाय। और दूल्हे को जो सलामी मिली थी उससे उन्होंने अज्ञेय, गिरिजाकुमार माथुर और धर्मवीर भारती की तीन-चार कविता पुस्तकें खरीदी थीं।

नवलजी की एम.ए. की पढ़ाई साइनस की बीमारी की वजह से तीन साल बाधित हुई और 1962 की जगह 1965 में वे एम.ए.की परीक्षा दे पाए। उसमें पूरे विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान पर रहे। जल्दी ही वहाँ प्राध्यापक के रूप में उनकी नियुक्ति हो गई। अध्यापन में नवलजी को कविता-जैसा रस मिलता था। इसने उनको आलोचना के क्षेत्र में बाकायदा उतरने की सलाहियत भी दी। वे जिम्मेदार और लोकप्रिय शिक्षक थे। विद्यार्थियों में ज्ञान-पिपासा जगाते थे, उनके प्रति सजग रहते थे और उनके प्रति अपने स्नेह व लगाव को छिपाते नहीं थे। वे जितने अनुशासनप्रिय थे उतने ही सहृदय भी। पढ़ाते हुए ही उन्होंने आचार्य देवेंद्रनाथ के निर्देशन में 'निराला का काव्य-विकास' पर अपनी पीएच.डी.पूरी की। इस शोध ने आगे उनके आलोचनात्मक काम की नींव मजबूत की।

संपादन का काम नवलजी ने खूब किया। वह भी सिर्फ दिलचस्पी के चलते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं, बल्कि साहित्यिक दायित्व समझकर। 1968-69 में उन्होंने तीन मित्रों के साथ मिलकर 'ध्वजभंग' पत्रिका निकाली। इसके तीन अंक निकले जिन्होंने बड़े धारदार तरीके से तत्कालीन रचनाओं की समीक्षा की थी। इसकी योजना राजकमल चौधरी के साथ बनी थी। उनकी असमय मृत्यु हो गई और तब उनकी पहली पुण्यतिथि पर 'ध्वजभंग' का पहला अंक निकला। उसके बाद स्वतंत्र रूप से नवलजी ने 'सिर्फ' का संपादन किया जो घोषित रूप में 'युवा लेखन के लिए प्रतिबद्ध' था। 1970 के मार्च से 1971 के दिसंबर के बीच उसके कुल 6 अंक निकाले। अपने घर के खर्चे में कटौती करके, विज्ञापन जुटाकर, कर्ज लेकर, चंदा करके, मित्रों के सहयोग से।

अगली पत्रिका 'धरातल' में नवलजी सौजन्य संपादक थे और पैसों की व्यवस्था का जिम्मा था संपादक अयोध्यानाथ शांडिल्य के पुत्र गौतम प्रसाद सिंह का। नवलजी योजना बनाने, रचनाएँ चुनने, उनका संपादन करने, प्रूफ देखने, प्रेस में कंपोजीटर के पास बैठकर हिज्जे ठीक करवाने से लेकर छपने के बाद डाक से अंकों को भेजने तक सारा काम बड़ी चुस्ती से करते थे। 'धरातल' की प्रतिष्ठा यों ही नहीं थी। उसके 14-15 अंकों ने न केवल नए कवियों की एक पूरी खेप को उभारा, बल्कि वरिष्ठ लेखकों की रचनाओं को भी नई दृष्टि के साथ प्रस्तुत किया।

बिहार प्रगतिशील लेखक संघ की पत्रिका 'उत्तरशती' के संपादन मंडल के सदस्य भी थे नवलजी। इस सांगठनिक और साहित्यिक दायित्व का पूरा निर्वाह उन्होंने किया। बाद में भी कई पत्रिकाओं में उन्होंने प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से प्रेरक की भूमिका निभाई। डा. नामवर सिंह के संपादन में निकल रही 'आलोचना' पत्रिका के सह-संपादन का भार उन्होंने सहर्ष उठाया। 'आलोचना' के लगभग बीस अंकों को उन्होंने सँवारा। उन पर नवलजी की छाप को देखा जा सकता है। यह क्रम भंग हुआ एक अवांतर मतभेद से जो कि साहित्य से ही जुड़ा हुआ था। अंतिम पत्रिका जो उनके संपादन में निकली वह थी 'कसौटी' - 1999 से लेकर 2002 तक। घोषित योजनानुसार इसके 15 अंक निकले और उन्होंने साहित्य की दुनिया में छाई धुंध को छाँटने का अपना काम पूरा किया।

देखा जाए तो नवलजी के लिए कविता या आलोचना लिखने जैसा ही रचनात्मक काम था संपादन। तभी तो उनकी मौलिक कृतियों की संख्या 38 है तो संपादित कृतियाँ 30 हैं। नवलजी की संपादन कला के प्रमाणस्वरूप 1983 में छपी 'निराला रचनावली' को देखना चाहिए - प्रामाणिक और व्यवस्थित। इसके आठों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खंड उनकी मेहनत, निष्ठा, ईमानदारी और सूझ-बूझ के प्रमाण हैं। बहुत बाद में उन्होंने तरुण कुमार के साथ मिलकर 'दिनकर रचनावली' के आरंभिक पाँच काव्य खंडों का संपादन भी किया।

1980 में नवलजी के आलोचनात्मक लेखों का पहला संग्रह 'कविता की मुक्ति' छपी। 'हिन्दी आलोचना का इतिहास' 1981 में आया जिसकी तैयारी वे कई सालों से करते आ रहे थे। शृंखला के रूप में यह 'आलोचना' पत्रिका में छपा भी था। इसके पहले 'कल्पना', 'समीक्षा', 'ओर', आवेग', बातचीत' जैसी अनेक छोटी बड़ी पत्रिकाओं में उनके लेख छप चुके थे। लेखन के प्रति उनकी सावधानी और गंभीरता हमेशा बनी रही। छपने के लिए भेजी जा चुकी अपनी रचना में एक शब्द भी घटाना-बढ़ाना हो तो वे बाकायदा पत्र लिखते थे और यह सुनिश्चित करते थे कि रचना त्रुटिहीन छपे।

साहित्य किस तरह नवलजी के रोम रोम में था, यह देखना हो तां नवलजी के अनगिनत पत्रों को देखना चाहिए। उनके भाई भारत भारद्वाज (युगल किशोर सिन्हा) ने अपने नाम लिखे नवलजी के पत्रों का जो संकलन ('प्रिय भग्गन' नाम से) तैयार किया है उससे भी अंदाजा लगता है कि साहित्य वाकई उनके जीवन की धुरी है। उन्होंने जो कुछ लिखा उसे लोगों तक कायदे से पहुँचाना चाहते थे और पाठक की प्रतिक्रिया जानने को व्यग्र रहते थे। दूसरों के लिखे पर भी अपनी राय देने में वे देर नहीं करते थे। अनजान पाठक हो या लेखक, फौरन सबसे संपर्क करते थे। स्नेह और प्रशंसा के शब्द बरसाने में वे कृपण न थे, लेकिन उनके लिखे पोस्टकार्ड-अंतर्देशीय में सुझाव और नई जानकारी के साथ कठोर टिप्पणी व असहमति भी होती थी।

नवलजी की कसौटी बड़ी सख्त थी। रचना के लिए भी और व्यक्ति के लिए भी। वे खुद को भी कसौटी पर कसते चलते थे। उनको मालूम था कि गुस्सा, झल्लाहट, लचीलेपन की कमी जैसी मानवीय कमजोरियों से वे अछूते नहीं हैं। लेकिन पद-लिप्सा, धन-लिप्सा और यश-लिप्सा से दूर इस व्यक्ति ने अपने को साहित्य की भट्ठी में झोंक दिया था। उनको सम्मान या पुरस्कार की कोई चाह नहीं थी। जब बिहार सरकार का राजेंद्र प्रसाद शिखर सम्मान मिला या कुछेक और पुरस्कार मिले तो भी वे विशेष आह्लादित नहीं हुए। लिखाई-पढ़ाई के काम में कोई बाधा न पड़े, यह उनकी सबसे बड़ी चिंता थी। उनकी स्पष्टवादिता ऐसी कि किसी का भी दिल तोड़ दे। उन्होंने अपने प्रिय से प्रिय व्यक्ति से अपनी साहित्यिक असहमतियों को खुलकर जाहिर करने से कभी गुरेज नहीं किया। उसी तरह वे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विरोधी की अच्छाई को भी रेखांकित करने में हिचकिचाते नहीं थे। अपने से वय में कम लोगों से भी सीखने को मिले तो सीखते थे।

व्यक्तिगत जीवन और साहित्य दोनों जगह नवलजी राफ-साफ और बेलाग बोलते थे। यह उनकी खूबी थी तो सीमा भी। किसी से आहत हुए या उखड़ गए तो सालो साल अनबोला रहा। हाँ, पुनर्विचार करना, अपनी चूक को दुरुस्त करना और लगा तो आगे बढ़कर संवाद शुरू करना उनको दूसरों से अलग करता था। कूटनीति, पाखंड और आत्मश्लाघा दोष से वे सर्वथा मुक्त थे। उन्होंने कभी समझौता न किया हो, ऐसा नहीं था, मगर स्वाभिमान की कीमत पर कदापि नहीं।

काफी योजनाबद्ध तरीके से नवलजी लगातार लिखते रहे। महावीर प्रसाद द्विवेदी, निराला, मुक्तिबोध, मैथिलीशरण गुप्त, सूरदास, तुलसीदास, दिनकर, अज्ञेय आदि सब पर। उन्होंने नए से नए, छोटे से छोटे रचनाकार पर और जाने माने रचनाकार पर समान रूप से ध्यान दिया। 'रुद्र समग्र' में उन्होंने विस्तार से उत्तर छायायावाद काल पर लिखा जिसने खुद उनका भी कवि स्वभाव गढ़ा था। रामइकबाल सिंह 'राकेश', रामजीवन शर्मा 'जीवन' आदि का संकलन लेकर वे सामने आए और उनके काव्य-वैशिष्ट्य को रेखांकित किया। 'आधुनिक हिन्दी कविता का इतिहास' लिखा, 'हिन्दी कविताः अभी, बिल्कुल अभी' भी और 'कविता : पहचान का संकट' भी। 'मूरतें : माटी और सोने की' में उनके गाँव-घर और साहित्यिक दुनिया के संस्मरण दर्ज हैं। दूधनाथ सिंह ने एक बार उन्हें लेखन के बारे में कहा था, "नवल, यह 'ड्रग' है।" और यह नवलजी के लिए सौ फीसदी सही था। एक तरफ उनके लिए जीवनदायिनी शक्ति और दूसरी तरफ दिन-दुनिया से बेखबर कर देने वाला 'ड्रग'।

नवलजी ने खूब धुन कर काम किया। नामवरजी ने उनको ठीक ही कामवर कहा था। इधर वे थकने लगे थे। अपनी एक-दो किताबों में उन्होंने घोषणा भी कर दी कि यह उनकी अंतिम किताब होगी। मगर फिर कोई नई योजना उनके सामने आ खड़ी होती और वे नए सिरे से उसमें भिड़ जाते थे। उनकी नई किताब आई भी और उन्होंने खुद उसका अंतिम प्रूफ भी देखा। लंबा लंबा लिखते थे और उसके साथ दसों उद्धरण भी देते चलते थे, सो बहुत पहले से वे डिक्टेशन देने लगे थे। पहले पत्नी, बेटा-बेटी और बाद में उनके कई प्रिय विद्यार्थी यह काम करने लगे थे।

पढ़ाकू भी खूब थे नवलजी। तब भी उनको अफसोस था कि जितना वे पढ़ना चाहते हैं उतना पढ़ नहीं पाते और लिखने की योजना को केंद्र में रखकर ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अधिकतर पढ़ने लगे हैं। उम्र के साथ उनकी रफ्तार भले थोड़ी धीमी हुई, पर सक्रियता में कोई कमी नहीं आई। वे दरयाफ्त करते रहते थे कि इन दिनों कौन क्या लिख रहा है। उनकी मेज पर नई किताबों के साथ पत्र-पत्रिकाओं के ताजा अंक भी हमेशा रहते थे। इधर वे दुबारा पंचतंत्र वगैरह पढ़ रहे थे।

ऊर्जा, उत्साह और उद्यम के पुंज थे नवलजी। एक बार उनके श्रद्धेय डा. रामविलास शर्मा ने उन्हें फारसी सीखने की सलाह दी। वे सीधे अपने सहकर्मी रह चुके अरबी-फारसी के विद्वान हसन साहब के यहाँ पहुँच गए। हसन साहब ने बतलाया कि फारसी सीखकर फारसी कविता का आस्वाद लेने के लिए आपको अच्छा-खासा समय देना होगा। नवलजी ने अपने वक्त का हिसाब लगाते हुए तय किया कि फिलहाल यह मुमकिन नहीं। उन्होंने डा. शर्मा को कारण बताते हुए लिख भी दिया। भाषा सीखने की उनकी ललक स्पृहणीय थी, लेकिन वे अपनी सीमा जानते थे। बचपन में उन्होंने थोड़ी उर्दू सीखी थी। संस्कृत इतनी जानते थे कि सिर्फ मल्लिनाथ की टीका के सहारे कालिदास के काव्य का आस्वाद लेते थे। बांग्ला, मैथिली, भोजपुरी जानते ही नहीं थे, मोटा मोटी उनके साहित्य के कलेवर से परिचित थे। बज्जिका तो उनकी मातृभाषा ही थी। कालिदास, विद्यापति और रवीन्द्रनाथ टैगोर पर किताब लिखने की उनकी इच्छा और योजना दोनों थी। लेकिन समय कम पड़ गया। अपने मन को उन्होंने यह कहकर समझाया कि इन विभूतियों पर लिखना अनधिकार चेष्टा होगा। जबकि यह सही नहीं था।

1970 के 27-28 दिसंबर को पटना में युवा लेखक सम्मेलन के यादगार आयोजन से नवलजी की आयोजकीय क्षमता भी सामने आई। उनके द्वारा आयोजित कार्यक्रमों का विस्तार काफी है। अपने गाँव में साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्था 'प्रेरणा मंडल' के गठन, तुलसी जयंती, गुलाल पर्व या कवि सम्मेलन के आयोजनों से लेकर पटना में साहित्यिक गोष्ठियों तक। कार्यक्रम के पहले और बाद तक वे सन्नद्ध रहते थे। कार्यक्रमों के कार्ड, बैनर, पोस्टर सब उनकी निगरानी में बनते थे - साफ, स्पष्ट और सुरुचिपूर्ण। वे यहाँ तक देखते थे कि पोडियम का कोण क्या हो, मेजपोश का किनारा तिरछा तो नहीं। करीने से काम करना और करवाना उनकी खासियत थी।

दूसरी संस्थाओं के कार्यक्रमों में भी नवलजी की सक्रिय भागीदारी रहती थी। भारतीय नाट्य संघ इप्टा के नाटकों के वे नियमित दर्शक थे। हिन्दी के साथ उर्दू, बांग्ला, मैथिली, भोजपुरी आदि के रचनाकारों और कलाकारों सबसे उनका संपर्क बना रहता था। एक दौर था जब बांग्ला नाटक और फिल्में भी खूब देखते थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उनकी दिलचस्पी का दायरा बड़ा था। कभी होमियोपैथी की किताब में सिर घुसा देते थे तो कभी हस्तरेखा विज्ञान की किताब में। वैसे अंधविश्वासी और कर्मकांडी नहीं थे।

सुदर्शन व्यक्तित्व था नवलजी का। लंबे, गोरे-चिट्टे। पहनने-ओढ़ने के शौकीन। भोजन के भी शौकीन। पर जो सेहत के लिए न जमे उसे पलटकर देखते नहीं थे। उनको अपने को हर कीमत पर ठीक रखना था ताकि पढ़ने-लिखने में कोई रुकावट न आए।

किताबें नवलजी की एकमात्र संपत्ति हैं। उनकी दसियों आलमारियाँ नई-पुरानी किताबों, पत्र-पत्रिकाओं से भरी हैं। ढेर सारी किताबों के पहले संस्करण उनके खजाने में हैं। जिल्द मढ़वाना, पत्रिकाओं के अंकों को बाइंड करवाना, किसी पन्ने का कोना तक न मुड़े यह देखना, दुर्लभ और अपने लिए जरूरी हिन्दी-अंग्रेजी किताबों के लिए जमीन-आसमान एक कर देना - उनकी किताबों से मोहब्बत के चलते ही था। पुस्तक मेलों में वे तरह तरह की किताबों की जानकारी से अपने को समृद्ध करते थे और लेखकों से मिलने-मिलाने का रस लेते थे।

नवलजी गाँव से निकलने के बाद पटना कॉलेज के हॉस्टल और फिर महेंद्रू मोहल्ले के आसपास किराये के डेरों में ही रहे। घर बनवाना उनकी प्राथमिकता में न था। जीवन के अंतिम दस सालों में नवलजी को उनके बेटा-बहू अपने मकान के करीब के अपार्टमेंट में ले आए, पटना के दूसरे किनारे पर। यहाँ वे जब चाहे अपने प्राणप्रिय पोते से मिल सकते थे। नई जगह और नई रुटीन में रमने में उनको वक्त नहीं लगा। यों भी हवाखोरी और पुरानी अड्डेबाजी छूटती जा रही थी और मिलना-जुलना घर पर ही अधिक होता था।

विचार और विचारधारा दोनों को लेकर नवलजी कट्टर थे, ऐसा कई बार उनके व्यवहार और लेखन दोनों से लगता है। लेकिन वे हमेशा सोचते रहे और अपने को लगातार बदलते रहे। अपने को वे प्रकृति से व्यवस्था विरोधी मानते थे। मिडिल स्कूल के दिनों में गुरुजी की सोहबत का असर था कि वे सोशलिस्ट पार्टी के सदस्य बन गए थे और अपनी साइकिल पर शान से उसका झंडा बाँधकर चलते थे। वे जब नक्सलवाद से प्रभावित हुए तो उन्होंने पार्टी को 'लेवी' दी, गुप्त बैठकों में हिस्सा लिया, उनका साहित्य वितरित किया, क्रांतिकारी मित्रों को अपने घर भी ठहराया। आगे चलकर मार्क्सवाद का विधिवत अध्ययन किया और फिर भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी - सीपीआई की सदस्यता ले ली। पार्टी के प्रचार से लेकर बूथ पर वोट डालने के लिए चुनाव पर्ची लिखने तक में जुटे रहते थे। साहित्य में भी पार्टी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से जुड़े प्रगतिशील लेखक संघ को उन्होंने काफी वक्त दिया।

नवलजी लंबे समय तक मार्क्सवादी आलोचक कहलाते रहे। जैसे-जैसे उनको मार्क्सवाद की सीमाओं का अहसास होता गया वे उस जकड़न से अपने को मुक्त करते चले गए। विचारधारा के आधार पर साहित्य में खंडन-मंडन को वे गलत कहने लगे और रचना को केंद्र में रखने लगे। रचना के भीतर की गिरह खोलने का काम ही आलोचना का उद्देश्य है, यह उनका मानना था। 'मुक्तिबोध : ज्ञान और संवेदना', 'निराला : कृति से साक्षात्कार', 'कामायनी-परिशीलन' जैसी उनकी बाद के दिनों की किताबों में इसको हम देख सकते हैं।

ठसक वाले आलोचक और थोड़े रुक्ष से व्यक्ति माने जानेवाले नंदकिशोर नवल थे नंदकिशोर ही। प्रेमी स्वभाव, कवि हृदय, संवेदनशील, उदारचेता और कोमल प्रकृति के। लोगों के बीच रहना उनको पसंद था। कालांतर में उनका घर खुद युवा रचनाकारों का छोटा-मोटा अड्डा हुआ करता था। उम्र के अंतर और विचारों की भिन्नता ने उनकी मित्रता के दायरे को कभी संकुचित नहीं किया।

12 मई, 2020 को नवलजी दुनिया से रुखसत हुए। अपने घर (बुद्ध कॉलोनी, पटना) में गिर जाना बहाना बना था। अस्पताल जाना पड़ा और वहीं स्थिति सँभलते-सँभलते भी बिगड़ गई थी। गंगा उस पार के चाँदपुरा गाँव से गंगा इस पार पटना तक की उनकी यात्रा पूरी हुई।

नवलजी हमेशा प्रसन्नचित्त और पूर्णतया संतुष्ट रहे अपने जीवन से। कवि निकोलाई आस्त्रवोव्स्की की पंक्ति है 'जीवन की जय हो', यही पंक्ति नवलजी की काव्य-दृष्टि और जीवन-दृष्टि को बतलाने के लिए भी उपयुक्त है। इसको ध्रुवक बनाकर 2009 में लिखी नवलजी की कविता की पंक्तियाँ हैं -

'जीवन की जय हो'
कभी-कभी मन में होता
सूख जाय जीवन-सोता
या फिर किसी महासागर में
जाकर लय हो !
'जीवन की जय हो'

□

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लेखक-परिचय

1. गंगोत्री प्रसाद सिंह—सामाजिक कार्यों में रुचि रखने वाले शीतल भकुरहर निवासी 70 वर्षीय श्री गंगोत्रीजी पेशे से हाजीपुर सिविल कोर्ट में अधिवक्ता हैं।
2. मनीष रंजन—दिल्ली में विज्ञापन की दुनिया में सक्रिय 45 वर्षीय मनीष लेखन के अतिरिक्त कॉर्पोरेट फिल्में बनाते हैं।
3. जगदीश प्रसाद श्रमिक—हसनपुर, महनार निवासी, स्वतन्त्रता सेनानी स्व. श्रमिकजी काँग्रेस के सक्रिय कार्यकर्ता थे। थियेटर में उनकी गहरी रुचि थी।
4. सुरेन्द्र मानपुरी—मानपुर (सोनपुर) निवासी 69 वर्षीय वरिष्ठ पत्रकार श्री मानपुरीजी गहरी साहित्यिक अभिरुचि रखते हैं तथा दीर्घ काल से हाजीपुर में श्रेष्ठ पत्रकारिता के लिए सुख्यात हैं।
5. भोलानाथ ठाकुर—सामाजिक कार्यों में रुचि रखनेवाले मनपुरा (वैशाली) निवासी 80 वर्षीय भोला बाबू रेल के राजभाषा अधीक्षक पद से सेवा निवृत हैं।
6. अनिल लोदीपुरी—सामाजिक कार्यकर्ता एवं वर्तमान में हिन्दी के प्राध्यापक श्री अनिल लोदीपुर (गोरौल) के निवासी हैं। हिन्दी साहित्य एवं शास्त्रीय संगीत में आपकी अभिरुचि है।
7. देवेंद्र गुप्त—लालगंज निवासी श्री देवेंद्र गुप्त वरिष्ठ पत्रकार हैं। वैशाली जनपद में निर्भीक तथा निष्पक्ष पत्रकारिता के लिए जाने जाते हैं।
8. जयप्रकाश—40 वर्षीय, दीघी (हाजीपुर) निवासी श्री जयप्रकाश मूलतः संस्कृतिकर्मी हैं। रंगमंच एवं नुक्कड़ नाटकों से इनका गहरा जुड़ाव है।
9. ऋचा कुमारी—महनार (वैशाली) निवासी 20 वर्षीय ऋचाजी ने अँग्रेजी साहित्य में शिक्षा प्राप्त की है तथा वर्तमान में आकाशवाणी पटना से जुड़ी हैं।
10. मोहन मंगलम—बाजीतपुर (वैशाली) निवासी मोहनजी जयपुर, राजस्थान में पत्रकारिता करते हैं। मूलतः संस्कृतिकर्मी हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

11. अश्विनी कुमार आलोक—महनार निवासी आलोकजी बिहार सरकार की सेवा में हैं। इन्होंने लोक साहित्य एवं कला पर कई पुस्तकें लिखी हैं। पत्रकारिताका भी लंबा अनुभव है।

12. व्रजकुमार पांडेय—86 वर्षीय पांडेयजी अप्रतिम विद्वान हैं। इन्होंने समाज, राजनीति एवं इतिहास से संबन्धित लगभग 80 पुस्तकें लिखीं हैं। प्रलेस, इफको एवं एप्सो जैसी संस्थाओं के राष्ट्रीय स्तर के नेता हैं।

13. जयश्री मिश्र—डा. जयश्री मिश्र पटना विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग के अध्यक्ष पद से सेवा निवृत हैं। राष्ट्रीय स्तर के इतिहासवेत्ताओं में आपकी गिनती है।

14. सुधांशु कुमार चक्रवर्ती—हाजीपुर निवासी सुधांशुजी सरकारी सेवा में हैं तथा मूलतः संस्कृतिकर्मी हैं। रंगमंच में गहरी दिलचस्पी रखते हैं।

15. रामनरेश शर्मा—पेशे से इंजीनियर (सेवामुक्त), साहित्यनुरागी श्री शर्माजी सरसइ (वैशाली) के निवासी हैं। इन दिनों बज्जिका आंदोलन के अगुआ हैं।

16. पूर्वा भारद्वाज—चांदपुरा (हाजीपुर) की रहनेवाली पूर्वाजी दिल्ली विश्वविद्यालय में पढ़ाती हैं और महिला मोर्चे पर अत्यंत सक्रिय हैं।

□□

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शैलेन्द्र राकेश

पेशाः चिकित्सा

रुचियां : साहित्य एवं ललित कलाएं।

संपादक : साहित्यिक पत्रिका 'किरण वार्ता'

संपादित पुस्तकें : कोरोना वाली दुनिया

शूल फूल

जनपक्ष का पुरुषत्व

पता : गांधी आश्रम, हाजीपुर-844104

मो० 9931612339, 7004565597

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

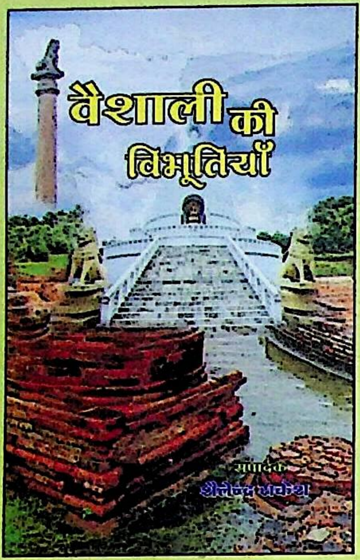

ISBN:978-93-92342-40-0
9 789392 342400

अभिधा प्रकाशन
E-mail : abhidhapublication@gmail.com

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.